राजस्थान अध्ययन

भाग–4

कक्षा–12

संयोजक एवं लेखक
डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल
से.नि. संयुक्त निदेशक,
कॉलेज शिक्षा, राजस्थान,
ई–2/211, चित्रकूट, जयपुर

लेखकगण

प्रो. एन. डी. माथुर
आर्थिक प्रशासन एवं वित्तीय प्रबन्ध विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय
जयपुर

डॉ. हरिमोहन सक्सेना
से.नि. संयुक्त निदेशक,
कॉलेज शिक्षा, राजस्थान,
बी–1, एम.बी.एस. नगर कोटा जंक्शन, कोटा

डॉ. पी.डी. गुर्जर
विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग,
राज. ला.व.शा. स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
कोटपूतली, जयपुर

डॉ. कुमारी कमलेश माथुर
विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग,
जे बी.शाह स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
झुंझुनू

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान, अजमेर

प्रकाशक
राजस्थान राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल, जयपुर

विषय सूची

1. राजस्थान के भौगोलिक प्रदेश	1 – 21
2. राजस्थान की मध्यकालीन प्रशासनिक व्यवस्था	22 – 31
3. भारतीय अर्थव्यवस्था में राजस्थान की भूमिका	32 – 52
4. आधुनिक राजस्थान में सामाजिक विकास	53 – 63
5. राजस्थान में नगरीय स्वशासन	64 – 79
6. राजस्थान में पर्यावरणीय चुनौतियां	80 – 99
7. सूचना का अधिकार, मानवाधिकार एवं बाल अधिकार संरक्षण	100 – 118
8. सांस्कृतिक राजस्थान	119 – 140
9. साहित्यिक राजस्थान	141 – 156

अध्याय – 1

राजस्थान के भौगोलिक प्रदेश

भौगोलिक प्रदेश से तात्पर्य उन विशिष्ट क्षेत्रों से हैं जिनका निर्धारण भौगोलिक तत्वों के आधार पर किया जाता है। ये वे प्रदेश होते हैं, जिनमें उच्चावच, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, मृदा में पर्याप्त एकरूपता दृष्टिगत होती है। इस प्रकार की समानता या एकरूपता के कारण यहाँ के आर्थिक एवं सामाजिक स्वरूप में भी सामान्यतया समानता देखी जाती है। यद्यपि प्रत्येक क्षेत्र अपने समीपस्थ भाग से भिन्न होता है, किन्तु उनमें एक आन्तरिक एकरूपता अन्तर्निहित होती है। यही एकरूपता प्रदेशों की पहचान होती है। प्रत्येक प्रदेश की भौगोलिक विशिष्टतायें उस प्रदेश के आर्थिक एवं सामाजिक स्वरूप को न केवल प्रभावित अपितु निर्धारित करती है। ये प्रदेश मात्र सैद्धान्तिक न होकर क्षेत्रीय विकास का आधार प्रस्तुत करते है तथा क्षेत्रीय नियोजन का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

राजस्थान एक ऐसा राज्य है जहाँ अत्यधिक भौगोलिक विविधतायें, यहाँ के न केवल विकास को प्रभावित करती है, अपितु सदियों से यहाँ के जन–जीवन में विविधता के साथ एकता का सूत्रपात करती रही है। राजस्थान के मध्य में अरावली पर्वत श्रेणियों का विस्तार है, तो पश्चिम में विशाल मरूप्रदेश है। पूर्वी राजस्थान का मैदानी क्षेत्र और दक्षिण–पूर्व का पठारी क्षेत्र अपनी विशिष्ट पहचान रखता है। अतः इन प्रदेशों का अध्ययन यहाँ के प्राकृतिक, आर्थिक एवं सामाजिक स्वरूप को समझने के लिये आवश्यक है, क्योंकि इसी के माध्यम से हम यहाँ की समृद्ध संस्कृति को समझ सकते है तथा विकास की योजनाओं को नई दिशा दे सकते हैं।

राजस्थान के भौगोलिक प्रदेशों का निर्धारण सर्वप्रथम प्रो. वी.सी.मिश्रा ने 'राजस्थान का भूगोल' पुस्तक में किया जिसका प्रकाशन 'नेशनल बुक ट्रस्ट' द्वारा 1968 में किया गया। उन्होंने राजस्थान को सात भौगोलिक प्रदेशों में विभक्त किया, जो निम्न तालिका में प्रदर्शित है–

तालिका 1.1 प्रो.वी.सी.मिश्रा द्वारा प्रस्तावित भौगोलिक प्रदेश

क्र. सं.	भौगोलिक प्रदेश	विशेषता	जिले
1	पश्चिमी शुष्क प्रदेश	शुष्क रेगिस्तानी मैदान, वार्षिक वर्षा 15 से 25 से.मी.	जैसेलमेर, बाड़मेर, द.पू. बीकानेर, पश्चिमी जौधपुर, द.प.चूरू तथा पश्चिमी नागौर
2	अर्द्ध–शुष्क प्रदेश	अरावली के पश्चिम का शुष्क प्रदेश, वार्षिक वर्षा 25	जालौर, पाली, नागौर, झुंझुनू, उ.पू. चूरू व द.पू. जौधपुर

		से 50 सेमी.	
3	नहरी क्षेत्र	सिंचित रेगिस्तानी मैदान, वार्षिक वर्षा 15 से 25 से.मी.	गंगानगर, पश्चिमी बीकानेर और उत्तरी जैसेलमेर
4	अरावली प्रदेश	अरावली की पहाड़ियाँ, वार्षिक वर्षा 30 से 60 सेमी.	उदयपुर, द.पू. पाली व पश्चिमी डूँगरपुर
5	पूर्वी कृषि – औद्योगिक प्रदेश	मैदानी व पठारी अर्द्ध शुष्क प्रदेश वार्षिक वर्षा 50 सेमी से अधिक	जयपुर, अजमेर, सवाई माधोपुर, भीलवाड़ा, बून्दी, अलवर, भरतपुर, धौलपुर और कोटा शहर
6.	दक्षिणी–पूर्वी कृषि प्रदेश	विन्ध्यन व लावा पठार, वर्षिक वर्षा 50 सेमी से अधिक	पूर्वी डूँगरपुर, बाँसवाड़ा, चित्तौड़गढ़, कोटा, झालावाड़
7	चम्बल बीहड़ प्रदेश	चम्बल के बीहड़, वार्षिक वर्षा 50 से.मी. से अधिक	सवाई माधोपुर और जोधपुर

इसी प्रकार प्रो.राम लोचन सिंह ने 1971 में भारत का प्रादेशीकरण करते हुए राजस्थान को दो वृहत प्रदेशों यथा राजस्थान और राजस्थान पठार में विभक्त कर इनके चार उप–प्रदेश और 12 लघु प्रदेशों में विभक्त कर उनका विवरण प्रस्तुत किया। एक अन्य विभाजन प्रो. तिवारी और सक्सेना ने 'राजस्थान का प्रादेशिक भूगोल' पुस्तक में 1994 में प्रस्तुत किया। इसमें राजस्थान के धरातल, जलवायु, नदी–बेसिन आदि को आधार बनाकर उन्हें प्रशासनिक सीमाओं के साथ समन्वित कर राजस्थान के प्रमुख, गौण, तृतीयक एवं सूक्ष्म प्रदेशों का निर्धारण किया।

उपर्युक्त प्रादेशिकरण की जटिलताओं में न जाकर हम यहाँ राजस्थान के सामान्य भौगोलिक प्रदेशों का विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं जो राज्य के भौगोलिक, आर्थिक एवं जनसांख्यकीय स्वरूप को तो स्पष्ट करते ही हैं साथ में विकास की आधारशिला भी हैं। सामान्यतया राजस्थान को चार भौगोलिक प्रदेशों में विभक्त किया जाता है जो निम्नलिखित है– (मानचित्र 1.1)

1. **मरूस्थलीय प्रदेश**
2. **अरावली पर्वतीय प्रदेश**
3. **मैदानी प्रदेश**
4. **दक्षिणी–पूर्वी पठारी प्रदेश (हाड़ौती प्रदेश)**

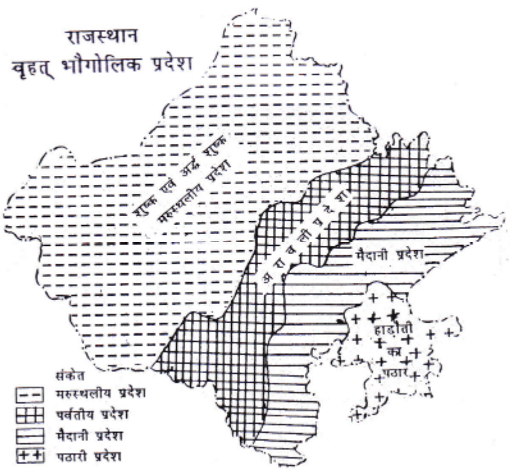

मानचित्र 1.1 राजस्थान के भौगोलिक प्रदेश

मरूस्थलीय प्रदेश

राजस्थान के पश्चिम में विस्तृत एवं विशाल मरूस्थल न केवल राज्य का अपितु सम्पूर्ण भारत का एक विशिष्ट भौगोलिक प्रदेश है जिसे भारत का विशाल मरूस्थल, अथवा **'थार का मरूस्थल'** के नाम से जाना जाता है। इस प्रदेश का विस्तार राज्य में 25^0 उत्तरी से 30^0 उत्तरी अक्षांश और $69^0 30^0$ पूर्वी से $70^0 45^0$ पूर्वी देशान्तर के मध्य है। अरावली पर्वत श्रृंखला के पश्चिम में यह प्रदेश 300 मि.मी. से कम वर्षा वाले क्षेत्र पर फैला बालू का विशाल क्षेत्र है। इसके अन्तर्गत राज्य के बाड़मेर, जोधपुर, जैसलमेर, बीकानेर, गंगानगर, हनुमानगढ़ जिले पूर्ण मरूस्थल तथा जालौर, पाली, नागौर चूरू, झुन्झुनूं, सीकर जिले अर्द्ध मरूस्थलीय है। प्राकृतिक एवं मानवीय विविधताओं के कारण इस प्रदेश को क्रमशः मरूस्थली, नहरी मरूस्थल, बागड़ प्रदेश आदि में विभक्त किया जाता है।

मरूस्थल का उद्‌भव

राजस्थान के मरूस्थल की उत्पत्ति के विषय में भूगर्भवेत्ताओं के मतो में भिन्नता है। कुछ विद्वान यह स्वीकार करते हें कि जहाँ आज मरूस्थल है वहाँ पूर्व में उपजाऊ वन आच्छादित आर्द्र प्रदेश था जो कालान्तर में भूगार्भिक परिवर्तनों से शुष्क मरू भूमि में परिवर्तित हो गया।

भूगर्भिक प्रमाण स्पष्ट दर्शाते हैं कि पर्मो–कार्बोनिफेरस काल में पश्चिमी राजस्थान पर विस्तृत समुद्र था। ज्यूरेसिक, क्रिटेशियस और इयोसीन भूगार्भिक युगों में यह क्षेत्र समुद्र के नीचे था और धीरे–धीरे यहाँ से समुद्र खिसकने लगा, तत्पश्चात् प्लीस्टोसीन काल में यहाँ मनुष्यों का प्रादुर्भाव हुआ, जो क्रमशः विस्तृत होता गया और मानवीय क्रिया–कलापों ने इसे मरूस्थलीय क्षेत्र बनाने में महत्ती भूमिका निभाई। फलस्वरूप ईसा पूर्व 4000 से 1000 वर्ष के मध्य इस क्षेत्र में पूर्ण

मरूस्थलीय दशाओं का विकास हो गया। यहाँ विद्यमान खारे पानी की झीलों को समुद्रों का अवशेष माना जाता है।

सर सिरिल फॉक्स के अनुसार, मरूस्थल का दक्षिणी–पश्चिमी एवं सिंध का निचली घाटी वाला भाग अपर टर्शियरी युग तक समुद्र के नीचे रहा। यह तथ्य यहाँ जाये जाने वाली चट्टानों में प्राप्त समुद्री जीवाश्म से स्पष्ट होता है।

बैलेण्डफोर्ड ने भी इसी प्रकार के विचार प्रस्तुत किये हैं। उनके अनुसार समुद्र के निरन्तर पीछे हटने के परिणामस्वरूप सिकुड़न–क्रिया से उत्थित समुद्र तली ने मरूस्थलीय क्षेत्र को जन्म दिया, जिसका प्रमाण इस क्षेत्र की लवणीय झीलें हैं तथा कच्छ का दलदली भाग भी उसी का अवशेष है।

एक अन्य विचार के अनुसार निरन्तर हवाओं के साथ होने वाला बालू प्रवाह भी इसका कारण माना जाता है। वास्तव में थार का मरूस्थल बालू का विशाल क्षेत्र है। यहाँ बालू का उद्गम एवं विस्तार के निम्न कारण है–

(1) चट्टानों के निरन्तर अपक्षरण के फलस्वरूप बालू का उद्भव हुआ, यह क्रिया हजारों वर्षों से अनवरत रूप से चल रही है और आज भी जारी है।

(2) वायु द्वारा उड़ाकर लाना अर्थात् वायूढ़ स्त्रोत, इसका एक प्रमुख कारण है। दक्षिणी–पश्चिमी मानसूनी हवाएँ विशेषतः कच्छ के रन से विशाल यात्रा में बालू उड़ा कर लाती है।

(3) ब्रूस–फूट के अनुसार मुहानों के प्राचीन तट वर्तमान भूगर्भिक काल में भी सिंधु घाटी और लूनी बेसिन के उत्तर–पूर्व में लम्बी दूरी तक विस्तृत थे।

राजस्थान के मरूस्थल के सम्बन्ध में यह सत्य है कि यहाँ पहले सरस्वती नदी का प्रवाह था तथा इसके तट पर अनेक अधिवास थे और यह क्षेत्र वनस्पति से युक्त था। कालान्तर में वर्षा की कमी, गर्मी तथा शुष्कता में वृद्धि और अनेक प्राकृतिक कारणों से यह क्षेत्र मरूभूमि में परिवर्तित होता गया। सरस्वती नदी सूखती गई और इसके साथ ही तटवर्ती अधिवास भी उजड़ते गये। विद्वानों के अनुसार वर्तमान में हनुमागढ़ जिले से गुजरने वाले घग्घर का तल वास्तव में सरस्वती का अवशेष है।

राजस्थान के 'थार मरूस्थल' के सम्बन्ध में यह भी माना जाता है कि इसकी वृद्धि के लिये मानवीय कारक भी उत्तरदायी है। इसमें प्रमुख है वनस्पति का काटना और अनियन्त्रित पशु चारण है। वनस्पति अपनी जड़ों के माध्यम से मिट्टी को संगठित रखती है और जैसे–जैसे वनस्पति कटती जाती है मृदा असंगठित हो रेत में बदल जाती है और हवा के साथ उड़ने लगती है। इसी प्रकार अनियन्त्रित पशु चारण से अर्थात् पशुओं के खुरों से मिट्टी कटती जाती है

और निरन्तर यह प्रक्रिया चलने से मिट्टी रेत में बदल जाती है। पशुचारण शुष्क प्रदेशों का प्रमुख उद्यम रहा है और आज भी है और यह मरूस्थलीकरण का एक कारण है।

प्राकृतिक स्वरूप

मरूस्थलीय प्रदेश राज्य का ही नहीं अपितु भारत का एक विशिष्ट प्राकृतिक प्रदेश है, जो यहाँ के उच्चावचीय स्वरूप, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, मृदा आदि की विशेषताओं से स्पष्ट परिलक्षित होती है।

धरातल अथवा उच्चावच की दृष्टि यह प्रदेश एक विशाल रेत का सागर है जहाँ दूर–दूर तक बालुका–स्तूप एवं रेत का सागर लहराता रहता है, यद्यपि कहीं–कहीं चट्टानी क्षेत्र भी दृष्टिगत होते हैं। अतः इस मरूस्थल को रेतीला मरूस्थल एवं पथरीला मरूस्थल दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। रेतीले मरूस्थल का विस्तार सम्पूर्ण क्षेत्र के लगभग 85 प्रतिशत क्षेत्र पर है। इस देश की विशिष्ट भू–आकृति बालुका–स्तूप (Sand-dunes) हैं जो विविध रूपों में विस्तृत है। यहाँ के बालुका स्तूपों में अर्द्ध चन्द्राकार (बरखान), अनुप्रस्थ एवं देशान्तरीय बालुका–स्तूप है। ये बालुका स्तूप अति छोटे से 100 से 200 मीटर की चौड़ाई और 10–20 मीटर से अधिकतम 60 मीटर की ऊँचाई तक देखें जा सकते हैं। ये बालुका स्तूप स्थिर न होकर स्थानान्तरित होते रहते है तथा इनके स्वरूप में भी परिवर्तन आता रहता है।

इसके विपरीत पथरीला मरूस्थल जैसलमेर, बीकानेर के उत्तरी भाग तथा जोधपुर की फलौदी तहसील के कुछ भागों में स्थित है। यहाँ बलुआ और चूने के पत्थर के शैल है, जिनका उपयोग स्थानीय इमारती पत्थर के रूप में किया जाता है।

मरूस्थलीय प्रदेश के उत्तरी भाग अर्थात् हनुमानगढ़–गंगानगर जिलों में स्थित घग्घर का मैदान एक विशिष्ट प्राकृतिक प्रदेश है। यह घग्घर नदी का तल है जिसे अब '**मृत नदी**' कहा जाता है किन्तु वर्षा काल में इसमें न केवल जल प्रवाहित होता है अपितु बाढ़ आ जाती है।

जलवायु की दृष्टि से यह प्रदेश उष्ण–मरूस्थलीय जलवायु वाला है जहाँ उच्चतम तापमान ग्रीष्म काल में तथा शीतकाल भी पर्याप्त ठण्डा होता है। दैनिक तापान्तर अधिक होने का कारण यहाँ विस्तृत रेत है जो शीघ्र गर्म और शीघ्र ठण्डी हो जाती हैं। यह प्रदेश भारत के उष्णतम प्रदेशों में से है। गर्मी में यहाँ अधिकांशतः 40^0 से.ग्रे. से अधिक तापमान होता है जो 50^0 से.ग्रे. तक पहुँच जाता है। जबकि शीत ऋतु में औसत तापमान 12^0 से.ग्रे. से 16^0 से.ग्रे. रहता है किन्तु चूरु, गंगानगर में यह 8 से 10^0 से.ग्रे. होता है जो कभी–कभी जमाव बिन्दु अर्थात् जीरो डिग्री से.ग्रे. तक पहुँच जाता है।

जुलाई से सितम्बर तक के महीने आर्द्र होते हैं जबकि सापेक्षित आर्द्रता 55 प्रतिशत से 70 प्रतिशत तक रहती है, मई–जून में यह मात्र 30 प्रतिशत रह जाती है। ग्रीष्म काल में धूल भरी आंधियाँ चलना यहाँ सामान्य है। इस प्रदेश में वर्षा का औसत बीकानेर में 30 सेमी, बाड़मेर

में 15 सेमी, जोधपुर में 35 सेमी. तथा जैसलमेर में 10 सेमी. रहता है। यह वर्षा जुलाई–सितम्बर के मध्य होती है। शीतकाल में पश्चिमी चक्रवातों से यहाँ कुछ वर्षा हो जाती है जिसे **'मावठ'** कहते हैं। कभी–कभी मरूस्थलीय प्रदेशों में पश्चिमी चक्रवातों से कुछ वर्षा होती है जिससे यहाँ तक कि बाढ़ भी आ जाती है।

वनस्पति – वनस्पति की दृष्टि से मरूस्थलीय वनस्पति ही यहाँ प्रधानतः होती है जो कम वर्षा और उच्च तापमान में अपना अस्तित्व बनाये रखने में समर्थ है। यहाँ छोटे पौधे, कंटीली झाड़ियों के अतिरिक्त बबूल, खेजड़ी, कीकर, नागफनी आदि पाई जाती है। यहाँ पाई जाने वाली घाँस में सीवन एवं तुरडिगम प्रमुख है। मरूस्थल के जिन भागों में जल उपलब्ध हो रहा है, वहाँ रोपित वनस्पति से पर्यावरण परिदृश्य में परिवर्तन आ रहा है।

मृदा – इस प्रदेश की मृदा उपजाऊ है किन्तु यह तभी सम्भव होता है जब उसे जल उपलब्ध होता है। यहाँ वायूढ़ मिट्टियाँ है। जिनका निर्माण वायु एवं अन्य अपरदन एवं अपक्षय से हुआ है तथा हवाओं द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर जमा कर दी गई है। इसमें समुद्री प्रदेशों से उड़ाकर लाई गई मृदा भी सम्मिलित है। घग्घर प्रदेश में जलोढ़ मृदा है। इसी प्रकार लूनी बेसिन में भी जलोढ़ मृदा है। यहाँ की मृदा में जैविक पदार्थों की कमी और लवणता अधिक है। गंगानगर क्षेत्र में काँप मिट्टी है जबकि बाड़मेर, जैसलमेर, बीकानेर और नागौर में लवणीय मृदा की प्रधानता है।

आर्थिक प्रारूप

राजस्थान के मरूस्थलीय प्रदेश में प्राकृतिक बाधाओं के होते हुए भी आर्थिक विकास की ओर यह प्रदेश अग्रसर है। यहाँ कृषि, पशुपालन, खनिज, उद्योग, परिवहन एवं विपणन का विकास क्रमिक रूप से हो रहा है। कृषि का विकास मरूस्थलीय–प्रदेश में सीमित है। अधिकांशतः जहाँ कहीं वर्षा हो जाती है वहाँ बाजरा, चना, मोठ, मूँग आदि की फसल हो जाती है और वर्षा न होने से अकाल की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। किन्तु इस स्थिति में अब परिवर्तन आ रहा है विशेषकर जहाँ नहरी सिंचाई सुविधा उपलब्ध है। गंग नहर के पश्चात् इन्दिरा गाँधी नहर एवं भाखड़ा नहरों ने गंगानगर–हनुमानगढ़ जिलों को राज्य के अग्रणी कृषि उत्पादक जिलों में बदल दिया है। यह स्थिति बिकानेर जिले में और जैसलमेर में भी प्रारम्भ हो चुकी है। आज मरूस्थल का उत्तरी–पूर्वी सिंचित क्षेत्र गेहूँ, गन्ना, कपास, तिलहन, दलहन आदि के उत्पादन में महत्ती भूमिका निभा रहा है। लूनी बेसिन में भी जवाई बाँध से सिंचाई द्वारा कृषि होती है। इसी के साथ ट्यूबवेल द्वारा भी अनेक भागों में सिंचाई हो रही है। असिंचित प्रदेश में आज भी बाजरा प्रमुख फसल है।

पशुपालन की दृष्टि से मरूस्थलीय क्षेत्र महत्त्वपूर्ण है और वास्तव में पशु यहाँ की सम्पदा हैं जिस पर यहाँ के निवासियों का जीवन यापन होता है। विपरीत प्राकृतिक परिस्थितियों में भी यह क्षेत्र पशुपालन हेतु विख्यात है। ऊँट यहाँ का प्रमुख पशु है जिसका मरू–परिस्थितिकी से पूर्ण

सामंजस्य है। बाड़मेर, जैसलमेर, जोधपुर, नागौर, चूरू ऊँटों के लिए प्रसिद्ध है। गाय एवं बैलों की यहाँ उत्तम नस्लें पाली जाती है। बाड़मेर में काकरेज, जैसलमेर में थारपारकर, बीकानेर–गंगानगर में राठी नस्ल की गायें दूध के लिए प्रसिद्ध है। बीकानेर दुग्ध उद्योग का प्रमुख केन्द्र। बैलों के लिए नागौर सम्पूर्ण देश में विख्यात है। भेड़ पालन तथा बकरी पालन यहाँ अधिकता से होता है क्योंकि ये दोनों जानवर घटिया घास एवं किसी भी प्रकार की वनस्पति पर जीवित रह सकते हैं। भेड़ों से यहाँ ऊन उद्योग विकसित हुआ है। बीकानेर इसका प्रमुख केन्द्र है। जबकि बकरियाँ मांस के लिए अधिक पाली जाती है।

खनिज सम्पदा – इस प्रदेश में अनेक प्रकार के खनिज उपलब्ध है। जिप्सम के प्रमुख भण्डार बीकानेर के जायसर, लूनकरनसर क्षेत्र, नागौर, जोधपुर, चुरू, हनुमानगढ़ में हैं। लिग्नाइट कोयले का भण्डार बीकानेर के पलाना क्षेत्र में है। संगमरमर मकराना, परबतसर में, टंगस्टन नागौर के डेगाना में, चूने का पत्थर सोजत, गोटन, अटबड़ा, मूँडवा में, डोलोमाईट सीकर, जोधपुर में, तामड़ा सीकर के महवा, बागेश्वर में, मुल्तानी मिट्टी बीकानेर, बाड़मेर, जैसलमेर में उपलब्ध है। हाल ही में जैसलमेर जिले में तेल एवं गैस भण्डारों का पता चला है तथा तानोट और रामगढ़ में चार कुओं से गैस के भण्डार मिले हैं यहाँ खनिज तेल और गैस का उत्पादन प्रारम्भ हो गया है। अन्य क्षेत्रों में भी तेल और प्राकृतिक गैस आयोग द्वारा अनुसंधान जारी है तथा उसके उत्तम परिणाम निकलने की सम्भावना है।

औद्योगिक दृष्टि से मरूस्थलीय प्रदेश पिछड़ा हुआ है। अधिकांशतः मध्यम श्रेणी के उद्योग एवं लघु उद्योग ही यहाँ विकसित हुए है। ऊन उद्योग, कालीन, नमदे, वस्त्रों की छपाई, रंगाई, जूतियाँ बनाना, कसीदाकारी आदि प्रमुख कुटीर उद्योग हैं। जोधपुर, बीकानेर, पाली, गंगानगर, हनुमानगढ़, खेतड़ी, सीकर प्रमुख औद्योगिक केन्द्र है। गंगानगर, हनुमानगढ़ और पाली जिले में सूती वस्त्र एवं कपास जिनिंग–प्रेसिंग मिले हैं। ऊनी वस्त्र उद्योग जोधपुर, बीकानेर, चूरु, नवलगढ़ में । चीनी की राज्य सरकार की मिल गंगानगर में है जिसके साथ डिस्टलरी भी है। तेल मिल अनेक स्थानों पर है। नमक उद्योग डीडवाना, साँभर, कुचामन एवं सुजानगढ़, में केन्द्रित है। मकराना संगमरमर उद्योग का केन्द्र है। सामान्यतया यह प्रदेश औद्योगिक दृष्टि से विकसित नहीं है किन्तु भविष्य में विकास की पर्याप्त सम्भावनाएं हैं।

परिवहन का विकास इस प्रदेश में मुख्यतया स्वतन्त्रता के पश्चात् ही हुआ है। इस प्रदेश के प्रमुख रेल मार्ग है– बीकानेर–जोधपुर–पाली–मारवाड़, जोधपुर – मेड़ता – फुलेरा –दिल्ली, बीकानेर – रतनगढ़ – चूरु – दिल्ली, जोधपुर – बीकानेर – सूरतगढ़ – हनुमानगढ़ – भटिण्डा मार्ग, सूरतगढ़ – अनूपगढ़, जोधपुर – जयपुर – सवाईमाधोपुर – कोटा, जोधपुर – जैसलमेर, जौधपुर – अहमदाबाद, बाड़मेर – मुनाबाब रेल, मारवाड़ – अहमदाबाद।

सड़क परिवहन का पर्याप्त विकास विगत पचास वर्षों में हुआ है। राष्ट्रीय राजमार्ग 15 गंगानगर से बीकानेर, बालोतरा, बाड़मेर होते हुए गुजरात के काँडला तक चला गया है। अन्य

प्रमुख सड़क मार्गों में जोधपुर–अहमदाबाद सड़क मार्ग, जोधपुर – बीकानेर, बीकानेर – गंगानगर, जोधपुर – पाली – सिरोही, रतनगढ़ – नागौर – जोधपुर, गंगानगर – हनुमानगढ़ – सरदार शहर आदि है। जैसलमेर, बाड़मेर, बीकानेर और गंगानगर जिलों में सीमावर्ती क्षेत्रीय विकास के अन्तर्गत सड़क मार्गों का विकास किया गया है। वर्तमान मे सम्पूर्ण प्रदेश सड़क मार्गों से संयुक्त है और सभी नगर एवं कस्बे तथा बड़े ग्राम सड़कों से जुड़े हैं। वायु परिवहन की नियमित सुविधा केवल जोधपुर नगर में है, जो दिल्ली, जयपुर, बम्बई से वायु सेवा द्वारा जुड़ा हुआ है।

जनसंख्या

राजस्थान का मरूस्थलीय प्रदेश अपेक्षाकृत कम जनसंख्या को प्रश्रय देता है क्योंकि यहाँ की प्राकृतिक परिस्थितियाँ कठोर है तथा आर्थिक विकास भी अपेक्षाकृत कम है। किन्तु यहाँ के निवासी कठोर परिश्रम से अपना जीवन यापन करते आये हैं और उन्होंने विशिष्ट सांस्कृतिक क्षेत्रों जैसे मारवाड़, बांगड़, शेखावाटी आदि का विकास किया है।

इस प्रदेश में वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार जोधपुर जिले की जनसंख्या सबसे अधिक 36.85 लाख अंकित की गई। इसके पश्चात् नागौर जिले की 33.09 लाख तथा सीकर की 26.27 लाख जनसंख्या थी। सबसे कब जनसंख्या जैसलमेर जिले की 6.72 लाख अंकित की गई।

सम्पूर्ण मरूस्थली प्रदेश में वर्ष 2001 में राज्य की 39.84 प्रतिशत जनसंख्या निवास करना पाया गया। जनसंख्या घनत्व की दृष्टि से सर्वाधिक जिले में 361 व्यक्ति प्रति व्यक्ति किमी. है। जबकि सबसे कम घनत्व जैसलमेर जिले में 17 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. है जो राज्य का न्यूनतम है।

जोधपुर इस प्रदेश का सबसे बड़ा नगर है। अन्य प्रमुख नगर है – बीकानेर, गंगानगर, पाली, सीकर, हनुमानगढ़, चूरु और झुंझुनूँ। इस क्षेत्र के अन्य नगर बाड़मेर, जैसलमेर, जालौर, नागौर, रतनगढ़, बालोत्तरा, नवलगढ़, मुकन्दगढ़, पिलानी, सुजानगढ़, एवं सरदार शहर है।

मरूस्थलीय प्रदेश के उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि राज्य का यह क्षेत्र प्राकृतिक कठिनाई से युक्त है किन्तु यहाँ के निवासी कर्मठ एवं परिश्रमी है और सदियों से यहाँ जीवन यापन कर रहे हैं। आर्थिक विकास सीमित हुआ है किन्तु इस दिशा में निरन्तर प्रगति हो रही है, विशेषकर नहरों द्वारा सिंचाई के विस्तार ने मरुभूमि के विस्तृत भाग को हरा–भरा बना दिया है। कृषि, पशुपालन, उद्योग आदि विकसित हो रहे हैं। पर्यटन उद्योग में यहाँ निरन्तर वृद्धि हो रही

है। जैसलमेर, जोधपुर तथा बीकानेर के पर्यटन स्थल विदेशियों के आकर्षण के केन्द्र हैं। निसन्देह इस प्रदेश के विकास की पर्याप्त सम्भावनाएँ हैं।

अरावली प्रदेश

भौगोलिक दृष्टि से 'अरावली' राजस्थान का विशिष्ट प्रदेश है जिसे पर्वतीय प्रदेश भी कहा जा सकता है क्योंकि यहाँ अरावली पर्वत श्रृंखलाएँ विस्तृत है। राज्य के मध्य में कर्णवत् दक्षिण–पश्चिम से उत्तर–पूर्व की ओर विस्तृत अरावली पर्वत श्रेणी विश्व की प्राचीनतम पर्वत श्रेणियों में से है। अरावली की पहाडियों ने राजस्थान को जहाँ एक ओर प्राकृतिक विशिष्टता प्रदान की है, वहीं दूसरी ओर यहाँ के आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास को भी प्रभावित किया है। इसके अन्तर्गत राजस्थान के सिरोही, उदयपुर, राजसमन्द, अजमेर, जयपुर, दौसा, अलवर, जिले मुख्यतया सम्मिलित है। किन्तु इनकी शाखाओं एवं प्रभाव को दृष्टिगत रखते हुए इसमें डूँगरपुर, बाँसवाड़ा, चित्तौड़गढ़ तथा भीलवाड़ा जिले भी सम्मिलित कर लिए जाते है। सीकर और झुंझुनूँ जिले की कुछ तहसीलें भी इसमें सम्मिलित की जाती हैं। यह सम्पूर्ण प्रदेश मात्र एक भौगोलिक प्रदेश ही नहीं अपितु एक 'योजना प्रदेश' है। जिसके विकास हेतु विशिष्ट प्रयास किये जा रहे है।

प्राकृतिक स्वरूप

भू–आकृतिकी की दृष्टि से अरावली श्रेणियाँ भारत में विशिष्ट है। अरावली श्रेणियाँ गुजरात के मैदान से प्रारम्भ होकर देहली तक राजस्थान के मध्य से कर्णवत दक्षिण–पश्चिम से उत्तर–पूर्व तक लगभग 700 कि.मी. लम्बाई में फैली हुई है। भूगार्भिक संरचना की दृष्टि से अरावली श्रेणियाँ प्री–केम्ब्रियन शैलों से सम्बन्धित हैं जिन्हें देहली क्रम और अरावली क्रम के अन्तर्गत वर्णित किया जाता है। अरावली श्रेणियों को तीन प्रमुख उप–प्रदेशों में विभक्त किया जाता है–

(अ) **दक्षिणी अरावली प्रदेश**

(ब) **मध्य अरावली प्रदेश**

(स) **उत्तरी अरावली प्रदेश**

(अ) दक्षिणी अरावली

दक्षिणी अरावली क्षेत्र वास्तव में मुख्य अरावली है। इस भाग में पर्वत श्रेणियों का विस्तार 100 किमी. चौड़ाई तक हो गया है तथा औसत ऊँचाई 1000 मीटर है। इस क्षेत्र में 8 से 10 श्रेणियों का समानान्तर विस्तार है। दक्षिणी अरावली क्षेत्र ऊँचाई में कम होते जाते हैं तथा वे डूँगरपुर, बाँसवाड़ा और पूर्वी ईडर की पहाड़ियों में बदल जाते हैं। माउण्ट आबू के क्षेत्र में पर्वत श्रेणियाँ सघन हैं, यहीं पर अरावली का सर्वोच्च शिखर **गुरु शिखर** है जिसकी ऊँचाई समुद्र तल से 1722 मीटर है। यहाँ की अन्य श्रेणियाँ **सेर** (1597मीटर), **अचलगढ़** (1380मीटर), **देलवाड़ा** (1442 मीटर) और **आबू** (1225मीटर) हैं। उदयपुर–राजसमन्द क्षेत्र में सर्वोच्च शिखर **जरगा** पर्वत

है, जिसकी ऊँचाई 1431मीटर है। यहाँ की अन्य श्रेणियाँ **कुम्भलगढ़, लीलागढ़, नागपानी, कमलानाथ की पहाड़ी, सज्जनगढ़** आदि है। नक्की झील माउण्ट आबू पर स्थित प्राकृतिक झील है। उदयपुर के निकट भी पिछोला, फतह सागर, जयसमन्द झीले हैं। इन श्रेणियों में ग्रेनाइट की प्रधानता के साथ–साथ देहली और अरावली क्वार्टजाइट भी प्रधानता से हैं। इस प्रदेश का अपवाह तन्त्र समानान्तर और दक्षिणवर्ती है जो बनास, साबरमती, पामरी, बाखल नदियों द्वारा तथा दक्षिण–पूर्व में गोमती और सोम नदियाँ हैं।

(ब) मध्य अरावली

मध्य अरावली का विस्तार उदयपुर, राजसमन्द और अजमेर जिलों में है। इस क्षेत्र में पहाड़ियों की औसत ऊँचाई 700 मीटर है किन्तु घाटियों 550 मीटर ऊँची है। ये श्रेणियाँ लगभग 30 किमी. चौड़ी और 100 किमी. तक विस्तृत है। अजमेर के निकट **तारागढ़** की ऊँचाई 870मीटर है और पश्चिम में सर्पिलाकार पर्वत श्रेणियाँ **नाग पहाड़** (795मीटर) है। इस भाग में अरावली की औसत ऊँचाई 700 मीटर है। अजमेर और नसीराबाद के मध्य की श्रेणियाँ जल विभाजक का कार्य करती है। ब्यावर तहसील के चार दर्रे बार, पखेरिया, शिवपुर घाट तथा सुरा घाट है।

(स) उत्तरी अरावली

उत्तरी अरावली का विस्तार साँभर से उत्तर–पूर्व को है। इसमें शेखावटी की पहाड़ियाँ, तोरावाटी की पहाड़ियाँ तथा जयपुर और अलवर की पहाड़ियाँ सम्मिलित हैं। इस क्षेत्र की समस्त श्रेणियाँ अपरदित है। प्रमुख पर्वत श्रेणियाँ **जयगढ़** (648मीटर), **नाहरगढ़** (599मीटर), **भानगढ़** (649मीटर), **सिरावास** (651मीटर), **अलवर किला** (597मीटर) हैं। बाणगंगा, धुन्ध और बाँडी नदियाँ प्रमुख हैं जो बनास नदी की सहायक है।

जलवायु

अरावली प्रदेश की जलवायु अति विशिष्ट है, इसके एक ओर शुष्क मरूस्थल है तो दूसरी ओर वर्षा युक्त प्रदेश। इसी कारण इसके पश्चिमी भाग में शुष्क जलवायु है तो पूर्वी भाग में आर्द्र जलवायु। ऊँचाई का प्रभाव भी जलवायु पर है। यद्यपि अरावली पर्वत शृंखला अधिक ऊँचाई की नहीं है किन्तु माउण्ट आबू ग्रीष्म में भी सुहावने मौसम के कारण पर्यअकों का केन्द्र है। तापमान दक्षिणी अरावली, मध्य अरावली एवं उत्तरी अरावली में भिन्नता रखता है। यहाँ ग्रीष्म में 28^0 से 34^0 से.ग्र. और शीतऋतु में 10^0 से 16^0 से.ग्रे. के मध्य रहता है। प्रदेश के दक्षिणी भागों में 100 से 150 से.मी. वर्षा होती है, जबकि मध्य एवं उत्तरी भाग 40 से 80 सेमी. तक।

प्राकृतिक वनस्पति – को अरावली पर्वत माला प्रश्रय दे रही है किन्तु दुर्भाग्य से विगत कुछ वर्षा में हुई अन्धाधुन्ध वृक्षों की कटाई से अब अनेक श्रेणियाँ वृक्ष विहीन हो गई हैं इस प्रदेश में उष्ण कटिबन्धीय वन हैं जिनमें धोकड़ा, बरगद, गूलर, खैर, आम, जामुन, बाँस, धाऊ, सिरिस, बेल,

रोहिड़ा आदि के वृक्ष पाये जाते है। वर्तमान में सिरोही जिले का आबू पर्वत क्षेत्र पर्याप्त सघन वनस्पति से युक्त है।

मृदा – की विविधता इस प्रदेश में अत्यधिक है। यहाँ भूरी–रेतीली कछारी मिट्टी अलवर क्षेत्र में है, तो जयपुर–मालपुरा क्षेत्र में कछ्छारी मिट्टी है। लाल–पीली मिट्टी का क्षेत्र अजमेर, पश्चिमी भीलवाड़ा, पश्चिमी उदयपुर और सिरोही है, जबकि डूंगरपुर, बांसवाड़ा में लाल लौमी मृदा की प्रधानता है। मिश्रित लाल–काली मृदा बाँसवाड़ा, चित्तौड़गढ़, भीलवाड़ा और उदयपुर जिलों के कुछ भागों में है। पर्वतीय ढालों पर मृदा नगण्य है किन्तु निचले ढाल तथा घाटियों में उपजाऊ मिट्टी होने से कृषि की दृष्टि से उत्तम है। इसी कारण पर्वतीय प्रदेश होते हुए भी यहाँ के अनेक क्षेत्र उत्तम कृषि क्षेत्र है।

आर्थिक प्रारूप

कृषि – यद्यपि अरावली प्रदेश की अधिकांश भूमि पहाड़ी है किन्तु फिर भी यहाँ के 44 प्रतिशत भू–भाग पर कृषि की जाती है। अरावली पर्वत माला का विस्तार सीमित है, ऊँचाई कम है तथा श्रृंखलायें अनवरत नही है और उनमे अनेक घाटियाँ और पर्वतपदीय मैदान है। अलवर, जयपुर, दौसा क्षेत्र में गेहूँ, चना, बाजरा, तिलहन एवं दालों की कृषि होती है। अजमेर में ज्वार, गेहूँ और तिलहन तथा उदयुपर, भीलवाड़ा में मक्का, गेहूँ, तिलहन की प्रधानता है। इसके साथ गन्ना, जौ, मूंगफली, तम्बाकू, सरसों, चना, कपास आदि की कृषि भी की जाती है। माही डेम के बन जाने से बांसवाड़ा के विस्तृत क्षेत्र में गेहूँ, गन्ना, कपास, मूँगफली आदि की खेती की जाती है। दक्षिणी अरावली क्षेत्र में अधिक वर्षा होने से अनेक स्थानो पर चावल भी उत्पादित होता है। प्रदेश में सिंचाई का मुख्य साधन कुआं है। यहाँ जल स्तर 10 से 15 मीटर के मध्य होता है। इसी के साथ नलकूपों का प्रयोग भी होने लगा है। माही, जाखम, औराई, अड़वान सिंचाई योजनाओं से सिंचाई क्षेत्र में पर्याप्त वृद्धि हुई है।

खनिज संसाधनों की दृष्टि से अरावली प्रदेश राजस्थान का सर्वाधिक सम्पन्न क्षेत्र है क्योंकि यह प्राचीन शैलों वाला प्रदेश है जो अनेक प्रकार के धात्विक एवं बहुमूल्य अधात्विक खनिजों से युक्त है। राज्य के वर्तमान खनिज उत्पादनों का लगभग 70 प्रतिशत इसी प्रदेश में होताा है। यहाँ उपलब्ध खनिजों में सीसा–जस्ता, लौह अयस्क, बेरिलियम, ताँबा, अभ्रक, पन्ना, मैंगनीज, एस्बेस्टॉस, संगमरमर, ग्रेनाइट आदि प्रमुख है। उदयपुर की जावर की खानें, राजपुरा–दरीबा, भीलवाड़ा की अगूचा, डूंगरपुर की धुधरा, मांडी में सीसा एवं जस्ता के भण्डार है। लोहा मोरीजा, बानोल, नीमला, डाबला–सिंघाला, नीम का थाना, नाथरा की पाल में उपलब्ध है। बेरीलियम उदयपुर, जयपुर, भीलवाड़ा के पुर में सीमित मात्रा में है। अभ्रक का विशाल भण्डार भीलवाड़ा, अजमेर और जयपुर जिलों में है। एस्बेस्टॉस उदयपुर, डूंगरपुर और अजमेर जिलों में उत्पादित होता है। मैंगनीज बांसवाड़ा और उदयपुर में उपलब्ध है। पन्ना काला गुमान, हिरवी और गोगुन्दा

(उदयपुर में) तथा बेराइट्स अलवर में है। सम्पूर्ण अरावली में भवन निर्माण हेतु उत्तम प्रकार का पत्थर मिलता है किन्तु यदि इसकी अनियन्त्रित खुदाई होती रही तो अनेक पहाड़ियों का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जायेगा। इस प्रदेश में उपलब्ध अन्य खनिजों में फेल्सपार, कॉंच बालूका, चीनी मिट्टी, डोलोमाइट, यूरेनियम, तामड़ा, चूने का पत्थर, स्लेट आदि हैं। कहा जा सकता है कि अरावली प्रदेश खनिजों की दृष्टि से एक समृद्ध प्रदेश है।

उद्योगों का विकास इस प्रदेश में पर्याप्त हुआ है क्योंकि यहाँ औद्योगिक कच्चा माल उपलब्ध है, ऊर्जा जल के साथ–साथ विपणन हेतु बाजार भी राज्य में और राज्य से बाहर है। इस प्रदेश में अनेक औद्योगिक क्षेत्र है जिनमें प्रमुख है– अलवर, भिवाड़ी, जयपुर, अजमेर, भीलवाड़ा एवं उदयपुर। इसके अतिरिक्त ब्यावर, मकराना, फुलेरा, किशनगढ़, चित्तौड़गढ़, सांभर, सीकर, निम्बाहेडा, भूपाल सागर आदि नगर भी कतिपय उद्योगों हेतु प्रसिद्ध है। अलवर क्षेत्र में सिन्थेटिक फाइबर रसायन, स्टील, स्कूटर, वनस्पति तेल, दाल मिल आदि विकसित हुएहै। भिवाड़ी को राज्य सरकार ने विशेष रूप से औद्योगिक केन्द्र की स्थापना हेतु चुना है। जयपुर औद्योगिक क्षेत्र में इंजीनियरिंग, विद्युत यन्त्र, मीटर, स्पिनिंग और वीविंग मिल, बाल–बियरिंग उद्योग आदि का विकास हुआ है। अजमेर में हिन्दुस्तान मशीन टूल्स, रेलवे वर्कशॉप के अतिरिक्त अनेक मध्यम श्रेणी के उद्योग है। भीलवाड़ा राज्य का प्रमुख औद्योगिक केन्द्र बनता जा रहा है। यहाँ सूती वस्त्र, होजरी, सिन्थेटिक फाइबर, वनस्पति घी, दाल मिल, ऊनी वस्त्र आदि के कारखाने है। चित्तौड़गढ़ और निम्बाहेड़ा में सीमेन्ट के कारखानें, भूपाल सागर में चीनी मिल है। उदयपुर में औद्योगिक क्षेत्र में कपास कताई, रसायन डिस्टलरी, मशीन उद्योग आदि विकसित हुए है। देबारी स्थित जिंक स्मेल्टर न केवल राज्य अपितु भारत का एक प्रमुख प्लान्ट है। स्पष्ट है कि इस प्रदेश में औद्योगिक विकास तीव्र गति से हो रहा है और भविष्य में इसके और अधिक विकसित होने की सम्भावना है।

परिवहन का विकास अरावली प्रदेश में अच्छा हुआ है। यद्यपि पर्वतीय प्रदेश है किन्तु इसकी राज्य में मध्यवर्ती स्थिति के कारण यहाँ रेल एवं सड़क परिवहन की सुविधा पर्याप्त है। अलवर, जयपुर, अजमेर, भीलवाड़ा, उदयपुर, ब्यावर, फुलेरा, दौसा, डूंगरपुर, चित्तौड़गढ़ आदि रेल मार्गों की सुविधा से युक्त है। राज्य की राजधानी होने से जयपुर रेल मार्ग से देहली, बम्बई, अहमदाबाद, आगरा और देश के अन्य प्रमुख नगरों तथा राज्य के अन्य भागों से जुड़ा है। अजमेर न केवल रेलमार्गों की सुविधा रखता है अपितु यहाँ का रेल वर्कशॉप महत्वपूर्ण है। सड़क परिवहन की यहाँ उत्तम सुविधा है। इस प्रदेश से राष्ट्रीय राज मार्ग नं. 8 जयपुर, अजमेर, राजसमंद, उदयपुर होता हुआ गुजरता है। राष्ट्रीय राजमार्ग 11 आगरा से दौसा, जयपुर, सीकर होता हुआ बीकानेर तक जाता है। अन्य प्रमुख मार्गों में अजमेर – कोटा, जयपुर – अलवर, जयपुर – कोटा, जयपुर – अजमेर – भीलवाड़ा – चित्तौड़गढ़ – उदयपुर आदि के अतिरिक्त प्रत्येक जिले में सड़क मार्गों का पर्याप्त विकास हुआ है। जयपुर और उदयपुर में नियमित वायु

सेवा है। जयपुर का हवाईअड्डा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का है। यहाँ से देहली, जोधपुर, उदयपुर, बम्बई को नियमित सेवा है। जयपुर तथा उदयपुर विदेशी पर्यअकों के केन्द्र है।

जनसंख्या

अरावली प्रदेश यद्यपि पर्वतीय है किन्तु पर्वतीय विस्तार सीमित चौड़ाई में होने के कारण इसमें सम्मलित अनेक जिलें सघन जनसंख्या को प्रश्रय देने हैं। इस प्रदेश में सर्वाधिक जनसंख्या 2011 में जयपुर जिले की रही, जो 66.639लाख अंकित की गई। इसके पश्चात् अलवर जिले की 36.719 लाख, अजमेर जिले की 25.849 लाख, तथा भीलवाड़ा जिले की 24.104 लाख रही। उस प्रदेश में सबसे कब जनसंख्या वाला जिला वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार प्रतापगढ़ था, जिसकी जनसंख्या 8.68 लाख अंकित की गई।

जयपुर जिले में वर्ष 2011 में जनसंख्या घनत्व 598 रहा, जबकि दौसा में 476, अलवर जिले में 438 और अजमेर जिले में 305 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर रहा। सिरोही जिले में इस प्रदेश का सबसे कम जनसंख्या घनत्व 202 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. अंकित किया गया।

अरावली प्रदेश में सम्मलित कुछ जिलों में अनुसूचित जनजाति की बहुलता है। बाँसवाड़ा और डूँगरपुर में अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या का प्रतिशत वर्ष 2001 में क्रमशः 73.47 एवं 65.84 प्रतिशत है, उदयपुर में यह प्रतिशत 36.79, सिरोही में 23.39 और चित्तौड़गढ़ में 20.28 प्रतिशत है। जयपुर इस प्रदेश का ही नहीं अपितु राजस्थान का सबसे बड़ा नगर है। अन्य प्रमुख नगर अजमेर, उदयपुर, अलवर, भीलवाड़ा, ब्यावर, दौसा, किशनगढ़, नसीराबाद, नाथद्वारा, प्रतापगढ़, डूँगरपुर, बाँसवाड़ा है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि अरावली प्रदेश राजस्थान का न केवल एक विशिष्ट भौगोलिक प्रदेश है, अपितु एक आर्थिक प्रदेश है। इस प्रदेश मे ंखनिज, अरावली प्रदेश में विकास की गति अच्छी रही है वही दक्षिणी अरावली का आदिवासी प्रदेश अपेक्षाकृत कम विकसित हुआ है, जिसकी ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है जिससे प्रादेशिक असमानता में कमी आ सके।

मैदानी प्रदेश

राजस्थान के मैदानी प्रदेश को **'पूर्वी मैदान'** के नाम से भी पुकारा जाता है क्योंकि अधिकांशतः यह राज्य के पूर्वी भाग में स्थित है। पूर्वी मैदान, राजस्थान का एक विशिष्ट भौगोलिक प्रदेश हैं इसमें धौलपुर एवं सवाई माधोपुर के अतिरिक्त टोंक जिलें सम्मिलित हैं। यह सम्पूर्ण प्रदेश नदियों द्वारा निर्मित मैदानी भाग है इसमें बनास बेसिन, यमुनान्तरण प्रदेश एवं उत्तरी चम्बल बेसिन सम्मिलित है।

प्राकृतिक स्वरूप

इस प्रदेश का भू–आकृतिक स्वरूप विविधता से युक्त है। प्रदेश का उत्तरी भाग में जलोढ़ मृदा है, इस पर कुछ सिस्ट और क्वार्टजाइट की एकाकी पहाड़ियाँ स्थित है। दक्षिणी पूर्व में सेण्डास्टोन है जो अपर विन्ध्यन समूह का है। बनास बेसिन जलोढ़ मृदा से युक्त है, साथ ही देहली क्रम की शैल टोंक के निकट की पहाड़ियों के रूप में हैं। सवाई माधोपुर क्षेत्र में प्री–अरावली विन्ध्यन की परतदार शैलों की प्रधानता है।

धरातलीय दृष्टि से यद्यपि यह मैदानी प्रदेश है किन्तु सवाई माधोपुर और धौलपुर के क्षेत्र में नीची पहाड़ियाँ हैं। उत्तरी एवं मध्य भरतपुर जिला उपजाऊ मैदान है जो यमुना के मैदान का पश्चिमोत्तर भाग है तथा उपजाऊ जलोढ़ मिट्टी से युक्त है। इसके दक्षिण भाग में अनियमित पहाड़ियाँ हैं जिन्हें 'डाँग' (Dang) कहते है। धौलपुर नगर के द.प. में पहाडियाँ विस्तृत हैं। भरतपुर के पूर्व में भी मण्डहोली नाम की पहाड़ी है, इसकी अधिकतम ऊँचाई 216 मीटर है।

बनास बेसिन समतल मैदानी भाग है। इसके सीमावर्ती क्षेत्र में पहाड़ियाँ हैं। करौली क्षेत्र में पहाड़ियाँ ऊँची तथा सघन है तथा कटा–फटा प्रदेश है। धौलपुर एवं सवाई माधौपुर के चम्बल नदी के सहारे का क्षेत्र अत्यधिक कटाव से **'बीहड'** के रूप में है। सवाई माधौपुर में रणथम्भौर किला एक पहाड़ी पर स्थित है जिसकी ऊँचाई समुद्र तल से 505 मीटर है।

इस प्रदेश में प्रवाहित नदियों में प्रमुख हैं–चम्बल, बाणगंगा, गम्भीर, रूपारेल, पार्वती, बनास, मोरेल, माशी और सोहादारा। इन सभी नदियों एवं इनकी सहायक नदियों से यह सम्पूर्ण प्रदेश नदी निर्मित मैदान के रूप में है।

जलवायु की दृष्टि से यह प्रदेश उष्ण–आर्द्र है। राज्य के पूर्वोत्तर प्रदेश में होने के कारण यह प्रदेश पर्याप्त वर्षा प्राप्त करता है। यहाँ का वार्षिक वर्षा का औसत 65सेमी. है, जो प्रतिवर्ष परिवर्तित होता रहता है। सम्पूर्ण वर्षा का 90 प्रतिशत जुलाई से सितम्बर के मध्य होता है। कभी–कभी लगातार कई दिनों तक वर्षा होती रहती है। ग्रीष्मकाल में अधिकतम तापमान 47^0 से. ग्रे. और न्यूनतम 25^0 से.ग्रे. रहता है। जबकि शीतकाल में न्यूनतम तापमान 4^0 से 8^0 से.ग्रे. तक हो जाता है। सामान्यतया इस प्रदेश की जलवायु सम है, ग्रीष्म काल मे ंधूल भरी आंधियाँ, वर्षाकाल में मूसलाधार वर्षा और शीतकाल सामान्य होता है।

प्राकृतिक वनस्पति में यहाँ पतझड़ वाले वनों की प्रधानता है, जिसमें ढाक और खैर की प्रधानता होती है। प्रदेश के दक्षिणी भाग में जहाँ चम्बल के बीहड़ हैं वहाँ झाड़ियाँ, घास और छितरी हुई वनस्पति है। टोंक क्षेत्र में तेंदू, महुआ, गूलर, कारा, खेर, बबूल, बेर, आम, धोकड़ा की प्रधानता है। सवाई माधोपुर क्षेत्र में भी वनों का पर्याप्त विस्तार है।

यहाँ तेंदू, खिरनी, गुर्जन, बांस, खेजड़ा, खेर, हिंगोट आदि के वृक्ष प्रधानता से है। कुछ क्षेत्रों मे ंप्राकृतिक घास उगी हुई है जिसे 'बीड़' कहते हैं। डीग के निकट मण्डेरा बीड़ प्रमुख है।

मृदा – इस प्रदेश में मुख्यतया जलोढ़ मृदा है। बनास बेसिन में चिकनी और रेतीली मिट्टी तथा घाटियों में जलोढ़ मृदा का विस्तार हैं काली मिट्टी भी इस प्रदेश में है। भरतपुर क्षेत्र में काली दुमट मृदा (चिकनोट), भूरी मृदा (मटियार), दोमट, कछार और अनुपजाऊ रेतीली मृदा (भूर) का विस्तार है। जबकि सवाई माधौपुर में गहरी काली, हल्की पीली एवं भूरी मृदा की प्रधानता है।

आर्थिक स्वरूप

कृषि की दृष्टि से पूर्वी मैदानी प्रदेश महत्वपूर्ण है। पर्याप्त वर्षा एवं उपजाऊ मिट्टी के कारण यहाँ विभिन्न कृषि उपजों का उत्पादन होता है। इस प्रदेश में उत्पादित प्रमुख फसलें हैं– गेंहूँ, चावल, बाजरा, सरसों, मक्का, उड़द, मूँग, अरहर, मूँगफली, गन्ना तम्बाकू, मिर्च आदि। अनेक प्रकार के फल एवं सब्जियों का उत्पादन भी यहाँ होता है। जहाँ सिंचाई सुविधा उपलब्ध है वहाँ वर्ष में दो फसलें भी बो ली जाती है।

सिंचाई हेतु इस प्रदेश में कुओं का प्रचलन सर्वाधिक है। इसके अतिरिक्त नहरों एवं तालाबों द्वारा भी सिंचाई की जाती है। भरतपुर–धौलपुर क्षेत्र में विभिन्न आकार के 200 बन्ध या बाँध है, इनसे सीमित रूप में सिंचाई की जात है। भरतपुर फीडर और गुड़गाँव यमुना नहरों से भी यहाँ सिंचाई होती है। टोंक जिले में 25,000 से अधिक कुएँ हैं तथा नदियों के निकट सीधे नदी के जल को रहट द्वारा खेतों में सिंचाई हेतु उपयोग किया जाता है। बीसलपुर बाँध के अतिरिक्त अनेक छोटी सिंचाई परियोजनाओं के माध्यम से इस प्रदेश में सिंचाई सुविधाओं का विस्तार हुआ है।

खनिजों की दृष्टि से यह प्रदेश निर्धन है। इस प्रदेश का प्रमुख खनिज इमारती पत्थर है। इस प्रदेश में विन्ध्यन बालू–पत्थर है, जिसका उपयोग न केवल सामान्य इमारतों में अपितु आगरा, सीकर, डीग व मथुरा के प्रसिद्ध भवनों में भी हुआ है। बनास बेसिन में अभ्रक का पर्याप्त भण्डार है। राजमहल क्षेत्र में गारनेट मिलता है सोप स्टोन निवाई के निकट तथा लोहा बरथल के निकट सीमित मात्रा में है। जिप्सम, मैंगनीज, ताँबा, सिलिका भी यहाँ उपलब्ध है किन्तु उनका खनन लाभकारी नहीं है। चूने का पत्थर सवाईमाधोपुर और गंगापुर तहसीलों में पर्याप्त है जिसका उपयोग सीमेन्ट बनाने में किया जाता है। यहाँ चाइना क्ले तथा घिया पत्थर भी उपलब्ध है।

औद्योगिक विकास की दृष्टि से भी यह प्रदेश पिछड़ा हुआ है। भरतपुर का सेन्ट्रल इण्डिया मशीनरी लिमिटेड (सिमको) तथा धौलपुर हाई–टेक ग्लास फैक्ट्री का यहाँ के उद्योगों में विशेष महत्व है। इसके अतिरिक्त धातु उद्योग, तेल उद्योग, रसायन उद्योगों का भी सीमित विकास हुआ है। कुटीर उद्योगों का यहाँ पर्याप्त विकास हुआ हैं। इसमे सवाई माधौपुर के लकड़ी के खिलौने तथा टोंक में नमदा, दरी, निवाड़ उद्योग प्रमुख है। बीड़ी बनाने का कार्य भी घरेलू उद्यम के रूप में किया जाता है। हैण्डलूम, खण्डसारी, रंगाई–छपाई, चमड़े का सामान आदि भी कुटीर उद्योग के रूप में किये जाते है।

परिवहन का विकास पूर्वी राजस्थान के मैदानी प्रदेश में पर्याप्त हुआ है। इसे प्रदेश को 'राजस्थान का पूर्वी द्वार' (Eaxtern Gateway of Rajasthan) कहा जाता है। मध्यकालीन युग से ही यह प्रदेश परिवहन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रहा है। इस प्रदेश में सड़कों का सघन जाल है। यहाँ से राष्ट्रीय राजमार्ग 11 एवं 2 गुजरते है। जयपुर–कोटा मार्ग एक प्रमुख मार्ग है जो निवाई, टोंक, देवली से जाता है। टोंक – सवाईमाधोपुर, मालपुरा – टोडारायसिंह, मालपुरा – दूदू, धौलपुर – भरतपुर, भरतपुर – डीग, डीग से नगर, नगर से सेमली, सवाई माधोपुर – दौसा, मण्डारवर – करौली, गंगापुर – लालसोट आदि अन्य प्रमुख सड़क मार्ग है।

रेलमार्गों की सुविधा सवाई माधोपुर में पर्याप्त है। सवाई माधोपुर एक बड़ा रेल जंक्शन है जो जयपुर, कोटा, दिल्ली, मथुरा, आगरा से जुड़ा है। जयपुर–मम्बई और दिल्ली–बम्बई मार्ग रेलमार्ग यहीं से जाता है। भरतपुर–धौलपुर क्षेत्र में डूपरिया से रानीकुण्ड, बयाना से रूपवास, नदबई से भरतपुर, भरतपुर से चिकसाना तथा मनिया से जाजन अन्य रेलमार्ग है। धौलपुर से वान्तपुरा राज्य की एक मात्र नैरोगेज रेल लाइन है। टोंक एक ऐसा जिला मुख्यालय है जहाँ रेल मार्ग की सुविधा नहीं है। यहाँ चानानी, निवाई, सिरस, जयपुर–सवाई माधोपुर रेल मार्ग के स्टेशन है। जयपुर–टोडारायसिंह मार्ग पर मालपुरा, टोडारायसिंह प्रमुख स्टेशन हैं परन्तु इस रेल–मार्ग को अब हटा दिया गया है।

जनसंख्या

पूर्वी मैदानी प्रदेश राज्य का एक सघन जनसंख्या वाला प्रदेश है। वर्ष 2011 में यहाँ सर्वाधिक जनसंख्या भरतपुर जिले की 25.49 लाख अंकित की गई। इसी जिले में 503 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर का घनत्व यहाँ के सघन बसाव का स्पष्ट करता है। टोंक जिले की जनसंख्या 14.21 लाख तथा जनसंख्या घनत्व 198 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी. है। जबकि सवाई माधोपुर की जनसंख्या 13.38 लाख एवं जनसंख्या घनत्व 297 व्यक्ति है। करौली जिले की जनसंख्या 14.58 लाख अंकित की गई जबकि धौलपुर की जनसंख्या 12.07 लाख तथा जनसंख्या घनत्व 398 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी. अंकित किया गया। इस प्रदेश का सबसे बड़ा नगर भरतपुर है। पूर्वी मैदान के अन्य नगर टोंक, सवाई माधोपुर, धौलपुर, करौली, गंगापुर सिटी, कामा, नगर, डीग, नदबई, कुम्हेर, भुसावर, वैर, बयाना, बाड़ी, राजाखेडा, देवली, निवाई, उनियारा, हिण्डोन, टोडाभीम और महुआ हैं।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि पूर्वी मैदानी प्रदेश राज्य का भौगोलिक दृष्टि से विशिष्ट प्रदेश है। कृषि पर आधारित यहाँ की अर्थव्यवस्था है। खनिज सीमित होने से, उद्योगों का विकास भी बहुत कम हुआ है। परिवहन की उत्तम सुविधा है। भरतपुर का 'घना पक्षी विहार' और सवाई माधोपुर का राष्ट्रीय वन्य जीव उद्यान तथा रणथम्भौर का किला पर्यटकों के आकर्षण के केन्द्र है।

दक्षिणी–पूर्वी पठारी प्रदेश (हाड़ौती का पठार)

राजस्थान का दक्षिणी–पूर्वी क्षेत्र एक सुनिश्चित भौगोलिक इकाई है जिसे **'हाड़ौती का पठार'** के नाम से जाना जाता है। इसके अन्तर्गत चार जिले कोटा, बारां, बून्दी एवं झालावाड़ सम्मिलित किये जाते है। इस प्रदेश का क्षेत्रिय विस्तार 24,185 वर्ग कि.मी. है तथा इसकी पूर्वी, दक्षिणी एवं दक्षिणी–पश्चिमी सीमायें मध्य प्रदेश से मिलती है।

भौगोलिक प्रारूप

उच्चावच की दृश्टि से यह प्रदेश मालवा के पठार का उत्तरी भाग है। मूलरूप से यहाँ का धरातल पठारी है, इसी कारण इसको 'हाड़ौती का पठार' नाम दिया जाता है। इस प्रदेश में अत्यधिक धरातलीय विविधता है, जिनके कारण इसे पाँच धरातलीय प्रदेशों में विभक्त किया जाता है, ये हैं– (i) अर्द्ध–चन्द्राकार पर्वत श्रेणियाँ, (ii) नदी निर्मित मैदान, (iii) शाहबाद का उच्च स्थल, (iv) झालावाड़ का पठार और (v) डग–गंगधार के उच्च क्षेत्र।

इस प्रदेश में अर्द्ध–चन्द्राकार रूप में पर्वत श्रेणियों का विस्तार है जो क्रमशः बूँदी और मुकुन्दवाड़ा की पहाड़ियों के नाम से जानी जाती है। बूँदी की श्रेणी एक दोहरी पर्वतमाला है जिसकी लम्बाई लगभग 90 कि.मी. है तथा ऊँचाई समुद्रतल से 300 से 350 मीटर है। मुकुन्दवाड़ा श्रेणी का विस्तार लगभग 120 कि.मी. की लम्बाई में है तथा इसकी औसत ऊँचाई 335 से 503 मीटर है। इस श्रेणी का सर्वोच्च शिखर चंदवाड़ी क्षेत्र में 517 मीटर ऊँचा है। इस पठारी भाग पर चम्बल, काली सिन्ध, पार्वती, मेज एवं उनकी सहायक नदियों से निर्मित उपजाऊ मैदान है। पठार के पूर्वी भाग में शाहबाद का उच्च क्षेत्र तथा दक्षिणी–पूर्वी भाग में डग–गंगधार का उच्च क्षेत्र है। जब कि मुकुन्दवाड़ा श्रेणी के दक्षिण में 300 से 450 मीटर ऊँचाई का झालावाड़ का पठारी प्रदेश है।

भूगर्भिक बनावट की दृष्टि से यहाँ के उत्तरी क्षेत्र में अरावली क्रम वाली सिस्ट की प्रधानता है तथा क्वार्टजाइट के अवशिष्ट देहली क्रम के हैं। कोटा–बांरा जिलों का अधिकांश भाग विन्ध्यन क्रम का है। शाहबाद एवं छबड़ा क्षेत्र में शैलों की बनावट दक्कन के पठार के समान है। इस प्रदेश में अपर विन्ध्यन सैण्डस्टोन की प्रधानता है। जबकि सम्पूर्ण मध्य पठारी भाग पर जलोढ़ मृदा का जमाव है। झालावाड़ जिले का अधिकांश भाग दक्कन के पठार के तुल्य है तथा जलोढ़ मिट्टी से युक्त है। इस प्रदेश में चम्बल के अतिरिक्त उसकी सहायक काली सिन्ध, पार्वती और मेज नदियाँ प्रवाहित है।

जलवायु की दृष्टि से यह प्रदेश उप–उष्ण जलवायु वाला है। ग्रीष्म काल में यहाँ तापमान 40^0 से.ग्रे. से 45^0 से.ग्रे. तक हो जाता है तथा गर्म, तेज, धूल भरी हवायें चलती है। जबकि शीतकाल मे ंऔसत तापमान 18^0 से.ग्रे. रहता है। शीतलहर के प्रकोप से तापमान 6^0 से.ग्रे. तक हो जाता है,

यहाँ न्यून्तम 4.2^0 से.ग्रे. तापमान अंकित किया गया है। मध्य जून अथवा जुलाई के प्रथम सप्ताह में यहाँ मानूसन दस्तक देता है। हाड़ौती का पठार राज्य में अन्य क्षेत्रों की तुलना में अच्छी वर्षा प्राप्त करता है। यहाँ का वार्षिक वर्षा का औसत 95 से.मी. है। इसमें झालावाड़ एवं बूँदी का उत्तरी–पश्चिमी भाग अधिक वर्षा प्राप्त करता है जबकि मध्य क्षेत्र में 60 से 80 से.मी. तक वर्षा होती है। अधिकांश वर्षा जून से सितम्बर माह के मध्य होती है। शीतकाल में कुछ वर्षा होती है जिसे **'मावट'** कहते है जो गेहूँ आदि फसलों के लिये अत्यधिक लाभकारी होती है।

प्राकृतिक वनस्पति के रूप में यहाँ उष्ण–शुष्क पतझड़ वाले पन पाये जाते हैं। इसमें धोंकड़ा वन, मिश्रित वन, खेर के वन, घास के मैदान और झाड़ियाँ सम्मिलित है। यहाँ के वनों में धोकड़ा, तेंदू, खेर, बेल, गुर्जन, सिरस, खेजड़ा, सलार, आंवला, बहेड़ा, जामुन, खिरनी, सेमली आदि के वृक्षों की प्रधानता है। हाड़ौती के कुछ भाग जैसे दरा, शाहबाद, उ.प. बूँदी आदि सघन वनों से आच्छादित हैं, किन्तु वनों की निरन्तर कटाई से अधिकांश भागों में वन समाप्त होते जा रहे हैं। घास के बीड़ भी यहाँ हैं और सर्वत्र कंटीली झाड़ियों को देखा जा सकता है।

मृदा हाड़ौती प्रदेश की मृदा में विविधता है। एक और कछारी (जलोढ़) मृदा है जो नदियों द्वारा जमा की गई है, जिसका विस्तार मध्य के क्षेत्र में चम्बल, काली सिन्ध, बेसिन में है। दूसरी और काली–कपास मृदा है जो झालावाड़, बांरा और कोटा जिलों के अनेक क्षेत्रों में है। लाल मिट्टी बूँदी की पहाड़ियों, हिण्डोली क्षेत्र और मुकुन्दवाड़ा की पहाड़ियों पर है। पर्वतीय ढालों पर कंकड़–पत्थर वाली मृदा है। सामान्यतया इस प्रदेश की मृदा उपजाऊ है।

आर्थिक प्रारूप

कृषि – उपजाऊ मिट्टी, पर्याप्त वर्षा एवं अनेक क्षेत्रों में विकसित सिंचाई सुविधाओं के फलस्वरूप हाड़ौती प्रदेश राज्य का एक प्रमुख कृषि क्षेत्र बन गया है। यहाँ रबी और खरीफ दोनों ही फसलों का समान रूप से उत्पादन होता है। रबी में गेहूँ, जौ, अलसी और चना उत्पादित होता है। जबकि खरीफ में ज्वार, तिल, मक्का, मूँगफली, गन्ना, कपास एवं तम्बाकू आदि फसलें होती है। दालों के उत्पादन में यह क्षेत्र मूँग, उड़द तथा चने का उत्पादन करता है। मूँगफली के उत्पादन में यह प्रदेश राज्य में अग्रणी है। काली मिट्टी के प्रदेश में कपास का उत्पादन होता है। विगत कुछ वर्षों से इस प्रदेश में सोयाबीन के उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि हो रही है।

सिंचाई की सुविधाओं का यहाँ पर्याप्त विकास हुआ है। नहरें, तालाब तथा कुओं और नलकूपों के माध्यम से अनेक क्षेत्रों में सिंचाई होती है। चम्बल योजना के अन्तर्गत बने बाँध जैसे गाँधी सागर, राणा प्रता सागर, कोटा बाँध (जवाहर सागर) कोटा बेराज से निकली नहरों से कोटा और बूँदी जिलों में सिंचाई होती है। कुछ छोटे बाँधों से भी सिंचाई सुविधाओं का विस्तार किया गया है। झालावाड़ जिलें में तथा अन्य क्षेत्रों में भी कुओं के माध्यम से पर्याप्त सिंचाई की जाती है।

खनिज उत्पादन की दृष्टि से हाड़ौती महत्वपूर्ण नहीं हैं धात्विक खनिजों का यहाँ लगभग अभाव है। झालावाड़ और बूँदी के कुछ भागों में ताँबा और लोहा होने के प्रमाण हैं किन्तु व्यापारिक दृष्टि से यह उपयोगी नहीं हैं। इस प्रदेश का वास्तविक खनिज इमारती पत्थर है। घिया पत्थर

बूँदी, तालेड़ा, सुकेत, झालरापाटन, लाड़पुरा, खानपुर और भवानीमण्डी क्षेत्रों में मिलता है। स्लेट कोटा जिलें में पर्याप्त है तथा इस पर पालिश होने पर यह चिकना और चमकदार हो जाता है। यह 'कोटा स्टोन' के नाम से जाना जाता है। इसके प्रमुख केन्द्र रामगंजमण्डी, मोड़क, सुकेत, दरा एवं कोटा है। चूना भी अनेक क्षेत्रों में मिलता है बूँदी का लाखेरी क्षेत्र चूना उत्पादन में महत्व रखता है। ग्लास सैण्ड, डोलोमाइट भी यहाँ उपलब्ध है। सड़कों के निर्माण में उपयोग में आने वाला पत्थर (गिट्टी) यहाँ बहुतायत से है।

उद्योग हाड़ौती प्रदेश में कुटीर उद्योगों का पर्याप्त विकास हुआ है किन्तु वृहद् उद्योगों में भी वर्तमान में यह राज्य अग्रणी है। ऊर्जा एवं जल की उपलब्धि ने इस प्रदेश के औद्योगिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। **कोटा** का औद्योगिक क्षेत्र न केवल हाड़ौती अपितु राजस्थान में महत्वपूर्ण औद्योगिक क्षेत्र है। कोटा में विकसित उद्योगों में सरकारी क्षेत्र के इन्स्टुमेन्शन लिमिटेड की स्थापना 1968 में की गई। विदेशी सहयोग से विकसित इस उद्योग में सूक्ष्म यन्त्र, ताप नियंत्रक संयन्त्र, विद्युत चुम्बकीय उपकरण आदि का निर्माण होता है। अन्य उद्योगों में श्री राम रेयन्स, श्रीराम फर्टीलाइजर, वूल टॉप्स, प्रीमियर पेपर बोर्ड मिल के अतिरिक्त छोटी मशीनें, लोहे के तार, प्लास्टिक, रसायन, कपास, कृषि यंत्र, तेल मिल, विद्युत यंत्र आदि उद्योगों का भी विकास हुआ है। कोटा के निकट गढ़ेपान में चम्बल फर्टीलाइजर उद्योग स्थापित है।

कोटा के अतिरिक्त बूँदी में लाखेरी स्थित सीमेन्ट कारखाना सबसे पुराना है। इसकी स्थापना 1905 में की गई और ए.सी.सी. कम्पनी द्वारा आज भी परिचालित है। मोड़क में सीमेन्ट प्लान्ट है। पत्थर पॉलिशिंग उद्योग मोड़क, रामगंजमण्डी, सुकेत, मण्डाना, दरा आदि में है। छोटे उद्योगों में तेल मिल, कॉटन, जिनिंग, कृषि यंत्र, कपड़ा मिल, फलों के रस आदि भी यहाँ विकसित हुए हैं। इसके अतिरिक्त दरी, चादरें, टोकरियाँ बनाना, सजावट का सामान, गोटी–किनारी, चमड़े के जूते, रस्सी बनाना आदि पर्याप्त विकसित है।

परिवहन सुविधाओं का विकास हाड़ौती क्षेत्र में पर्याप्त रूप में हुआ है। स्वतंत्रता से पूर्व भी इस प्रदेश में सड़क एवं रेल परिवहन का विकास हुआ था, किन्तु वास्तविक विकास स्वतंत्रता के पश्चात् ही हुआ। सड़क परिवहन यहाँ की परिवहन व्यवस्था को परिचालित करता है। इस प्रदेश से राष्ट्रीय राजमार्ग 12 गुजरता है तो जयपुर से प्रारम्भ होकर बूँदी, कोटा, झालावाड़ होता हुआ जबलपुर तक चला जाता है। एक अन्य राष्ट्रीय राजमार्ग 76 मध्य प्रदेश के शिवपुरी से बाँरा, कोटा होते हुए जाता है। इसकी एक शाखा चित्तौड़गढ़ और दूसरी सवाई माधोपुर से होते हुए दिल्ली–आगरा तक जाती है। अन्य मार्गों में देवली–बूँदी, कोटा– झालावाड़–अकलेरा, कोटा–बाँरा–शाहबाद से मध्य प्रदेश में शिवपुरी–ग्वालियर तक, इन्दरगढ़–इटावा, झालावाड़–डग–गंगधार, बूँदी–चित्तौड़गढ़ आदि प्रमुख है। प्रदेश के सभी तहसील मुख्यालय एवं बड़े कस्बे सड़क परिवहन से जुड़े हैं।

रेलमार्ग की प्रथम सुविधा हाड़ौती में 1899 में हुई जब बीना–बांरा रेल परिवहन बना, इसे 1907 में कोटा तक कर दिया गया। मथुरा–नागदा रेल मार्ग का प्रारम्भ 1909 में हुआ और कोटा जंक्शन बन गया। आज कोटा महत्वपूर्ण रेल जंक्शन है जो देहली–बम्बई तथा जयपुर–बम्बई

द्रुतगामी रेल सेवाओं से जुड़ा है। कोटा–चित्तौड़गढ़ रेल मार्ग वाया बूँदी बन जाने से रेल सुविधाओं का और विकास हो गया है। प्रदेश के सभी रेल मार्ग ब्राड गेज के हैं। रेलमार्गों पर प्रमुख स्टेशन लाखेरी, इन्दरगढ़, केशोरायपाटन, दरा, मोड़क, रामगंजमण्डी, भवानीमण्डी, झालावाड़ रोड़, अन्ता, बांरा, छबड़ा आदि हैं। कोटा का हवाई अड्डा पुराना है। किन्तु अभी तक यहाँ नियमित वायु सेवा का प्रारम्भ नहीं हुआ है।

जनसंख्या

हाड़ौती प्रदेश की वर्ष 2011 में कुल जनसंख्या 57.23 लाख अंकित की गई। इसमें कोटा जिले की सर्वाधिक 19.50 लाख तथा बूँदी की सबसे कम 11.13 लाख रही है। 2001–2011 दशक में हाड़ौती में कोटा जिले की जनसंख्या वृद्धि दर 24.34 प्रतिशत रही, इसके पश्चात् बांरा जिले की 19.82 प्रतिशत, बूँदी 15.70 प्रतिशत और झालावाड़ की 19.57 प्रतिशत रही। जनसंख्या घनत्व 374 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी., कोटा जिले का सर्वाधिक और 175 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी., बांरा जिले का सबसे कम रहा। इस प्रदेश का सबसे बड़ा नगर कोटा है। प्रदेश के अन्य प्रमुख नगर बूँदी, बांरा, झालावाड़, लाखेरी, रामगंजमण्डी, भवानीमण्डी, झालरापाटन, छबड़ा, केशोरायपाटन, खानपुर, अन्ता, अटरू है। हाड़ौती के बांरा जिले के शाहबाद क्षेत्र में सहरिया जनजाति निवास करती है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि हाड़ौती का पठार राजस्थान का एक विशेष भौगोलिक एवं आर्थिक प्रदेश तो है ही, साथ ही ऐतिहासिक दृष्टि से भी यह सांस्कृतिक सूत्र में बंधा हुआ है। प्राकृतिक विविधताओं ने आर्थिक विविधताओं को जन्म दिया है। कृषि प्रधान क्षेत्र होते हुए भी औद्योगिक प्रगति में अग्रणी है। जल की उपलब्धि, ऊर्जा की सुलभता, परिवहन की उत्तम सुविधा तथा मानव संसाधन के सामंजस्य से यह प्रदेश प्रगति के पथ पर अग्रसर है।

नोट– अध्याय में दिए गए जनसँख्या के आंकड़े जनसंख्या 2011 के अंतरिम आंकड़े हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राजस्थान का दक्षिणी–पूर्वी प्रदेश कहलाता है–
   (अ) मध्य अरावली (ब) हाड़ौती का पठार
   (स) बनास का मैदान (द) माही बेसिन ( )
2. कौन–सा जिला मरूस्थली प्रदेश में नहीं हैं?
   (अ) बाड़मेर (ब) बीकानेर
   (स) सिरोही (द) जैसलमेर ( )
3. भरतपुर जिला किस भौगोलिक प्रदेश में हैं?
   (अ) अरावली प्रदेश (ब) हाड़ौती प्रदेश
   (स) शुष्क प्रदेश (द) पूर्वी मैदान ( )

4. माउण्ट आबू पर स्थित झील का नाम क्या हैं?

(अ)	आना सागर	(ब)	नक्की	
(स)	पिछोला	(द)	सीली सेढ़	( )

5. प्राचीन सरस्वती नदी का अवशेष किस नदी के रूप में हैं?

(अ)	घग्घर	(ब)	चम्बल	
(स)	माही	(द)	बनास	( )

6. निम्न सें से कौन सी पर्वत श्रेणी अरावली की नहीं हैं?

(अ)	अचलगढ़	(ब)	मुकन्दरा	
(स)	कुम्भलगढ़	(द)	नाग पहाड़	( )

अति लघुत्तरात्मक प्रश्न –

1. राजस्थान में मरूस्थली प्रदेश का विस्तार कहाँ हैं?
2. हाड़ौती के पठार में कौन से जिले सम्मिलित है?
3. दक्षिणी अरावली का सर्वोच्च शिखर का क्या नाम हैं?
4. चम्बल नदी राजस्थान के कौन से जिलें में प्रवाहित होती हैं?
5. अरावली प्रदेश का सबसे बड़ा नगर कौनसा है?

लघुत्तरात्मक प्रश्न –

1. मरूस्थली प्रदेश में कौनसे जिले सम्मिलित हैं?
2. दक्षिणी अरावली के पाँच पर्वत शिखरों के नाम लिखिये।
3. पूर्वी मैदान में कृषि का क्या प्रारूप हैं?
4. अरावली प्रदेश में कौन से खनिज उपलब्ध होते हैं?
5. हाड़ौती प्रदेश में औद्योगिक विकास का क्या स्वरूप हैं?

निबन्धात्मक प्रश्न –

1. मरूस्थली प्रदेश की प्राकृतिक दशाओं का वर्णन कीजिये।
2. पूर्वी मैदान के आर्थिक स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।
3. हाड़ौती प्रदेश के आर्थिक स्वरूप का वर्णन कीजिए।
4. अरावली प्रदेश के प्राकृतिक स्वरूप को स्पष्ट कीजिये।

□□□

अध्याय – 2

राजस्थान की मध्यकालीन प्रशासनिक व्यवस्था

परिभाषा :–

एक व्यवस्थित राज्य के लिये प्रशासनिक व्यवस्था अनिवार्य तत्त्व है। मध्यकाल में राजस्थान की प्रशासनिक व्यवस्था से तात्पर्य मुगलों से सम्पर्क के बाद से लेकर 1818 ई. में अंग्रेजों के साथ हुई सन्धियों की काल अवधि के अध्ययन से है। इस काल अवधि में राजस्थान 22 छोटी–बड़ी रियासतें थी, और अजमेर मुगल सूबा था, इन सभी रियासतों का अपना प्रशासनिक तन्त्र था, लेकिन कुछ मौलिक विशेषताये एकरूपता लिये हुए भी थी। रियासते मुगल सूबे के अन्तर्गत होने के कारण मुगल प्रभाव भी था।

राजस्थान की मध्यकालीन प्रशासनिक व्यवस्था के मूलतः तीन आधार थे – प्रथम सामान्य एवं सैनिक प्रशासन, दूसरा न्याय प्रशासन, तीसरा – भू–राजस्व प्रशासन। सम्पूर्ण शासन तंत्र राजा और सामन्त व्यवस्था पर आधारित था। राजस्थान की सामन्त व्यवस्था रक्त सम्बन्ध और कुलीय भावना पर आधारित थी। सर्वप्रथम कर्नल जेम्स टॉड ने यहाँ की सामन्त व्यवस्था के लिये इंगलैण्ड की फ्यूडल व्यवस्था के समान मानते हुए उल्लेख किया है। इसे विद्वानों ने केवल राजनीतिक शब्दावली के रूप में नहीं लिया वरन् सम्पूर्ण अर्थ में सामन्त व्यवस्था को समझना आवश्यक समझा, इस दृष्टि से अब राजस्थान ही नहीं वरन् भारत के संस्थागत इतिहास के अध्ययन का नया क्षेत्र खुल गया। राजस्थान की सामन्त व्यवस्था पर व्यापक शोध कार्य के बाद यह स्पष्ट हो गया कि यहाँ की सामन्त व्यवस्था कर्नल टॉड़ द्वारा उल्लेखित पश्चिम के फयूड़ल व्यवस्था के समान स्वामी (राजा) और सेवक (सामन्त) पर आधारित नहीं थी राजस्थान की सामन्त व्यवस्था रक्त सम्बन्ध एवं कुलीय भावना पर आधारित प्रशासनिक और सैनिक व्यवस्था थी।

राजस्थान में सामन्त व्यवस्था का मूल तत्व था शासक पिता की मृत्यु के बाद बड़ा पुत्र राजा बनता, राजा अपने छोटे भाइयों को जीवन यापन के लिये भूमि आंवटित करता, भाई–बन्धु को प्रदत्त उक्त भूमि का स्वामी सामन्त कहलाता था। मध्यकाल में भू–स्वामी सामन्त को सामन्त जागीरदार कहा जाने लगा, सामन्त जागीर पर सामन्त का जन्मजात अधिकार माना जाता था, अर्थात राजा सामन्त जागीर को खालसा अर्थात केन्द्र की भूमि में पुनः सम्मिलित नहीं कर सकता था। सामन्त व्यवस्था को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है कि – सामन्त व्यवस्था रक्त सम्बन्ध पर आधारित कुलीय प्रशासनिक और सैनिक व्यवस्था थी, जिसमें राजा समकक्षों में प्रमुख होता था। राज्य को एक परिवार और राजा को उसका प्रमुख मानते हुए, सामन्त परिवार के सदस्य होने के नाते उसकी सुरक्षा और संचालन का उत्तरदायित्व राजा और सामन्त सामूहिक रूप से मानते थे। राजा और सामन्तों के मध्य भाईचारे का सम्बन्ध था।

सामन्त व्यवस्था का प्रारम्भ :–

सामन्त व्यवस्था कब प्रारम्भ हुई, इस सम्बन्ध में अबतक कोई निश्चित मत नहीं बन पाया है। प्रो. रायचौधरी ने इसका उदयकाल छःठी शताब्दी माना हैं, प्रो. डी.डी. कौशाम्बी ने गुप्त काल के बाद सामन्त व्यवस्था का विकास काल माना है, प्रो. आर.एस. शर्मा ने चौथी शताब्दी में सामन्त व्यवस्था का प्रारम्भ होने से सम्बन्धित तर्क देते हुए इसे ग्याहरवीं और बारहवीं शताब्दी में विकसित हुआ स्वीकार किया है, रूसी इतिहासकार कोवालस्वी ने इसे मुस्लिम आक्रमण के बाद विकसित व्यवस्था माना है। अधिकांश

इतिहासकारों की मान्यता है कि सामन्त व्यवस्था सम्भवतः गुप्तकाल में प्रारम्भ हुई, लेकिन राजस्थान में इसका विकसित एवं स्पष्ट स्वरूप राजपूतों का शासन स्थापित होने के साथ प्रारम्भ हो गया राजस्थान भू–भाग पर राजपूतों की विभिन्न शाखाओं– चौहान, गुहिल–सिसोदिया, राठौड़, कछवाह, भाटी, हाड़ा आदि ने अपना राज्य स्थापित किया, जो उनकी रियासतें कहलाई अपनी रियासतों की सुरक्षा और सामान्य प्रशासन व्यवस्था संचालन हेतु शासक ने अपने परिवारजनों, कुलीय सम्बन्धियों तथा विश्वस्त सेनानायकों और अधीनस्थों को जागीरें देकर अपना सामन्त बना लिया, कालान्तर में यह रक्त सम्बन्ध कुलीय परम्परा बनगई। साथ ही कई रियासतों में यह परम्परा भी प्रचलित हो गई कि सामन्त को राजा खालसा क्षेत्र जो कि राजा के द्वारा प्रशासित एवं नियंत्रित क्षेत्र था, उस सीमान्त क्षेत्र की भूमि आंवटित की जाती थी, जिससे बाहरी आक्रमण के समय खालसा क्षेत्र की सुरक्षा का उत्तदायित्व निभाये। राजा के सहयोगी यह कुलीय भू–स्वामी मध्यकाल में 'सामन्त जागीर' कहलाने लगी। जागीर फारसी शब्द है, प्रो. इरफान हबीब ने जागीर शब्द को इस प्रकार परिभाषित किया है – "जागीर दो शब्द जय+गीर का सयुक्त रूप है, जिसका शाब्दिक अर्थ है राज्य द्वारा प्रदत्त भूमि का वह भाग जिससे उस भू–क्षेत्र से राजस्व वसूल करने का वैधानिक अधिकारी होता था।"

सामन्त व्यवस्था का स्वरूप :–

कर्नल जेम्स टॉड ने इंग्लैण्ड की फ्यूडवल व्यवस्था के समान ही राजस्थान की सामन्त व्यवस्था को मानते हुए इसे भी इंग्लैण्ड के समान फयूडवल व्यवस्था माना है, लेकिन राजस्थान की सामन्त व्यवस्था का स्वरूप पश्चिमी व्यवस्था से पूर्णतः भिन्न है। पश्चिम में राजा और सामन्त के मध्य स्वामी और सेवक का सम्बन्ध होता हैं इसके विपरीत राजस्थान के भाई–बन्धु का सम्बन्ध होता हैं, यहाँ राजा समकक्षों में प्रमुख होता है राजा राज्य का सर्वोच्च सत्ता का केन्द्र होता था और उसके बाद सामन्तों का समूह होता, जो कि कुलीय व्यवस्था से संगठित होता था, राजा राज्य का प्रधान था तो सामन्त अपनी जागीर में प्रमुख थे, सामन्त राजनीतिक और सामाजिक मामलों में समानता का दावा करते थे। इसप्रकार राजस्थान में प्रचलित राजा और सामन्त शासन व्यवस्था का प्राथमिक स्वरूप पदसोपान व्यवस्था पर आधारित नहीं था बल्कि एक टेन्ट के समान स्तम्भों पर आधारित व्यवस्था थी, जिसमें राजा मध्य में स्थित मुख्य स्तम्भ होता था। टेन्ट के एक भी स्तम्भ के कमजोर होने पर व्यवस्था बिगड़ जाती है उसी प्रकार सामन्त और शासक के सम्बन्ध परस्पर निर्भर थे।

सामन्त प्रशासन स्वरूप की विशेषतायें :–

राजा से जन्मजात अधिकार के रूप में प्राप्त भूमि के साथ ही सामन्त के विशेषाधिकार एवं उत्तरदायित्व भी निर्धारित हो जाते थे। इस व्यवस्था की निम्न विशेषताये थी :–

(1) यह रक्त सम्बन्ध पर आधारित सगोत्रिय कुलीय व्यवस्था थी।

(2) राजा महत्त्वपूर्ण प्रशासनिक पदों पर सामन्तो को नियुक्त करता था।

(3) बिना सामन्तों से परामर्श किये राजा कोई भी महत्त्वपूर्ण प्रशासनिक, सैनिक एवं नीतिगत निर्णय नहीं ले सकता था।

(4) राजा और सामन्त के सम्बन्ध स्वामी और सेवक के नहीं होते थे, इस तथ्य को सम्मान देते हुये यह आचार सहिंता रूपी परम्परा प्रचलित थी कि शासक सामन्त को काकाजी एवं भाई जी सम्बोधित करें, इसी प्रकार सामन्त भी राजा को बापजी सम्बोधित करते थे।

(5) सामन्त का उत्थान और पतन राजा के साथ ही होता था। इस दृष्टि से सामन्त किसी अन्य राज्य

से युद्ध एवं सन्धि का निर्णय नहीं कर सकता था।

(6) राज्य की सुरक्षा के लिये सामन्त को एक निश्चित सेना रखनी होती थी यह कार्य कुलीय भावना के आधार पर ही की जाती थी वे अपनी पैतृक सम्पति की रक्षा करना अपना उत्तरदायित्व समझते थे।

(7) राजा के उत्तराधिकारी के निर्णय में सामन्त निर्णायक भूमिका निभाते थे, कई बार शासक द्वारा मनोनीत उत्तराधिकारी के सामन्तों को स्वीकार नहीं किया और उसे बदल दिया। यहाँ जयेष्ठ पुत्र को उत्तराधिकारी बनाने की परम्परा थी लेकिन ऐसे उदाहरण मिलते हैं जब सामन्तो को जयेष्ठ पुत्र की योग्यता और नेतृत्व क्षमता पर संदेह हो तो वे योग्य पुत्र या भाई को सिंहासन पर बैठा देते थे।

(8) सम्मान और कर्तव्य पर आधारित प्रशासनिक व्यवस्था थी राजा को सामन्तो के विशेषाधिकारों का सम्मान करना होता था और सामन्तों के राज्य और शासक के प्रति निर्धारित कर्तव्यों का पालन करना होता था।

(9) मध्यकाल में सामन्त व्यवस्था में श्रेणी व्यवस्था भी प्रारम्भ हुई।

मध्यकाल में सामन्त व्यवस्था एवं प्रशासन :—

राजस्थान की सामन्त व्यवस्था पर मध्यकाल में कुछ परिवर्तन दिखाई देने लगते हैं। 1562 में मुगल सम्राट अकबर का राजपूतों से सम्बन्ध एवं सन्धियों का युग प्रारम्भ होता है, उक्त नये सम्पर्क ने राजस्थान की विभिन्न रियासतों की प्रशासनिक व्यवस्था जो कि सामन्त व्यवस्था के माध्यम से थी वह प्रभावित हुई। इसका मूल कारण था कि मुगलों से सन्धि के बाद युद्ध की स्थिति लगभग समाप्त हो गई अतः अब शासन की सैनिक सहयोग के लिये सामन्तों पर निर्भरता कम हो गई, इसके अतिरिक्त मुगलों से सन्धि के बाद शासक मुगल मनसबदार बन गये अतः उन्हे मुगल संरक्षण प्राप्त था।

सहयोगी की स्थिति में परिवर्तन :—

उक्त परिवर्तित स्थिति के कारण सामन्त प्रशासनिक व्यवस्था पर एक प्रमुख प्रभाव यह पड़ा कि सामन्त की स्थिति सहयोगी के स्थान पर सेवक की हो गई। यद्यपि सैद्धान्तिक रूप से शासक समकक्षों में प्रमुख ही था, लेकिन व्यावहारिक रूप में स्थिति बदल गई, अब राजा स्वामी के समान व्यवहार करने लगा। अब तक सामन्त राजा की मृत्यु के बाद उसके उत्तराधिकारी के मामले में निर्णायक भूमिका निभाते थे, लेकिन अब स्थिति बदल गई, मध्यकाल में मेवाड़ राज्य को छोड़कर अन्य रियासते जो मुगल मनसबदार थे, उन रियासतों के उत्तराधिकारी मामलों में मुगल शासक रुचि लेने लगे, विवादित स्थिति होने पर मुगल शासक अपने विवेक से वहाँ राजा बनाते थे ऐसे नये शासक का सामन्त विरोध नहीं कर सकते थे, इस प्रकार जो सामन्त व्यवस्था एक टेंट का स्परूप लिये हुए थी, वहीं अब मध्यकाल में मनसबदारी व्यवस्था से प्रभावित होकर पदसोपान व्यवस्था के निकट पहुँच गई, यद्यपि मूल स्वरूप यथावत् बना रहा।

सेवाओं के साथ कर व्यवस्था:—

परम्परागत शासन व्यवस्था के अनुसार सामन्त युद्ध एवं शान्ति के समय राजा को अपनी चाकरी अर्थात् सेवायें देता था, लेकिन उसके साथ कोई 'कर' सम्बन्ध नहीं था। मध्यकाल में बड़ा प्रशासनिक परिवर्तन हुआ, नई व्यवस्था के अनुसार सेवाओं के साथ कर व्यवस्था निर्धारित कर दी गई। सामन्त शासक को पट्टा रेख और भरतु रेख देने लगा, पट्टा रेख से तात्पर्य था राजा द्वारा प्रदत्त जागीर

के पट्टे में उल्लेखित अनुमानित राजस्व तथा भरत रेख से तात्पर्य था राजा द्वारा सामन्त को प्रदत्त जागीर के पट्टे में उल्लेखित रेख के अनुसार राजस्व भरता (जमा करता) था। इन दो प्रमुख करों के अतिरिक्त अन्य कई कर लगाये प्रत्येक राज्य में अलग–अलग कर व्यवस्था थी, जिनमें प्रमुख कर उत्तराधिकार शुल्क था। इस प्रकार मध्यकाल में मुगल मनसब प्रशासन व्यवस्था से प्रभावित होकर सैनिकों का सैनिक बल उनकी आय के अनुसार निर्धारित कर दिया गया, इसका परिणाम यह हुआ कि शासक सामन्तों पर अपनी सर्वोच्चता स्थापित करने की प्रक्रिया में आगे बढ़ गये।

रेख :–

रेख से तात्पर्य जागीर की अनुमानित वार्षिक राजस्व से था, जिसका उल्लेख शासक प्रदत्त जागीर के पट्टे में करता था रेख का दूसरा अर्थ सैनिक कर से भी लिया जाता है। रेख द्वारा निर्धारित आय के मापदण्डों के आधार पर ही राज्य शुल्क का हिसाब किताब रखता था, रेख के आधार पर ही सामन्त से उत्तराधिकार शुल्क, सैनिक सेवा, न्योता शुल्क आदि का निर्धारण होता था। रेख न तो नियमित रूप से प्रतिवर्ष वसूल की जाती थी और न ही इसकी दर निश्चित थी।

उत्तराधिकारी शुल्क :–

सामन्त व जागीरदार की मृत्यु के बाद उक्त जागीर के नये उत्तराधिकारी से यह कर वसूल किया जाता था। अलग अलग रियासतों में उत्तराधिकारी कर का नाम अलग था, जोधपुर में पहले पेशकशी और बाद में हुक्मनामा कहलाया, मेवाड़ और जयपुर में नजराना, कुछ अन्य रियासतों में कैद खालसा और तलवार बंधाई कहलाते थे। जैसलमेर एकमात्र ऐसी रियासत थी जहाँ उत्तराधिकारी शुल्क नहीं लिया जाता था। उत्तराधिकारी शुल्क एक प्रकार से उक्त जागीर के पट्टे का नवीनीकरण करना था जागीरदार की मृत्यु की सूचना पाते ही राजा अपने दीवानी अधिकारी को कुछ कर्मचारियों के साथ उस जागीर में भेजता यदि उत्तराधिकारी शुल्क इन्हे जमा नहीं कराया जाता तो जागीर जब्त करने का निर्देश दीवान को दिया जाता था। कुछ अन्य कर भी थे जैसे नजराना कर यह राजा के बड़े पुत्र के प्रथम विवाह पर सामन्त एवं अन्य जागीरदार नजराना देते, न्योत कर यह राजकुमारियों के विवाह पर आमंत्रित करने पर था, तीर्थयात्रा कर यह राजा के तीर्थयात्रा पर जाने के समय भेंट आदि दी जाती थी। इसप्रकार की कर व्यवस्था से एक और शासक और सामन्त सम्बन्धों पर प्रभाव पड़ा क्योंकि यह व्यवस्था शासक की सर्वोच्चता स्थापित करने में सहायक थी दूसरा करों की संख्या निरन्तर बढ़ने से इसका अप्रत्यक्ष प्रभाव जनसमुदाय पर पड़ा सामन्त एवं जागीरदार जनता से अधिक लगान वसूली करने लगें।

सामन्तों की सैनिक सेवा :–

परम्परागत रूप से सामन्त राजा को सैनिक सेवायें देते थे, यह दो प्रकार की थी– एक युद्ध के समय, दूसरा शान्ति के समय। युद्ध के समय राजा सामन्त को खास रूक्का भेजकर जमीयत (सेना) सहित सेवा में उपस्थित होने के लिये कहता था। शान्ति के समय वर्ष में एक बार निश्चित अवधि के लिये अपनी जमीयत (सेना) के साथ उपस्थित होना, यह उसकी जागीर के पट्टे में निर्धारित 'रेख' पर आधारित था। शान्ति के समय शासक की सेवा में उपस्थित होकर वह शासक को राजकार्य में सहयोग देते थे। निश्चित अवधि के अतिरिक्त कुछ विशेष अवसर एवं त्यौहार जैसे– दशहरा, अक्षय तृतीया आदि पर भी दरबार में उपस्थित होना पड़ता था, तथा राज परिवार की महिलाये आदि के तीर्थयात्रा या अन्य यात्रा पर जाने पर किसी भी सामन्त को उनकी सुरक्षा का उत्तरदायित्व दिया जाता था। सामन्त को कुछ कार्यों के लिये शासक से पूर्व अनुमति लेनी होती थी विशेषकर अपने पुत्र एवं पुत्री के विवाह की एवं अपनी जागीर में

दुर्ग एवं परकोटा बनवाने की।

सामन्तों की श्रेणियाँ :–

मध्यकाल में सामन्तों की श्रेणियाँ एवं पद प्रतिष्ठा भी निर्धारित कर दी गई। यह व्यवस्था मुगल मनसबदारी व्यवस्था से प्रभावित थी लेकिन पूर्णतः उसके अनुसार नहीं थी, मनसबदारी व्यवस्था नौकरशाही व्यवस्था थी, जिसका निर्धारण आय के आधार पर होता था, इसके विपरीत राजस्थान में सामन्तों की श्रेणियों का निर्धारण कुलीय प्रतिष्ठा एवं पद के अनुसार होता था। इस व्यवस्था से मेवाड़ रियासत भी अछूती नहीं रहीं, प्रत्येक राज्य की श्रेणी विभाजन की व्यवस्था अलग–अलग थी। मारवाड़ में चार प्रकार की श्रेणियाँ थी – राजवी, सरदार, गनायत ओर मुत्सद्दी। राजवी राजा के तीन पीढियों तक के निकट सम्बन्धी होते थे, उन्हे रेख, हुक्मनामा कर और चाकरी से मुक्त रखा जाता था। मेवाड़ में सामन्तों की तीन श्रेणियाँ होती थी जिन्हे उमराव कहा जाता था, प्रथम श्रेणी के सामन्त सोलह, दूसरी श्रेणी में बत्तीस और तृतीय श्रेणी के सामन्त गोल के उमराव कई सौ की संख्या में होते थे। प्रथम श्रेणी के 16 उमरावो में सलूम्बर के सामन्त का विशेष स्थान होता था, महाराजा की अनुपस्थिति में नगर का शासन–प्रशासन और सुरक्षा का उत्तरदायित्व उसी पर होता था। जयपुर राज्य में महाराजा पृथ्वीसिंह के समय सामन्तों श्रेणियाँ का विभाजन किया, यह उनके 12 पुत्रो के नाम से स्थाई जागीरे चली, जिन्हे कोटड़ी कहा जाता था। कोटा में राजवी कहलाते थे, राजवी सरदारों की संख्या तीस थी। इनमें सबसे अधिक संख्या हाड़ा चौहानों की होती थी। बीकानेर में सामन्तों की तीन श्रेणियाँ थी प्रथम श्रेणी में वंशानुगत सामन्त जो राव बीका के परिवार से थे, दूसरी श्रेणी अन्य रक्त सम्बन्धी वंशानुगत एवं तृतीय श्रेणी में अन्य राजपूत थे, जिनमें बीकानेर में राठोड़ शासन स्थापित होने से पूर्व शासक परिवार के सदस्य थें एवं भाटी और सांखला वंश के थे। जैसलमेर में भाटी रावल हरराज के शासनकाल में सामन्तों में श्रेणी व्यवस्था प्रारम्भ हुई, दो श्रणियाँ थी एक डावी (बाई) दूसरी जीवणी (दाई)।

सामन्तों की अन्य श्रेणियाँ :–

इनमें दो मुख्य थे – एक भौमिया सामन्त और दूसरा ग्रासिया सामन्त, भौमिया वे लोग कहलाते थे, जिन्होने सीमा या गाँव की रक्षा के लिये बलिदान दिया हो इन्हें उनकी जागीर से बेदखल नहीं किया जा सकता था। भौमिया सामन्त दो श्रेणियों में विभक्त थे एक मोटे दर्जे के भौमिया इनके ऊपर कोई दायित्व नहीं था। दूसरा छोटे भौमिया – इन्हे किसी भी प्रकार का लगान राज्य को नहीं देना पड़ता था, लेकिन इन्हे राज्य प्रशासन को कुछ सेवायें देनी पड़ती थी उनमें मुख्य सेवायें थी– डाक पहुँचाना, आवश्यक सहायता पहुँचाना, खजाने की सुरक्षा करना और अधिकारियों के सरकारी यात्रा के समय उनके ठहरने और खाने–पीने की व्यवस्था करना आदि ग्रासिया अपनी सैनिक सेवा के बदले भूमि के ग्रास अर्थात् उपज का उपयोग करते थे, यदि ग्रासियाँ अपनी सेवा में किसी भी प्रकार की ढील दिखाते तो उन्हे ग्रास सामन्त से बेदखल किया जा सकता था।

सामान्य प्रशासन :–

प्रशासन को चुस्त दुरुस्त बनाने की दृष्टि से मुगल शासन प्रणाली की कुछ व्यवस्थाओं को राजस्थान में भी लागू किया गया। रियासतों ने अपने प्रशासन को परगनों, तहसीलों और ग्रामों जिसे तपो भी कहते थे, अंतिम इकाई गाँव अर्थात मोजा आदि में विभाजित किया, विभिन्न इकाइयों पर मुत्सददी अर्थात अधिकारी नियुक्त किये, यह एक नई नौकरशाहीं विकसित हुई धीरे–धीरे यह मुत्सददी

(अधिकारी) वर्ग भी वंशानुगत हो गया मुत्सददी वर्ग को वेतन के रूप में जागीर प्रदान की जाती थी, लेकिन यह जागीर वंशानुगत नहीं होती थी वरन् मुत्सददी की मृत्यु के बाद जागीर खालसा कर दी जाती थी। मध्यकालीन नौकरशाही के लिये कोई निश्चित नियम नहीं थे, शासक इन अधिकारियों से परामर्श किया करता था।

केन्द्रीय शासन :–

राजा– सम्पूर्ण शक्ति का सर्वोच्च केन्द्र था, लेकिन पिता तुल्य शासन कर्ता एवं मंत्री परिषद् से परामर्श लेता था। राजा के प्रशासनिक कार्यों को सम्पादित करने के लिये मुत्सददी वर्ग की पदसोपान व्यवस्था थी–

प्रधान– राज के बाद यह प्रमुख होता था तथा राजा की अनुपस्थिति में राजकार्य देखता था। विभिन्न रियासतों में प्रधान के अलग–अलग नाम थे– कोटा और बूँदी में दीवान, मेवाड़, मारवाड़ और जैसलमेर में प्रधान, जयपुर में मुसाहिब और बीकानेर में मुखत्यार कहते थे। आवश्यक नहीं था कि सभी रियासतों में यह पद राजपूतों को ही दिया जाय। जाट शासित भरतपुर रियासत में राजा सूरजमल (1756–25 दिसम्बर 1763ई.) ने नया प्रशासनिक ढांचा स्थापित किया, शासकीय पदों के लिये धर्म और जाति को आधार नहीं माना, सूरजमल एक योद्धा के साथ–साथ योग्य प्रशासक एवं कृषि विशेषज्ञ भी था। भरतपुर में राजा के बाद प्रधान को मुखत्यार कहते थे। रियासतों में अन्य पदसोपान व्यवस्था निम्न थी–

दीवान एवं बक्षी– अधिकाशतः जहाँ तीन प्रमुख थे वहाँ बक्षी होते थे; यह सेना विभाग का प्रमुख होता था, जोधपुर में फौज बक्षी भी होता था। बक्षी सेना विभाग के अतिरिक्त रसद व्यवस्था, सेना का अनुशासन एवं प्रशिक्षण आदि देखता था।

नायब बक्षी– यह सेना और किलों पर होने वाले खर्च का विवरण रखता था और सामन्तों की 'रेख' का भी हिसाब रखता था।

शिकदार– यह मुगल प्रशासनिक व्यवस्था के कोतवाल के समान होता था, यह गैर सैनिक कर्मचारियों के रोजगार से सम्बंधित कार्य देखता था।

न्याय व्यवस्था :–

परम्परागत न्याय व्यवस्था थी, राजा सर्वोच्च न्यायाधीश होता था, सामन्त अपनी जागीर में प्रमुख न्यायाधीश की स्थिति रखता था। इसके अतिरिक्त गाँवों में ग्राम पंचायते होती थी। खालसा क्षेंत्र में न्याय का कार्य हाकिमों के द्वारा किया जाता था, जागीर में जागीरदार न्यायाधिकारी होता था। जातिय पंचायते भी होती थी। छोटी चौरियों और सामाजिक अपराध सम्बन्धित झगड़े जाति पंचायत, ग्राम पंचायत द्वारा सुलझालिये जाते थे, वहाँ नहीं सुलझने पर हाकिम और जागीरदार के न्यायालय में जाते, भूमि विवाद सम्बन्धित झगड़े भी आवश्यकता पड़ने पर हाकिम और जागीरदार के न्यायालय में जाते थे। बड़े अपराध एवं मृत्यु दण्ड सम्बन्धित विवादों में अन्तिम निर्णय राजा का होता था। न्याय का आधार परम्परागत सामाजिक एवं धार्मिक व्यवस्था थी। मुकदमों का कोई लिखित रिकार्ड नहीं रखा जाता था। गवाही सम्बन्धित कोई पृथक अधिनियम नहीं था। डॉ. एम.एस. जैन ने लिखा है कि "अपराध को व्यक्ति के विरुद्ध अपराध माना जाता था, समाज के विरुद्ध नहीं। कानून के समक्ष सब बराबर नहीं थे। एक ही अपराध के लिये दण्ड देते समय दोनो अपराधी और जिसके विरुद्ध अपराध किया गया की सामाजिक स्थिति देखकर ही दण्ड दिया जाता था।" न्याय व्यवस्था के अनुसार सामन्त को 'सरणा' (शरणागत) का अधिकार था, यदि कोई सामन्त की शरण में चला जाय तो उसकी रक्षा करना सामन्त की प्रतिष्ठा का प्रश्न बन जाता था, कई बार अपराधी

भी सामन्त की शरण में चले जाते थे, जिसका समाज और न्याय व्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता। मध्यकालीन न्याय व्यवस्था की मुख्य विशेषता न्याय का सस्ता होना और शीघ्र होना था। उस समय दण्डविधान भी कठोर नहीं थे।

भू–राजस्व प्रशासन :–

भूमि एवं भू–स्वामित्व–

प्रशासन के तीन प्रमुख स्तम्भ थे सैनिक व सामान्य प्रशासन दूसरा न्याय व्यवस्था और तीसरा भू–राजस्व व्यवस्था, सैनिक और न्याय व्यवस्था के समान ही भू–राजस्व व्यवस्था में भी सामन्तों की भूमिका महत्त्वपूर्ण थी। मध्यकाल में कृषि ही आय का मुख्य स्रोत था, इस दृष्टि से भूमि और उस पर उत्पादित फसल पर लगान वसूल करने वाली संस्था का विशेष महत्व था। भूमि दो भागों में विभाजित थी एक खालसा भूमि–जो कि सीधे शासक के नियंत्रण में होती थी, जिसे केन्द्रीय भूमि भी कह सकते है। दूसरी जागीर भूमि यह चार प्रकार की थी। (1) सामन्त जागीर (2) हुकूमत जागीर (3) भौम की जागीर (4) सासण जागीर भौम की जागीर राज्य को अपनी सेवायें देते थे, और कुछ निश्चित कर देते थे। सासण जगीर– धर्मार्थ, शिक्षण कार्य, साहित्य लेखन कार्य चारण व भाट आदि को अनुदान स्वरूप दी जाती यह माफी जागीर भी कहलाती थी क्योंकि यह कर मुक्त जागीर होती थी। हुकूमत जागीर– यह मुत्सदद्धियों को दी जाती थी परगने के हाकिम का उत्तरदायित्व था कि वह लगान राजकोष में जमा कराये यह वेतन के रूप में दी गई जागीर होती थी, जो उस जागीरदार की मृत्यु के बाद खालसा कर दी जाती थी। सामन्त जागीर जन्मजात जागीर थी, इसका लगान सामन्त द्वारा वसूल किया जाता था "भूमि दो प्रकार की होती थी – कृषि भूमि और चरनोता भूमि। कृषि भूमि वह थी जो कि खेती योग्य हो, और चरनोता भूमि पर पशुओं के लिये चारा उगाया जाता था, जिसे आधुनिक राजस्व भाषा में चरागाह या गोचर भूमि कहा जाता है। वस्तुतः चरनोत भूमि सार्वजनिक भूमि थी।"

किसान / कृषक :–

कृषक मुख्यतः दो प्रकार के होते थे– बापीदार और गैरबापीदार, बापीदार किसान को खुदकाश्तकार भी कहते थे, यह वह किसान होते थे जो खेती की जाने वाली भूमि का स्थाई स्वामी होता था, वह जोत के लिये आवश्यक सामग्री जुटा सके, किसान लम्बे समय से वहाँ रह रहा हो। गैरबापीदार को शिकमी काश्तकार भी कहते थे, इन्हे वंशानुगत अधिकार प्राप्त नहीं थे भूमि के स्वामी नहीं थे, ये खेतीहर मजदूर थे। बापीदार किसानों को कई रियासतें थी –

– उनके खेत की लकड़ी और कुओं पर उनका स्वामित्व था,

– कर निर्धारण के समय यह ध्यान रखा जाता था कि कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिये बापीदार ने किन साधनों का उपयोग किया है।

– बापीदार किसानों के भू–स्वामित्व को तत्काल समाप्त नहीं किया जा सकता था, यदि दुर्भिक्ष के समय किसान गाँव छोड़कर कुछ अवधि के लिये बाहर चला जाता था तब भी भूमि किसान की ही रहती थी, पुनः लौटने पर किसान अपनी भूमि को जोत सकता था। स्पष्ट है कि भूमि पर किसानों का स्वामित्व था। राजस्थान में प्रचलित एक कहावत का कर्नल जेम्स टॉड ने उल्लेख कर शासक–कृषक भू–राजस्व पर प्रकाश डाला है, कहावत थी– "भोग रा धणी राज हो, भोम रा धणी मा छौ।" अर्थात भूमि (भौम) को मालिक जोतने वाला और राजा राजस्व (भोग) का अधिकारी। किसानो को दी जाने वाली भूमि का पट्टा जागीरदार के रजिस्टर में दर्ज रहता था, जिसे दाखला कहते थे।

भरतपुर रियासत में राजा सूरजमल के समय कृषि की उन्नति हेतु दृढ़ नीति निर्धारित की गई, फलस्वरूप राजा सूरजमल के शासन के अन्तिम वर्ष 1763 ई. में भरतपुर राज्य की कृषि से आय 17.5 लाख रुपये प्रतिवर्ष थी। कृषि से होने वाली आय में से बड़ी धन राशि उसने शिक्षा और साहित्य के विकास में लगाया। राजा सूरजमल की मान्यता थी कि यदि राज्य आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न एवं सुदृढ़ है तो खराब से खराब समय में भी राज्य मजबूत बना रह सकता है। राजा सूरजमल द्वारा स्थापित मजबूत कृषि नीति भरतपुर की प्रगति में सहायक सिद्ध हुई।

लगान निर्धारण :–

भूमि स्वामित्व के बाद उस पर लगान वसूली करना महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व था, भू–राजस्व को लगान, भोग हांसिल, और भोज आदि कहा जाता था। लगान निर्धारण अलग–अलग रियासतों में भिन्नता लिये हुए थे, उस रियासत के सामन्त और जागीरदार उसी रियासत की परम्परा के अनुसार लगान निर्धारण करते थे प्रचलित विभिन्न व्यवस्थाओं में मुख्यतः तीन प्रकार की कर निर्धारण व्यवस्था उभरती है :– प्रथम भूमि का स्वरूप यह दो भागो में विभक्त थी – बारानी अर्थात् बरसात के पानी से सिंचित भूमि ओर उन्नाव अर्थात् जो भूमि तालाब, कुओं, बावड़ियों आदि से सिंचित की जाती हो। दूसरा निर्धारण तत्त्व फसल की विशेषता थी, दो बातों को ध्यान में रखकर राजस्व निर्धारण किया जाता था बाजार भाव और भूमि की उत्पादकता की क्षमता, तीसरा काश्तकार की जाति इस सम्बन्ध में यह मान्यता थी कि राजपूतो और विश्नोइयों की अपेक्षा जाटों से अधिक कर लिया जाता था। राजपूत, ब्राह्मण और महाजन किसानों को भू–राजस्व में विशेष छूट दी जाती थी। खरीफ और रबी की फसलों पर भी लगान की दरे भिन्न भिन्न होती थी, लगान निर्धारण एवं वसूली के समय पटेल या चौधरी की भूमिका महत्वपूर्ण होती थी। यह सरकार और कृषक के मध्य मध्यस्तर के रूप में निगरानी में कार्य सम्पादित कराते थे, पटेल या चौधरी सरकारी कर्मचारी नहीं होते थे।

लगान वसूली की विधि :–

शासक, सामन्त, जागीरदार एवं अधिकारी कृषकों से लगान वसूली के तीन प्रकार की विधि को अपनाते थे :–

(1) लाटा या बटाई विधि :– इसमें फसल कटने योग्य होने पर लगान वसूली के लिये नियुक्त अधिकारी की देखरेख में फसल की कटाई की जाती थी।

– धान साफ होने के बाद फसल में से राजस्व के लिये दिये जाने वाला भाग तोल कर अलग कर दिया जाता।

(2) कून्ता विधि :– इस विधि के अनुसार खड़ी फसल को देखकर अनुमानित लगान निर्धारित करना। कून्ता विधि में तोल या माप नहीं किया जाता था।

(3) अन्य प्रणाली :– इसे तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है– मुकाता, डोरी और घूघरी। डोरी मुकाता में कर निर्धारण एक मुश्त का निर्धारण करता था नकद कर भी लिया जाता था। डोरी कर निर्धारण में नापे गये भू–भाग का निर्धारण करके कर वसूल करना। घूघरी कर विधि के अनुसार शासक, सामन्त एवं जागीरदार किसान को जितनी घूघरी अर्थात् बीज देता था, उतना ही अनाज लगान के रूप में लेता था। दूसरी घूघरी विधि के अनुसार प्रति कुआं या खेत की पैदावर पर निर्भर था।

मध्यकालीन भू–राजस्व में किसान पूर्ण सुरक्षित स्थिति में थे, ये आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास का युग माना जाता है क्योकि किसान भू–स्वामी था, अकाल के समय उसे लगान से छूट मिलती थी,

पशुओं के लिये चरागाह भूमि छोड़ी जाती थी, उस पर सामूहिक अधिकार होता, शासक उसे खालसा नहीं कर सकता था, और चरनोत भूमि पर शिकार करने का अधिकार किसी को नहीं था, भूमि एवं लगान सम्बन्धित विवाद ग्राम पंचायत में सुलझाये जाते थे। मध्यकालीन सामन्तवाद पर आधारित यह प्रशासनिक व्यवस्था ब्रिटिश सर्वोच्चता काल में नई प्रशासनिक संस्थाओं के उदय के साथ कमजोर होती गई और 1947 में स्वतन्त्र भारत में राजस्थान के एकीकरण के बाद मध्यकालीन प्रशासनिक व्यवस्था समाप्त हो गई।

अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सामन्त व्यवस्था मूलतः थी–
   (अ) वैवाहिक संस्था (ब) सांस्कृतिक संस्था
   (स) प्रशासनिक सैनिक व्यवस्था (द) सामाजिक संगठन
2. सामन्त जागीर पर सामन्त का अधिकार था।
   (अ) जन्मजात (ब) दान में प्राप्त
   (स) किराये दार (द) वेतन के रूप में
3. सामन्त प्रशासन का मूल स्वरूप था।
   (अ) टेन्ट के समान (ब) घर के समान
   (स) पदसोपान (स) पीरामिड़ के समान
4. राजा के उत्तराधिकारी निश्चित करने में निर्णायक भूमिका निभाते थें।
   (अ) भौमिया (ब) मुत्सद्दी
   (स) सामन्त (द) चारण–भाट
5. एकमात्र रियासत जहाँ उत्तराधिकारी शुल्क नहीं था।
   (अ) बीकानेर (ब) जैसलमेर
   (स) जोधपुर (द) जयपुर
6. खालसा में न्याय का कार्य करते थे।
   (अ) हाकिम (ब) जागीरदार
   (स) भौमिया (द) मुत्सद्दी
7. बापीदार किसान–
   (अ) अपने खेत के स्वामी (ब) खेत में सेवक
   (स) खेत पर किरायेदार (द) चौकीदार

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न :–

1. खालसा भूमि से क्या तात्पर्य है?
2. मध्यकाल में सामन्त जागीर किसे कहा जाता था?
3. राजा की सामन्तों के मध्य क्या स्थित थी?
4. राजा किसके परामर्श के बिना कोई भी महत्वपूर्ण निर्णय नहीं ले सकता था?
5. मुगल मनसबदारी स्वीकार करने के बाद रियासतो में उत्तराधिकारी विवाद होने पर कौन मुख्य भूमिका निभाते थे?
6. सामन्त द्वारा राजा को दी गई सेवाओं को कहते थे?
7. पट्टा रेख से तात्पर्य है?
8. भरतु रेख से तात्पर्य है?

9. नजराना कर क्या था?
10. मेवाड़ में सामन्त की कितनी श्रेणियाँ थी ?
11. कोटा में सामन्त को कहते थे।
12. मुत्सद्दि व्यवस्था क्या थी ?
13. चरनोता भूमि से क्या तात्पर्य हैं।
14. गैर बापीदार काश्तकार से क्या तात्पर्य है।
15. लगान वसूली में कून्ता प्रणाली क्या थी।
16. कौनसी भूमि पर शिकार करने का अधिकार नहीं था?
17. डोरी कर निर्धारण क्या हैं?
18. सरणा (शरण) देने का अधिकार किसे था?

लघूत्तरात्मक प्रश्न :—

1. मध्यकालीन प्रशासन के मूलतः तीन आधार क्या थे?
2. जागीर से क्या तात्पर्य है?
3. सामन्त व्यवस्था का मूल स्वरूप क्या था?
4. आचार सहिंता के अनुसार राजा सामन्तों को क्या सम्बोधित करता था?
5. मुगलों से सन्धि के बाद शासक और सामन्तों के सम्बन्धों पर क्या प्रभाव पड़ा?
6. रेख से क्या तात्पर्य है?
7. नजराना कर क्या था?
8. शासक खास रूक्का कब और किसे भेजता था?
9. मारवाड़ में प्रचलित सामन्त श्रेणियां कौन—कौनसी थी?
10. बीकानेर में सामन्तों की श्रेणियों के सम्बन्ध में बताये।
11. ग्रासियाँ सामन्त व्यवस्था क्या थी?
12. जागीर में न्याय व्यवस्था क्या थी?
13. न्याय का आधार क्या था?
14. सासण की जागीर से क्या तात्पर्य है?
15. जागीर भूमि का विभाजन मूलतः कितने भागों में था?
16. दाखला से क्या तात्पर्य है?
17. कर निर्धारण की क्या व्यवस्था थी?
18. लाटा ओर बटाई विधि क्या थी?
19. बारानी और उन्नाव भूमि से क्या तात्पर्य है?
20. घूघरी कर निर्धारण व्यवस्था क्या थी?

निबन्धात्मक प्रश्न :—

1. सामन्त व्यवस्था को परिभाषित करते हुए उसके उत्थान ओर प्रशासनिक स्वरूप पर प्रकाश डालिये।
2. सामन्त व्यवस्था की विशेषतायें क्या थी?
3. मध्यकाल में हुए प्रशासनिक परिवर्तन पर प्रकाश डालिये।
4. सामान्य प्रशासन और न्याय व्यवस्था पर प्रकाश डालिये।
5. भू—राजस्व प्रशासन पर लेख लिखिये।

■■■

अध्याय–3

भारतीय अर्थव्यवस्था में राजस्थान की भूमिका

भारत वर्ष की ही भाँति राजस्थान भी एक कृषि प्रधान राज्य माना जाता है। क्योंकि राज्य को कुल जनसंख्या का 76.6 प्रतिशत भाग कृषि एवं उससे संबंधित कार्यों पर निर्भर करता है। इसके अतिरिक्त ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि क्षेत्र का योगदान अधिक रहा है। स्थिर कीमतों (1999–2000) पर 1987–88 में सकल राज्य घरेलू उत्पाद में कृषि क्षेत्र का योगदान 37.38 प्रतिशत रहा ।

भारत वर्ष में उदारीकरण का आरम्भ 1991–92 से हुआ था तथा उसी के साथ राज्यों की अर्थव्यवस्थाओं में आमूलचूल परिवर्तन देखने को मिलें। तथा इसी के फलस्वरुप कृषिगत क्षेत्र का योगदान सकल राज्य घरेलू उत्पाद में सेवा क्षेत्र की तुलना में कम होने लगा। सेवा क्षेत्र का सकल राज्य घरेलू उत्पाद में बढ़ता योगदान इस बात का सूचक है कि राजस्थान की अर्थव्यवस्था की निर्भरता कृषि क्षेत्र पर कम होती जा रही है। तथा हम लोग विकसित राज्यों की तरह सेवा क्षेत्र के विकास को अत्यधिक बढ़ावा दे रह हैं।

भारत में सकल घरेलू उत्पाद में कृषि की भूमिका तो घट रही है, किन्तु कृषि पर निर्भर जनसंख्या कम नहीं हो रही है। राजस्थान के संदर्भ में भी कमोबेश यही बात लागू होती है। सन्तोष की बात यह है कि भारत में आर्थिक उदारीकरण के दौर में भी कृषि क्षेत्र और ग्रामीणों को महत्त्व दिया जा रहा है। बजट का बड़ा भाग ग्रामीण विकास पर आवंटित किया जा रहा है। आर्थिक उदारीकरण की समृद्धि का लाभ गांवों में पहुँचाया जा रहा है। गाँवों के सामाजिक एवं आर्थिक विकास के लिए ग्रामीण विकास और गरीबी उन्मूलन की योजनाएँ क्रियान्वित की जा रही है। महानरेगा इस दिशा में उल्लेखनीय योजना है। इससे गांवों का कायाकल्प होना शुरु हो गया है।

अर्थव्यवस्था के विकास की गति को बढ़ाने के लिए प्राकृतिक और मानव संसाधन महत्वपूर्ण होते हैं। राजस्थान इन दोनों ही दृष्टि से समृद्ध प्रान्त है। प्राकृतिक संसाधनों में खनिजों की भरपूर उपलब्धता के कारण भारत में राजस्थान 'खनिजों के अजायबघर' के नाम जाना जाता है। खनिज संपदा के बल पर आज राजस्थान देश के औद्योगिक परिदृश्य में तेजी से उभर रहा है। उद्योगों के साथ–साथ यहाँ की अर्थव्यवस्था में कृषि का भी बड़ा योगदान है। राज्य की पाकिस्तान के साथ काफी लम्बी अन्तर्राष्ट्रीय सीमा है। यह उत्तर–पूर्व में पंजाब, हरियाणा व उत्तरप्रदेश से दक्षिण–पूर्व में मध्य प्रदेश से तथा दक्षिण–पश्चिम में गुजरात से घिरा हुआ है। अरावली पहाड़ी श्रृंखला राज्य के बीच में से दक्षिण–पश्चिम से उत्तर–पूर्व की ओर जाती है। इन पहाड़ियों के पश्चिम व उत्तर–पश्चिम में 'थार का रेगिस्तान' पड़ता है, जिसके 11

जिलों में राज्य के क्षेत्रफल का लगभग 61 प्रतिशत आता है तथा इस भाग में राज्य की जनसंख्या का 40 प्रतिशत निवास करता है।

राजस्थान की अर्थव्यवस्था के कुछ प्रमुख सूचक भारतीय अर्थव्यवस्था के संदर्भ में हम विभिन्न क्षेत्रों के अनुसार राजस्थान की स्थिति पर विस्तृत रुप से प्रकाश डालेंगे।

1. सकल घरेलू उत्पाद में विकास क्षेत्रों की संरचना में बदलाव

अर्थव्यवस्था को मुख्य रुप से दो क्षेत्रों में विभाजित किया जाता है।

1. **कृषि क्षेत्र एवं वित्तीय सेवा एवं उद्योग क्षेत्र** : कृषि क्षेत्र में कृषि, पशुपालन, वानिकी , मत्स्य पालन, खनन आदि को सम्मिलित किया जाता है। उद्योग क्षेत्र में निर्माण, विनिर्माण, विद्युत, रेल्वे तथा सेवा क्षेत्र में व्यापार, होटल, जलपानगृह, बैंकिग, बीमा, आवास, वैधानिक, व्यापारिक सेवाऐं, लोक प्रशासन आदि को सम्मिलित किया जाता है।

राजस्थान की अर्थव्यवस्था कृषि क्षेत्र से उद्योग और सेवा क्षेत्र की ओर बढ़ रही है। सकल राज्य घरेलू उत्पाद में स्थिर कीमतों पर कृषि क्षेत्र का योगदान 1991–92 में 39.21 प्रतिशत था जो कि 2005–06 आते–आते घटकर मात्र 27.52 प्रतिशत रह गया। तथा बाद के वर्षों अर्थात् 2008–09 में यह 27.19 प्रतिशत रहा।

स्थिर कीमतों 2004–2005 के आधार पर 2010–2011 (अग्रिम) में कृषि का योगादान 21. 57 रहा। उस के विपरीत सेवा क्षेत्र के आंकड़े प्रोत्साहित करने वाले रहे है। जहां 1991–92 में इनका योगदान 39.53 प्रतिशत रहा तथा 2005–06 में बढ़कर 24.76 प्रतिशत रहा एवं 2010–11 में आशा अनुरुप 48.60 प्रतिशत रहा।

2. **विकास के लिए वित्तीय साधनों का अभाव** :– राज्य की वित्तीय स्थिति काफी कमजोर व डांवाडोल रही है जिससे आर्थिक प्रगति के मार्ग में बाधाऐं आती हैं। राज्य में योजनाकाल में काफी धनराशि व्यय की गई है। प्रति व्यक्ति विनियोजन बढ़ा है। दसवीं पंचवर्षीय योजना 2002–07 का आकार प्रचलित भावों पर 31832 करोड़ रु. प्रस्तावित किया गया है जो नवीं योजना से अधिक है। वित्तीय साधनों के अभाव में भी वर्तमान सरकार इसे प्राप्त करने का भरसक प्रयास कर रही है। राज्य पर कई कारणों से बकाया कर्ज का भार काफी बढ़ गया है। **मार्च 1999 के अन्त में राज्य पर कर्ज का कुल भार लगभग 24,170 करोड़ रु. ऑका गया था। इससे राज्य पर ब्याज की वार्षिक देनदारी असहनीय हो गई है। राज्य में विभिन्न क्षेत्रों में तीव्र विकास के लिए आवश्यक वित्तीय संसाधनों का अभाव पाया जाता है।** भविष्य में भी राज्य की वित्तीय दशा को सुधारने के मार्ग में कई प्रकार की बाधाऐं आयेगी, जैसे वार्षिक योजनाओं के बड़े आकार के वित्तीय पोषण के लिए अधिक कर्ज लेना, पुराने कर्जों पर ब्याज व देय किश्त का भार, राज्य कर्मचारियों के महंगाई भत्तों में वृद्वि का भार तथा अकाल राहत–कार्यों पर व्यय का भार आदि।

राजस्थान के बजट में राजस्व घाटा 2005–06 में 660 करोड़ रुपये था जो 2010–11 के बजट के अनुमानों में 1098 करोड़ रुपये जा पहुंचा। राजकोषीय घाटा आधार लेने की

आवश्यकता को दर्शाता है। राज्य पर कुल कर्जा 2009–10 के संशोधित अनुमानों में 90208 करोड़ रुपये था।

3. जनसंख्या परिदृश्य :– जनसंख्या की दृष्टि से राजस्थान की स्थिति :–

2011 की जनसंख्या के परिणामों के अनुसार राजस्थान की जनसंख्या लगभग 6.86 करोड़ व्यक्ति रही है, जबकि भारत की कुल जनसंख्या 121 करोड़ ऑकी गई है। अतः 2001 में राजस्थान की जनसंख्या भारत की कुल जनसंख्या का लगभग 5.66 प्रतिशत रही है। 1991 की जनगणना के अनुसार यह प्रतिशत लगभग 5.2 रहा था। इस प्रकार 2001 में राजस्थान का भारत की कुल जनसंख्या में अंश मामूली बढ़ा है। 1981–91 की अवधि में भारत की जनसंख्या में 23.86 प्रतिशत की वृद्दि हुई, जबकि राजस्थान की जनसंख्या में 28.44 प्रतिशत की वृद्दि हुई थी। 1991–2001 की अवधि में जहां भारत की जनसंख्या में 21.34 प्रतिशत की वृद्दि हुई वहीं राजस्थान की जनसंख्या में 28.41 प्रतिशत की वृद्दि हुई। इस प्रकार यद्यपि 1991–2001 की की अवधि में राजस्थान की जनसंख्या में 1981–91 की अवधि की तुलना में वृद्दि–दर में मामूली गिरावट आई है, फिर भी यह भारत में हुई जनसंख्या की वृद्दि–दर से अधिक रही। अतः राजस्थान में जनसंख्या समस्त भारत की तुलना में अधिक तेज रतार से बढ़ रही है, जो एक चिन्ता का विषय है।

भारत में 28 राज्य और 7 संघीय प्रदेश हैं। 28 राज्यों में 2001 में जनसंख्या के घटते हुए क्रम में राजस्थान का आठवां स्थान रहा है। सर्वाधिक जनसंख्या उत्तर प्रदेश की रही है जो लगभग 19.95 करोड़ थी। यह भारत की कुल जनसंख्या का 16.48 प्रतिशत थी। सबसे कम जनसंख्या वाला राज्य सिक्किम रहा है, जिसकी जनसंख्या मात्र 6.07 लाख रही है,।

जनसंख्या की दृष्टि से राजस्थान की स्थिति कुछ राज्यों की तुलना में निम्न तालिका में दर्शाई गई है–

2011 की जनगणना के अनुसार

राज्य	राज्यवार जनसंख्या करौड़ में	भारत में स्थान
राजस्थान	6.86	8
बिहार	10.38	3
महाराष्ट्र	11.23	2
मध्य प्रदेश	7.25	6
उत्तर प्रदेश	19.95	1
पश्चिम बगांल	9.13	4
आन्ध्र प्रदेश	8.46	5
तमिलनाडु	7.21	7

2011 की जनगणना के अनुसार राजस्थान का स्थान जनसंख्या की दृष्टि से आठवां आता है। इससे अधिक जनसंख्या उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, बिहार, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु व मध्य प्रदेश में पाई गई है।

4. **लिंग–अनुपात (Sex-Ratio)** : प्रति एक हजार पुरुषों के पीछे स्त्रियों की संख्या लिंग–अनुपात कहलाती हैं। 2011 में राजस्थान में लिंग–अनुपात भारत व कुछ अन्य राज्यों की तुलना में इस प्रकार रहा –

लिंग अनुपात

भारत	940
राजस्थान	926
केरल	1084
तमिलनाडु	995
हरियाणा	877
मध्य प्रदेश	930
पंजाब	893
उत्तर प्रदेश	908

इस प्रकार राजस्थान में लिंग–अनुपात तमिलनाडु से तो कम रहा, लेकिन उत्तर प्रदेश से अधिक पाया गया। केरल में यह सर्वाधिक पाया गया है। वहां स्त्रियों की संख्या पुरुषों से अधिक है। वहां 2011 में यह 1084 रही, जो 2001 के 1058 से कुछ अधिक थी। भारत व राजस्थान में लिंग–अनुपात में कुछ वृद्धि हुई है। 2001 में राजस्थान में लिंग अनुपात 922 रहा था। अतः 2011 में इसमें 04 बिन्दुओं की वृद्धि हुई है।

5. **जनसंख्या का घनत्व** : प्रति वर्ग किलोमीटर में जनसंख्या का निवास जनसंख्या का घनत्व कहलाता है। 2011 में घनत्व की स्थिति निम्न तालिका में दर्शाई गई है –

भारत	382
बिहार	1102
राजस्थान	201
पश्चिम बंगाल	1029
केरल	859
उत्तर प्रदेश	828
पंजाब	550
दिल्ली	11297

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि राजस्थान में जनसंख्या का घनत्व भारत की तुलना में लगभग आधा हैं 2001 में राजस्थान में जनसंख्या का घनत्व 165 था। अतः 2011 में घनत्व में पहले की अपेक्षा वृद्वि हुई है। 2011 में 28 राज्यों में सबसे ज्यादा घनत्व बिहार में 1102 रहा 2011 में दिल्ली प्रदेश में घनत्व 911297 रहा।

6. **साक्षरता–दर (Literacy Rate)** –जो व्यक्ति एक साधारण पत्र लिख–पढ़ सकते हैं, वे साक्षर माने जाते हैं। राजस्थान की साक्षरता–दर भारत व अन्य राज्यों की तुलना में काफी नीची रही हैं। अब साक्षरता की दर का अनुमान लगाते समय साक्षर व्यक्तियों की संख्या में सात से अधिक आयु के व्यक्तियों की संख्या का भाग दिया जाता है। 1981 के आंकड़े भी इस नई परिभाषा के अनुसार संशोधित किए गए हैं। राजस्थान में महिला–वर्ग में साक्षरता–दर बहुत नीची पाई जाती है।

2011 में साक्षरता–दर की स्थिति आगे की तालिका में दी गई है– (प्रतिशत में)

राज्य	कुल व्यक्तियों में	पुरुषों	महिलाओं में
राजस्थान	67.06	80.51	52.66
भारत	74.04	8214.	65.46
केरल	93.91	96.02	91.98
बिहार	63.82	73.39	53.33

2001 में राजस्थान में साक्षरता की दृष्टि से काफी सुधार हुआ है। यह 2001 में लगभग 61 प्रतिशत से बढ़कर 2011 में लगभग 67.06 प्रतिशत पर आ गयी है। राजस्थान की स्थिति इस दृष्टि से काफी पिछड़ी हुई है। बिहार म महिला–साक्षरता की दर राजस्थान से उंची हो गई है। 2011 में बिहार में महिला–वर्ग में साक्षरता की दर 53.33 प्रतिशत थी, जबकि राजस्थान में यह 52.66 प्रतिशत हो गई है। आगे भी राजस्थान को महिला–वर्ग में साक्षरता बढ़ाने की दृष्टि से विशेष प्रयास करना होगा। आज भी राजस्थान में ग्रामीण क्षेत्रों में महिला–वर्ग में साक्षरता की दर नीची पाई जाती है जिसे बढ़ाने की आवश्यकता है। सभी को प्रारम्भिक शिक्षा उपलब्ध करवाने, शाला में विद्यार्थियों का ठहराव बढ़ाने और उत्तम गुणवत्तापूर्ण प्रारम्भिक शिक्षा (विशेषकर बालिकाओं हेतु) के लिए प्रावधान किए गए हैं। उच्च स्तरीय विद्यार्थियों के ज्ञान में वृद्धि एवं उन्हें कौशलयुक्त रोजगार के अवसर बढ़ाने हेतु शालाएं और व्यावसायिक शाखाएं भी स्थापित की गई हैं। 6–14 वर्ष की आयु वर्ग के सभी बच्चों को प्रारम्भिक शिक्षा उपलब्ध कराने की दृष्टि से ''सर्व शिक्षा अभियान'' एक महत्वपूर्ण कदम है। इसके साथ ही, प्रारम्भिक शिक्षा में नामांकन बढ़ाने हेतु अनेक प्रयास किए गए हैं। शाला में उपस्थिति बढ़ाने व बच्चों का ठहराव बढ़ाने के साथ ही उनके पोषण स्तर में सुधार हेतु मिड–डे–मील योजना चलाई जा रही है। वर्तमान में 2,32,262 शिक्षकों सहित 50,608 प्राथमिक विद्यालय एवं 2,27,236 शिक्षकों सहित 55,509 उच्च प्राथमिक विद्यालय हैं, जिनमें कुल नामांकन 123.51 लाख है। राज्य में कुल 12,460 माध्यमिक विद्यालय एवं 6,675 उच्च माध्यमिक विद्यालय चल रहे हैं, जिसमें 6,241 माध्यमिक एवं 3,128 उच्च माध्यमिक विद्यालय राजकीय क्षेत्रा के हैं,

इनमें 10.30 लाख बालिकाओं सहित कुल 28.13 लाख विद्यार्थी अध्ययनरत् हैं। विद्यालयों में नियमित रूप से उपस्थित नहीं हो सकने वाले विद्यार्थियों के अध्ययन हेतु राज्य मुक्त विद्यालय की स्थापना की गई है। बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने हेतु राज्य में 200 कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय संचालित किए जा रहे हैं, निःशुल्क कम्प्यूटर शिक्षा उपलब्ध कराई जा रही है, ट्रान्सपोर्ट बाउचर स्कीम लागू की गई है तथा बालिकाओं को महिला साईकिल उपलब्ध करवाई जा रही है। अशक्तों के लिए एक केन्द्र प्रवर्तित विशेष योजना ''इनक्लूयूज़िव एजुकेशन ऑफ दी डिसेबल्ड एट दी सैकण्ड्री स्टेज (आई.ई.डी.एस.एस.)'' लागू की गई है। बालिकाओं के लिए आपकी बेटी योजना लागू की गई है और शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए राज्य में बालिकाओं को गार्गी पुरस्कार प्रदान किए जा रहे हैं। उच्च शिक्षा के क्षेत्रा में राज्य में हाल ही के वर्षों में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है। राज्य में कॉलेजों की संख्या बढ़कर 1,135 हो गई है। इन कॉलेजों में लगभग 4.20 लाख विद्यार्थी उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

7. **स्वास्थ्य** किसी भी व्यक्ति का स्वास्थ्य उसकी क्षमता को बढ़ाने और बीमारियों से लड़ने में सहायता प्रदान करता है। लोगों के स्वास्थ्य स्तर में सुधार लाना सरकार की उच्च प्राथमिकता है। हमारी राष्ट्रीय नीति भी सभी को विशेषकर वंचितों के स्वास्थ्य की देखभाल बढ़ाने, परिवार कल्याण और पोषण सेवाएं प्रदान करने की है। सरकार द्वारा राजकीय और निजी क्षेत्रा में विस्तृत स्वास्थ्य ढांचे को बनाने और आवश्यक कार्मिक उपलब्ध कराने के निरन्तर प्रयास किए जा रहे हैं। स्वास्थ्य के क्षेत्रा में अपनाए गए उपायों के कारण ही शिशु स्वास्थ्य में सुधार हुआ है और लोगों के जीवन जीने की प्रत्याशा बढ़ने की प्रवृत्ति प्रदर्शित हुई है। राज्य में स्वास्थ्य क्षेत्रा के आधारभूत ढांचें में दिनांक 31 दिसम्बर, 2010 की स्थिति के अनुसार 127 अस्पताल, 199 औषधालय, 1,517 ग्रामीण प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 37 शहरी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 376 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, 118 मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य केन्द्र, 13 शहरी एड पोस्ट, 11,487 उप स्वास्थ्य केन्द्र और 45,078 शैय्या क्षमता उपलब्ध है। स्वास्थ्य के क्षेत्रा में विभिन्न योजनाऐं लागू की गई हैं। गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों के निःशुल्क उपचार हेतु मुख्यमंत्री बी.पी.एल. जीवन रक्षा कोष योजना लागू की गई है और राज्य में विश्व बैंक की सहायता से ''राजस्थान हैल्थ सिस्टम डवलपमेंट प्रोजेक्ट'', धनवंतरि एम्बुलेंस योजना, राजीव गांधी चल चिकित्सा इकाई, 5 लीटर देशी घी योजना आदि क्रियान्वित की जा रही है। राज्य में संस्थागत प्रसव को बढ़ावा देने हेतु महत्वपूर्ण ''जननी सुरक्षा योजना'' क्रियान्वित की जा रही है। कुशल प्रसव सहायिका, दाई अथवा प्रशिक्षित प्रसव सहायिका हेतु विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए गए हैं और क्षमतावृद्धि हेतु क्लिनिकल प्रशिक्षण प्रदान किए जा रहे हैं।

वर्ष 2010–11 में माह दिसम्बर, 2010 तक लगभग 1.84 लाख नसबन्दी ऑपरेशन किए गए। 7.85 लाख ओ.पी. यूज़र्स एवं 9.66 लाख सी.सी. यूजर्स को सेवाएं प्रदान की गई। शिशु मृत्यु दर एवं मातृ मृत्यु अनुपात को कम करने एवं जनसंख्या स्थिरीकरण के लिए समुदाय आधारित गर्भ निरोध के साधनों के वितरण के उद्देश्य से जनमंगल जोड़ा योजना क्रियान्वित की जा रही है। राज्य में वर्तमान में 37,572 प्रशिक्षित जनमंगल जोड़े कार्य कर रहे हैं।

8. क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान की स्थिति :–

अब क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान का भारत में प्रथम स्थान आता है। वर्ष 2001 में राजस्थान का क्षेत्रफल लगभग 3.42 लाख वर्ग किलोमीटर था, जो भारत के कुल क्षेत्रफल का 10.41 प्रतिशत था। मध्य प्रदेश से छत्तीसगढ़ के अलग हो जाने के बाद राजस्थान क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत का सबसे बड़ा राज्य बन गया है। राजस्थान के अन्य पड़ौसी राज्यों की स्थिति क्षेत्रफल की दृष्टि से इस प्रकार है –

राज्य	क्षेत्रफल K.M.	क्षेत्रफल का तुलनात्मक अध्ययन अन्य राष्ट्रों की तुलना में
महाराष्ट्र	30,7,713	इटली
आन्ध्र प्रदेश	2,75,045	न्यूजीलैण्ड़
गुजरात	1,96,024	सेनेगल
हरियाणा	44,212	बेलिजे
उत्तर प्रदेश	2,40,928	युगान्डा
राजस्थान	3,42,236	जर्मनी
बिहार	94,164	हंगरी
भारत	32,87,240	

इस प्रकार राजस्थान का क्षेत्रफल भारत के कुल क्षेत्रफल का 10.41 प्रतिशत लगभग दसवां भाग है, जबकि गुजरात का 6 प्रतिशत तथा उत्तर प्रदेश का लगभग 7.3 प्रतिशत है। क्षेत्रफल की दृष्टि से उंचा अनुपात होने के कारण ही राजस्थान राज्यों की ओर किए जाने वाले केन्द्रीय आयकर व संघीय उत्पाद–शुल्क के राजस्व के हस्तान्तरणों में 'क्षेत्रफल' को एक आधार के रुप में शामिल किए जाने पर सदैव बल देता रहा है, जिसे दसवें वित आयोग ने 5 प्रतिशत भार के रुप में पहली बार शामिल किया था। राज्य के क्षेत्रफल की दूसरी विशेषता यह है कि मरु जिलों में कुल क्षेत्रफल का 61 प्रतिशत अंश पाया जाता है, जबकि इन जिलों में राज्य की 40 प्रतिशत जनसंख्या ही निवास करती है। ये जिले अरावली पर्वतमाला के पश्चिम में "थार–मरुस्थल" में पाये जाते हैं।

9. आधारभूत ढांचे की दृष्टि से राजस्थान की भारतीय अर्थव्यवस्था में स्थिति :

1– **विद्युत**–2003–04 के अन्त में राजस्थान में शक्ति की प्रस्थावित क्षमता 5967 मेगावाट थी, जिसमें लगभग आधी राज्य के बाहरी साधनों से प्राप्त होती है और शेष आधी राज्य के स्वयं के साधनों से प्राप्त होती है। दिसम्बर, 2010 को विद्युत् क्षमता 8,868.57 मेगावाट हो गई है। वर्ष 2010–11 में माह दिसम्बर, 2010 तक 792.06 मेगावाट क्षमता की वृद्धि हुई है। मार्च, 2010 में राज्य की कुल विद्युत क्षमता 8,076.51 मेगावाट थी। वर्ष 2010–11 में माह दिसम्बर, 2010 तक राज्य में सम्भावित शुद्ध विद्युत खपत 3,148.541 करोड़ यूनिट हो गई है, जो गत वित्तीय वर्ष में 4,152.757 करोड़ यूनिट थी। ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम के अन्तर्गत माह दिसम्बर, 2010 तक 39,473 गांवों को विद्युतीकृत और लगभग 10.18 लाख कुँओं को ऊर्जीकृत कर दिया गया है। राज्य में गैर परम्परागत ऊर्जा को बढ़ाने हेतु राजस्थान अक्षय ऊर्जा निगम (आर.आर.ई.सी.) मुख्य भूमिका निभा रहा है 2003–04 में केन्द्र द्वारा लगभग 111.17 मेगावट अतिरिक्त

विद्युत क्षमता के सृजन का लक्ष्य है। विद्युत सप्लाई में भारी उतार–चढ़ाव आने से उत्पादन को क्षति पहुंचती है। राज्य में विद्युत के विकास की भारी संभावनाएं विद्यमान है, जिनका उपयोग करने का प्रयास तेज किया जा रहा है।

नीचे दी गई तालिका से पता लगता है कि राजस्थान में प्रति व्यक्ति विद्युत का उपभोग 2005–06 में लगभग 572.20 किलोवाट प्रति घंटे रहा, जो पंजाब के लगभग 1436.79 किलोवाट प्रति घंटे की तुलना में बहुत नीचा था। प्रति व्यक्ति विद्युत के उपभोग की दृष्टि से 17 राज्यों में राजस्थान का स्थान 10वां रहा। पंजाब का स्थान सर्वोच्च पाया गया, लेकिन राजस्थान की स्थिति उत्तरप्रदेश की तुलना में बेहतर रही।

2005–06 में प्रति व्यक्ति विद्युत (उपयोगिता तथा अनुपयोगिता) का उपभोग इस प्रकार रहा –

राज्य	**K.W.H.**
हरियाणा	1090.39
हिमाचल प्रदेश	765.86
जम्मु–कश्मीर	711.01
पंजाब	1436.79
राजस्थान	572.20
उत्तर प्रदेश	311.82
दिल्ली	1766.94
गुजरात	1283.77
मध्यप्रदेश	580.34
आन्ध्र प्रदेश	723.10
बिहार	85.86
उड़ीसा	633.93
पश्चिम बंगाल	380.61
भारत	510.00

कुल ग्रामों में विद्युतीकृत गांवों का अनुपात– 31 मार्च 2003 में राजस्थान में कुल ग्रामों में विद्युतीकृत गांवों का अनुपात 97.4 प्रतिशत से अधिक पाया गया। हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, केरल, पंजाब आदि के गांवों में यह 100 प्रतिशत पाया गया। आंध्रप्रदेश, गुजरात, मध्यप्रदेश, महाराष्ट व तमिलनाडु में यह 100 प्रतिशत के समीप रहा एवं असम, उड़ीसा, उत्तरप्रदेश, पं.बंगाल आदि में यह 77 प्रतिशत से उपर रहा।

2. सड़कें : आर्थिक विकास में सड़कों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इनके विकास को भी आधार–ढांचे के विकास में उच्च स्थान दिया जाता है। सड़कों के विकास के बिना किस भी प्रकार का आर्थिक विकास संभव नहीं होता है। कृषि, उद्योग, परिवहन, व्यापार, लोगों के आवागमन, आदि भी प्रगति बहुत कुछ सड़कों के विकास पर ही निर्भर करती है। सड़क–विकास की योजनाओं के माध्यम से रोजगार बढ़ाने का प्रयास किया जाता है, अकाल के समय राहत–कार्य चलाए जाते हैं, खनन–क्षेत्रों का विकास किया जाता है तथा सामाजिक विकास 'शिक्षा, चिकित्सा, आदि का आधार तैयार किया जाता है।

(अ) सड़क परिवहन : राजस्थान के निर्माण के समय सड़कों की दशा काफी असंतोषजनक थी। 31 मार्च, 1951 को राज्य में डामर की (BT) सड़कों की लम्बाई केवल 17,339 किलोमीटर थी, जो बढ़कर 2004–05 में 104103 किलोमीटर हो गई। 31 मार्च, 2011 तक राज्य में निर्मित सड़कों की कुल लम्बाई 1,89,034 कि.मी. होने की सम्भावना है। राज्य में वर्ष 2009–10 में सड़कों की सघनता प्रति 100 वर्ग कि. मी. पर 55.09 कि.मी. थी, जो बढ़कर वर्ष 2010.11 में 55.23 कि.मी. होने की सम्भावना है जो कि राष्ट्रीय औसत के 110.17 किमी. से बहुत कम है ।

राजस्थान में डामर की सड़कों की लम्बाई, – 2011 (प्रावधिक)

क्र.सं.	सड़कों के प्रकार	लम्बाई
1.	राष्टीय राजमार्ग	5724
2.	राज्य राजमाग	11866
3.	बड़ी जिला सड़कें	7829
4.	अन्य जिला सड़कें	24480
5.	ग्रामीण सड़कें	139135
	योग	**189034**

स्त्रोत – आर्थिक समीक्षा राजस्थान सरकार 2011 पं. 88

राजस्थान में डामर की सड़कों के अलावा ग्रेवल की सड़कें, पक्की सड़कें,साधारण मौसमी सड़कें भी है। वर्ष 2008–09 में राजस्थान में सभी प्रकार की सड़कों की लम्बाई 186806 किलोमीटर थी। इनमें डामर की सड़कें 140437 किलोमीटर, पक्की सड़कें 1399 किलोमीटर, ग्रेवल की सड़कें 41104 किलोमीटर तथा साधारण सड़कें 3866 किलोमीटर थी।

राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम : (RSRTC) – इसकी स्थापना 1964 में एक वैधानिक निगम के रुप में हुई थी। इसके मुख्य कार्य इस प्रकार है –

(i) राज्य में सड़क परिवहन का विकास करके जनता व्यवसाय व उद्योग को लाभ पहुँचना।

(ii) सड़क परिवहन का परिवहन के अन्य साधनों से तालमेल बैठाना।

(iii) एक क्षेत्र में सड़क परिवहन की सुविधाओं का विस्तार करना व उनमें सुधार करना और राज्य में सड़क परिवहन सेवा को कार्यकुशल व किफायती रुप प्रदान करना।

निगम को 1991–92 से 1997–98 तक लगातर सात वर्षों तक मुनाफा प्राप्त हुआ जो 1994–95 में 24.12 करोड़ रु. तक पहुंच कर बाद में घटता गया और 1997–98 में मात्र लगभग 4 करोड़ रु. रह गया। लेकिन 1998–99 में इसे लगभग 44 करोड़ रु. 1999–2000 में 73.8 करोड़ रु. व 2000–2001 में 85.6 करोड़ रुपये का घाटा हुआ। 2004–05 में 46.50 करोड़ रुपयों का घाटा हुआ है।

राजस्थान राज्य पथ परिवहन निगम द्वारा वर्ष 2010–11 में 61.00 करोड़ किलोमीटर के लक्ष्य के विरूद्ध दिसम्बर, 2010 तक 45.43 करोड़ कि.मी. सड़क मार्गों पर निजी वाहनों सहित कुल 4,497 वाहनों का संचालन किया गया। निगम द्वारा बेड़े की उपलब्ध क्षमता का 93 प्रतिशत उपयोग किया गया है। वर्ष 2010–11 में 1,125 पुरानी/अवधि पार बसों को नई बसों में बदलने का लक्ष्य रखा गया है जिसके

विरूद्ध दिसम्बर, 2010 तक 799 नई बसें बेड़े में जोड़ी गई। दिसम्बर, 2009 तक कुल 69.98 लाख वाहन राज्य के परिवहन विभाग में पंजीकृत थे जो दिसम्बर, 2010 के अन्त तक बढ़कर 77.86 लाख हो गए है, जो गत वर्ष की तुलना में 11.26 प्रतिशत अधिक है।

(3) **वायु परिवहन** : – आधुनिक समय में वायु परिवहन का महत्व बहुत बढ़ता जा रहा है। यह तीव्रगामी यातायात का साधन है तथा किसी भी क्षेत्र के आर्थिक विकास में यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्रदेश में इसका विस्तार बहुत कम है। स्वतंत्रता से पूर्व केवल जोधपुर में प्रमुख हवाई अड्डा था। वर्तमान में प्रदेश में जयपुर, उदयपुर तथा जोधपुर प्रमुख हवाई अड्डे है। ये तीनों मुम्बई व दिल्ली से जुड़े हुए है। देश में इण्डियन एयर लाईन्स के साथ ही छोटे शहरों को जोड़ने के लिए वायुदूत सेवा आरम्भ की गई है, जो राज्य के बीकानेर, जैसलमेर, कोटा को प्रदेश व देश के प्रमुख नगरों से जोड़ती है। राज्य में वायु परिवहन की अच्छी संभावनाएं हैं।

देश में द्रुतगामी परिवहन की दृष्टि से वायु परिवहन का आधुनिक समय में विशेष महत्व हैं वायु परिवहन का महत्व सामयिक दृष्टि से तो सर्वाधिक है जबकि कृषि, व्यापार एवं औद्योगिक दृष्टि से भी उसका विशेष महत्त्व है। इसके द्वारा डाक सेवा में भी सुविधा रहती है। मनुष्य को उपलब्ध परिवहन साधनों में वायु परिवहन सर्वाधिक द्रुतगामी, विकासशील, नवीनतम, आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में सबसे अधिक क्रांति वाला परिवहन साधन है। वर्तमान में जयपुर हवाई अड्डे को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के हवाई अड्डे के रुप में विकसित किया जा रहा है। अजमेर का धार्मिक महत्व होने के कारण यहां अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए हवाई अड्डा स्थापित किया जा रहा है। भारत को आन्तरिक सेवाओं के साथ–साथ राजस्थान में राष्ट्रीय एयरपोर्ट प्राधिकरण, हवाई सेवाऐं प्रदान करता है।

(4) रेल परिवहन

स्वतंत्रता से पूर्व राजस्थान में रेल मार्गों का विकास बहुत कम था। थोड़ा बहुत रेल मार्गों का विकास जयपुर रियासत, बीकानेर रियासत, जोधपुर रियासत तथा उदयपुर रियासत में हुआ था। डूँगरपुर, बांसवाड़ा, जैसलमेर रियासतें रेल मार्गों से जुड़ी हुई नहीं थी। स्वतन्त्रता के बाद भारत सरकार ने रेल विकास का काम हाथ में लिया। वर्तमान में रेल परिवहन भारत सरकार का सबसे बड़ा सार्वजनिक क्षेत्र का उपक्रम है। प्रत्येक वर्ष संसद में रेलमंत्री के द्वारा रेल बजट प्रस्तुत किया जाता है। रेल विकास का दायित्व भारत सरकार पर है।

राजस्थान में भारत के कुल रेल मार्गों का लगभग 11 प्रतिशत भाग हैं। राजस्थान में रेल मार्गों की कुल लम्बाई मार्च 2002 में 5894 किलोमीटर थी जो देश के रेल मार्गों की कुल लम्बाई 63140 किलोमीटर का 9.4 प्रतिशत थी। राजस्थान के रेल मार्गों की कुल लम्बाई में ब्रोडगेज का भाग 51.4 प्रतिशत है जबकि राष्ट्रीय स्तर पर यह यह 71.4 प्रतिशत है। राजस्थान में 31 मार्च 2002 को प्रति हजार वर्ग किलोमीटर में रेल मार्गों की औसतन लम्बाई 17.2 किलोमीटर थी जबकि यह राष्ट्रीय स्तर पर 19.2 किलोमीटर थी।

राज्य में मार्च 2008 में रेल मार्गों की कुल लम्बाई 5683.01 किलोमीटर थी। जिसमें ब्रोडगेज का भाग 68.37 प्रतिशत, मीटर गेज का भाग 30.10 प्रतिशत तथा नैरोगेज का भाग 1.53 प्रतिशत था। राज्य में

31 मार्च 2008 को प्रति हजार वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में रेल मार्गों की औसतन लम्बाई 16.16 किलोमीटर थी।

प्रमुख रेल मार्ग – राजस्थान के प्रमुख रेल मार्गों में जयपुर–मुम्बई रेल मार्ग, जोधपुर–हावड़ा रेल मार्ग, दिल्ली–अहमदाबाद रेल मार्ग, उदयपुर–दिल्ली रेल मार्ग, बीकानेर–दिल्ली रेल मार्ग, जयपुर–दिल्ली रेल मार्ग, जयपुर–गंगानगर रेल मार्ग, फुलेरा–दिल्ली रेल मार्ग, जयपुर–सवाईमाधोपुर रेल मार्ग, जयपुर–आगरा रेल मार्ग, जयपुर–जम्मूतवी रेल मार्ग, जोधपुर–गौहाटी रेल मार्ग, जयपुर–लौहारु रेल मार्ग, जयपुर–चेन्नई रेल मार्ग, जोधपुर–हरिद्वार रेल मार्ग आदि महत्वपूर्ण है।

6. **सिंचाई** – इस अध्याय में राजस्थान में सिंचाई के विकास व सिंचाई की महत्वपूर्ण परियाजनाओं पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

(1) **सिंचाई का विकास** – राजस्थान में निरन्तर पड़ने वाले सूखे व अकाल तथा राज्य के लगभग दो–तिहाई भू–भाग में मरु व अर्द्ध –मरु क्षेत्र के पाए जाने कारण सिंचाई का विकास करना बहुत आवश्यक माना गया है। राज्य में नदियों व तालाबों की कमी पाई जाती है। पूर्वी राजस्थान में बहने वाली नदियाँ है। उनके पानी का उपयोग बाँधों का निर्माण करके किया जा सकता है। इस क्षेत्र में कुओं का पानी कम गहराई पर पाया जाता है जिसे पम्प द्वारा निकालकर सिंचाई के काम में लिया जा सकता है। राज्य में योजनाकाल में वृहद, मध्यम व लघु सिंचाई के साधनों का विकास किया गया है। वृहद (Major) सिंचाई का साधन उसे कहते हैं जिसमें कृषि योग्य कमांड क्षेत्र (Culturable command area) (CCA) 10 हजार हैक्टेयर से अधिक होता है, मध्यम में यह 2 से 10 हजार हैक्टेयर के बीच तथा लघु (Minor) में 2 हजार हैक्टेयर तक होता है।

राज्य में सिंचाई के चार मुख्य स्त्रोतय नहरें, तालाब, कुएं एवं नलकूप हैं। वर्ष 2008–09 में राज्य में कुल सिंचित क्षेत्रा 79.10 लाख हैक्टेयर था, जो वर्ष 2007.08 के 80.88 लाख हैक्टेयर क्षेत्रा से 2.20 प्रतिशत कम है। कुल बोए गए सिचिंत क्षेत्रों का 67.49 प्रतिशत कुओं एवं नलकूपों से, 31.11 प्रतिशत नहरों से एवं 1.40 प्रतिशत अन्य साधनों द्वारा सिंचित था। वर्ष 2006.07 से 2008–09 तक राज्य में विभिन्न स्त्रोतों द्वारा सिंचित क्षेत्रों की स्थिति निम्नलिखित तालिका में दर्शाई गई है:

सिचाई का स्त्रोत	सकल सिचित क्षैत्र		शुद्व सिचित क्षैत्र	
	2007–08	2008–09	2007–08	2008–09
1.नहरें	2515	2461	1688	1583
2.तालाब	104	34	102	30
3.कुंए एंव नलकुप	5282	5338	4572	4549
4. अन्य	87	77	82	73
योग	**8088**	**7910**	**6444**	**6245**

(ऑकड़े हजार हैक्टेयर)

राज्य का जल संसाधन विभाग विभिन्न वृह्द, मध्यम एवं लघु सिंचाई परियोजनाओं के माध्यम से उपलब्ध सतही जल के दोहन एवं उपयोग हेतु प्रयासरत् है। इन परियोजनाओं द्वारा मार्च, 2010 तक राज्य में 37.13 लाख हैक्टेयर सिंचाई क्षमता का सृजन किया गया। वर्ष 2010–11 में दिसम्बर, 2010 तक 10,769 हैक्टेयर क्षेत्रा की अतिरिक्त सिंचाई क्षमता (इंदिरा गांधी नहर परियोजना सहित) सृजित की गई । वार्षिक योजना 2010–11 में (इन्दिरा गॉधी नहर परियोजना एवं सिचिंत क्षेत्रा विकास के अतिरिक्त) विभिन्न सिंचाई परियोजनाओं के लिए 473.42 करोड़ का संशोधित प्रावधान रखा गया, जिसमें नर्मदा नहर परियोजना हेतु 135.00 करोड़, गंग नहर के आधुनिकीकरण हेतु 10.00 करोड़, बीसलपुर परियोजना हेतु 10.37 करोड़, राजस्थान जल क्षेत्रा पुनर्संरचना परियोजना हेतु 55.00 करोड़ एवं लघु सिंचाई सुधार परियोजना (जे.आई.सी.ए.) हेतु 56.00 करोड़ सम्मिलित हैं, इसके विरुद्ध दिसम्बर, 2010 तक 193.81 करोड़ व्यय किए गए, जिसमें नर्मदा नहर परियोजना पर 67.00 करोड़, गंग नहर आधुनिकीकरण पर 6.89 करोड़, बीसलपुर परियोजना पर 7.61 करोड़, राजस्थान जल क्षेत्रा पुनर्संरचना योजना (आर.डब्ल्यू.एस.आर.पी.) पर 21.32 करोड़ एवं 6.95 करोड़ लघु सिंचाई सुधार परियोजना (जे.आई.सी.ए.) पर किया गया व्यय सम्मिलित है। वर्ष 2010–11 में 5 लघु सिंचाई परियोजनाओं के लक्ष्य के विरूद्ध 2 लघु सिंचाई परियोजनाऐं पूर्ण की जा चुकी है।

राजस्थान में स्त्रोत अनुसार शुद्ध सिंचित क्षेत्र (हजार हैक्टेयर)

राज्य की बहुउद्देशीय व अन्तर्राज्यीय नदी घाटी परियोजनएँ

(1) **भाखड़ा–नांगल** – यह राष्ट्र की सबसे बड़ी बहुउद्देशीय नदी घाटी योजना है। इसमें पंजाब, हरियाणा व राजस्थान राज्य भाग ले रहे है। राजस्थान का इसमें 15.2 प्रतिशत अंश रखा गया है। इस योजना से राजस्थान के श्रीगंगानगर जिले की कुछ भूमि कृषि योग्य हो सकी और वहाँ सिंचाई का विस्तार हुआ है।

(2) **चम्बल परियोजना** – चम्बल राजस्थान की सबसे बड़ी और एक अविरल बहने वाली नदी है। चम्बल विकास परियोजना पर राजस्थान और मध्य प्रदेश राज्य मिलकर कार्य कर रहे हैं। इसमें राजस्थान का 50% हिस्सा है। इस परियोजना के अन्तर्गत चम्बल नदी पर बाँध बनाया गया है।

(i) गाँधी सागर बांध – (प्रथम अवस्था)– यह भानपुरी (मध्यप्रदेश) से 10 मील उत्तर–पश्चिम में और चौरासीगढ़ से 5 मील नीचे बनाया गया है। यह सबसे बड़ा जलाशय है।

(ii) राणाप्रताप सागर बाँध– (द्वितीय अवस्था)– यह पहले बाँध से 21 मील नीचे चूलिया झरने पर बनाया गया है।

(iii) जवाहर सागर बांध– (तृतीय अवस्था) – यह बांध केवल 'पिक–अप' बाँध है जिसमें गांधीसागर बांध व राणाप्रताप सागर बाँधों से छोड़ा गया पानी इकट्ठा किया जाता है। यह कोटा शहर से 10 मील दक्षिण में बनाया जा रहा है। इसे कोटा बाँध भी कहते हैं।

(iv) कोटा सिंचाई बाँध (Kota Barrage)–(प्रथम अवस्था)–यह कोटा शहर से 5 मील उत्तर में बनाया गया है। पहले तीन बाँधों के साथ पन–बिजलीघर भी बनाए गए है।

(3) व्यास परियोजना (Beas Projcet)– यह पंजाब, हरियाणा और राजस्थान राज्यों की मिलीजुली बहुउद्देशीय योजना है। इस योजना में सतलज, रावी और व्यास तीनों के जल का उपयोग किया जा रहा है। इसकी निम्न तीन इकाइयाँ हैं–(1) व्यास–सतलज कड़ी (2) पोंग स्थान पर व्यास नदी पर बाँध (3) व्यास ट्रांसमिशन प्रणाली।

(4) माही बजाज सागर परियोजना– यह राजस्थान तथा गुजरात की मिली–जुली परियोजना हैं इससे दक्षिण राजस्थान व उत्तरी गुजरात में सिंचाई की जाएगी। राजस्थान और गुजरात के बीच वर्ष 1966 में माही नदी के जल उपयोग करने हेतु एक समझौता हुआ था। इसके अनुसार गुजरात में कडाना बाँध (Kadanan Dam) बनाया जाना था, जिसकी पूरी लागत गुजरात राज्य वहन करेगा और वही उसका लाभ लेगा। लेकिन समझौते में यह व्यवस्था की गई थी कि नर्मदा का विकास होने पर कडाना बाँध का कुछ जल राजस्थान को भी दिया जाएगा और इसके लिए राजस्थान गुजरात को बाँध की यथोचित लागत भरेगा।

(1) इंदिरा गांधी नहर परियोजना (इगानप) (Indira Gandhi Nahar Project (IGNP) का विवरण–यह पहले राजस्थान नहर परियोजना कहलाती थी। इस परियोजना के पूरा हो जाने से यह विश्व की सबसे लम्बी सिंचाई प्रणालियों (Irrigation Systems) में से एक मानी जाएगी। यह थार के रेगिस्तान के बड़े भू–भाग को हरा–भरा बना देगी तथा चूरु, श्रीगंगानगर, बीकानेर, जैसलमेर, जोधपुर व बाड़मेर जिलों को लाभ पहुंचाएगी।

इंदिरा गाँधी नहर परियोजना से राज्य में गेहूँ, कपास व तिलहन की पैदावार बढ़ेगी। नये उद्योग, नये नगर, नई बस्तियाँ, ये सब नहर के ही वरदान होंगे। नहरी क्षेत्र में लाखों व्यक्तियों को बसाने का कार्यक्रम है। इसके लिए 'मास्टर प्लान' पर कार्य किया जा रहा है। इस परियोजना की यह विशेषता है कि इससे पहली बार नई भूमि पर खेती की जा सकेगी। इससे रावी–व्यास के जल का ज्यादा गहरा उपयोग हो सकेगा और कमाण्ड क्षेत्र में निरन्तर सूखे के कारण अकाल–राहत कार्य किया जा रहा है। इसलिए इस परियोजना का महत्व काफी बढ़ गया है। इस परियोजना के पूरा होने पर सारा देश लाभान्वित होगा।

5 **जाखम सिंचाई परियोजना**– जाखम माही की सहायक नदी है। प्रतापगढ़ में जाखम नदी पर जाखम बाँध बनाया गया है। इस सिंचाई परियोजना से उदयपुर, चित्तौड़गढ़ और प्रतापगढ़ में राजस्थान को सिंचाई सुविधा मुहैया है।

6 **बीसलपुर सिंचाई परियोजना**– टोंक जिले के बीसलपुर गांव से बनास नदी पर बाँध का निर्माण किया गया है। राजस्थान के जयपुर, अजमेर, ब्यावर, किशनगढ़, टोंक आदि की पेयजल और सिंचाई की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बीसलपुर परियोजना महत्वपूर्ण है।

7 **सोम, कमला–अम्बा सिंचाई परियोजना** – दक्षिणी राजस्थान के जनजाति बहुल बांगड़ क्षेत्र की समृद्दि के लिए सोम कमला अम्बा सिंचाई परियोजना भाग्य रेखा है। सोम नदी पर कमला–अम्बा गांव के समीप बाँध का निर्माण किया गया है। इससे डूंगरपुर और उदयपुर के अनेक गांवों में सिंचाई सुविधा उपलब्ध है।

8 **मेजा बाँध परियोजना** – भीलवाड़ा जिले में माण्डलगढ़ तहसील के मेजा गांव के निकट कोठारी नदी पर मेजा बाँध का निर्माण किया। मेजा बाँध से भीलवाड़ा के आस–पास के गांवों में सिंचाई सुविधा भी मुहैया होती है। मेजा बाँध क्षेत्र में गर्मियों में जल सूख जाने के कारण खीरा, ककड़ी, तरबूज, खरबूज आदि की खेती होती है।

शहरी आधारभूत ढांचे का विकास

भारत सरकार द्वारा जयपुर व अजमेर–पुष्कर में मूलभूत आधारभूत सुविधाएं बढ़ाने हेतु राज्य में जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीनीकरण मिशन क्रियान्वित किया जा रहा है। छोटे एवं मध्यम कस्बों में मूलभूत आधारभूत सुविधाएं उपलब्ध कराने के उद्देश्य से ''छोटे एवं मध्यम कस्बों में शहरी आधारभूत ढांचे की विकास योजना (यू.आई.डी.एस.एस.एम.टी.)'' और शहरी क्षेत्रों की चिन्हित बस्तियों में रहने वालों को आवास एवं आधारभूत सुविधाएं उपलब्ध कराने हेतु ''एकीकृत आवास एवं कच्ची बस्ती (स्लम) विकास कार्यक्रम (आई.एच.एस.डी.पी.) क्रियान्वित किया जा रहा है। राजीव आवास योजना के अन्तर्गत शहरी स्थानीय निकायों में सर्वे का कार्य किया जा रहा है। राज्य सरकार द्वारा जयपुर रेल मैट्रो प्रोजेक्ट प्रारम्भ कर दिया है, जिससे जयपुर को विश्वस्तरीय शहर के रूप में विकसित किया जा सके। शहरी क्षेत्रों में मूलभूत ढांचागत सुविधाएं उपलब्ध कराने की दृष्टि से सड़कों, सीवरेज लाइन, फ्लाई ओवर्स, रेलवे ओवर ब्रिज आदि निर्माण कार्य कराए गए हैं। राजस्थान टाउनशिप पॉलिसी, 2010 और अफोर्डेबल हाउसिंग योजना को जारी किया गया है, जिसके प्रथम चरण में यह योजना जयपुर, चाकसू, भिवाड़ी, कुचामन सिटी, अजमेर, दौसा और उदयपुर में क्रियान्वित की जा रही है। जयपुर शहर के ढांचागत विकास हेतु रिंग रोड़, जयपुर मैट्रो, घाट की गुणी– आगरा रोड़ पर सुरंग का निर्माण, पार्किंग की व्यवस्था, फ्लाई ओवर तथा अण्डरपास आदि महत्वपूर्ण परियोजनाएं संचालित की जा रही हैं। शहरों के योजनाबद्ध विकास के लिए 'मास्टर प्लान' भी तैयार किए जा रहे हैं।

7. भारतीय कृषि में राजस्थान की भूमिका

कृषि आधारित अर्थव्यवस्था होने की वजह से राजस्थान का भारतीय कृषि में महत्वपूर्ण स्थान है तथा ग्रामीण जनसंख्या का 76.6 प्रतिशत भाग कृषि कार्यों पर निर्भर करता है। सकल राज्य घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान सकल राष्ट्र घरेलू उत्पाद से तात्पर्य है कि एक वित्तीय वर्ष की अवधि में उत्पादित समस्त वस्तुओं एव सेवाओं का अंतिम मौद्रिक मूल्य सकल राज्य घरेलू उत्पाद माना जाता है। जैसा कि हम पूर्व में बता चुके है कि धीरे–धीरे राजस्थान की अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र का योगदान दिनोदिन कम होता जा रहा है तथा सेवा क्षेत्र के प्रति अर्थव्यवस्था का रुझान देखा जा रहा है। आगे वर्णित आंकड़े कृषि क्षेत्र के घटते योगदान को दर्शाते है।

3. कृषि की दृष्टि से भारत में राजस्थान की स्थिति

(i) 1995–96 की कृषिगत संगणना के अनुसार राजस्थान में कार्यशील जोत का औसत आकार 3.96 हैक्टेयर पाया गया (समस्त भारत में 1.41 हैक्टेयर)। यह 1990–91 में 4.11 हैक्टेयर रहा था (समस्त भारत में 1.57 हैक्टेयर)। 1995–96 में 17 राज्यों की औसत कृषि–जोत के आकार की दृष्टि से राजस्थान का स्थान सर्वोच्च रहा था। दूसरा स्थान पंजाब का रहा था, जिसकी औसत जोत 3.79 हैक्टेयर रही थी।

कुछ अन्य राज्यों की स्थिति इस प्रकार रही –

(1995–96 में औसत जोत का आकार) (हैक्टेयर में)

गुजरात	2.62
मध्यप्रदेश	2.28
उत्तर प्रदेश	0.86
पश्चिम बंगाल	0.85

इस प्रकार कार्यशील जोतों के औसत आकार की दृष्टि से राजस्थान की स्थिति उत्तम मानी गई है। तालिका से पता चलता है कि उत्तर प्रदेश व पश्चिम बंगाल में यह एक हैक्टेयर से भी कम हो गई है।

राजस्थान का भूमि उपयोग उद्देश्य के लिए रिपोर्टिंग क्षेत्रफल 2008 में 34270 हजार हैक्टेयर था। इसमें सकल कृषिगत क्षेत्र 22208 हजार हैक्टेयर था जो रिपोर्टिंग क्षेत्रफल का 64.80 प्रतिशत था। राज्य में 2007–08 में विभिन्न स्त्रोतों से सकल सिंचित क्षेत्र 8088 हजार हैक्टेयर था जो सकल कृषिगत क्षेत्र का 36.42 प्रतिशत था।

प्रमुख फसलें (Major Crops)– राजस्थान में फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल में ज्यादा महत्वपूर्ण स्थान बाजरा, गेहूँ, मक्का, जौ, ज्वार, दाल, तिल, मूंगफली व कपास का आता है। लेकिन क्षेत्रफल में प्रतिवर्ष मौसमी परिवर्तनों के कारण काफी उतार–चढ़ाव आते रहते है। राजस्थान में प्रति हैक्टेयर उपज बहुत कम होती है। प्रमुख फसलों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है–

(1) **गेहूँ (Wheat)** – राजस्थान गेहूँ का उत्पादन करने की दृष्टि से भारत का पाँचवां सबसे बड़ा राज्य है। राज्य में गेहूँ की पैदावार का जिलेवार औसत लेने पर पता चलता है कि गंगानगर, जयपुर, अलवर, कोटा व सवाईमाधोपुर जिलों में गेहूँ का उत्पादन अधिक होता है। सबसे ज्यादा गेहूँ का उत्पादन गंगानगर जिले में होता है। गेहूँ रबी की फसल है। 2003–04 में गेहूँ का उत्पादन 58.8 लाख टन हुआ जिसके 2004–05 में 55.1 लाख टन होने का अनुमान है। 2003–04 में अखिल भारतीय गेहूँ के उत्पादन (7.2 करोड़ टन) का 8.2% अंश राजस्थान में हुआ था। राज्य में गेहूँ की सोना–कल्याण, मैक्सिकन, सोना, कोहिनूर आदि विकसित किस्में बोई जाती हैं।

(2) बाजरा (Bajra) – बाजरे के उत्पादन में राजस्थान का भारत में प्रथम स्थान आता है। देश में कुल बाजरे के उत्पादन का लगभग 1/3 अंश राजस्थान में होता है। जयपुर, नागौर, अलवर, चूरु व सवाईमाधोपुर जिलों में राज्य का अधिकांश बाजरा उत्पन्न होता है। जयपुर जिले में बाजरे का काफी उत्पादन है। राज्य में बाजरे का उत्पादन काफी घटता–बढ़ता रहता है। बाजरे का उत्पादन 2003–04 में 66.5 लाख टन हुआ था, जिसके घटकर 2004–05 में 16.3 लाख टन रहने का अनुमान है (75.4 प्रतिशत की गिरावट)।

(3) जौ (Barley)– उत्तर प्रदेश के बाद राजस्थान का स्थान जौ उत्पन्न करने वाले राज्यों में आता है। देश का चौथाया जौ राजस्थान में पैदा होता है। यह ज्यादातर जयपुर, उदयपुर, भीलवाड़ा,

अलवर व अजमेर जिलों में पैदा होता है। आजकल नई किस्मों का प्रचलन भी हो गया है, जैसे ज्योति, आर.एस–6 आदि। 2003–04 में जो का उत्पादन 4.09 लाख टन हुआ था जिसके बढ़कर 2004–05 में 7. 67 लाख टन होने का अनुमान है।

(4) मक्का (Maize)– देश में कुल मक्का की पैदावार का 1/8 अंश राजस्थान में होता है। यह राज्य में उदयपुर, चित्तौड़गढ़, भीलवाड़ा, व बांसवाड़ा में ज्यादा मात्रा में पैदा की जाती है। 2003–04 में राज्य में मक्का का उत्पादन 20.7 लाख टन हुआ, जिसके 2004–05 में घटकर 11.9 लाख टन रहने का अनुमान रहा है।

(5) सरसों, राई व तिल (Oil Seed) – राज्य में तिलहनों का उत्पादन उत्तर प्रदेश के बाद सबसे ज्यादा होता है। पहले सरसों अलवर, भरतपुर, जयपुर तथा गंगानगर जिलों में पैदा होती थी। अब कृषि–विस्तार कार्यक्रमों के फलस्वरुप यह जालौर, सिरोही, उदयपुर, चित्तौड़गढ़, कोटा व बूँदी जिलों में भी होने लगी है। सरसों की सर्वाधिक पैदावार गंगानगर जिले में होती हे। 2003–04 में राई व सरसों का उत्पादन 26.9 लाख टन हुआ जिसके 2004–05 में 35 लाख टन के स्तर पर रहने का अनुमान रहा है। 2003–04 में राजस्थान में राई व सरसों का उत्पादन समस्त देश के उत्पादन का लगभग 46 प्रतिशत था और भारत में इसका प्रथम स्थान रहा। इस प्रकार राज्य में पिछले वर्षों में सरसों व राई का उत्पादन बढ़ा है। तिल के उत्पादन में राज्य का स्थान उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश के बाद आता है। पाली जिले में काफी तिल पैदा होता है। राज्य में अलसी, अरण्डी, तारामीरा, सोयाबीन आदि का उत्पादन होता है। 2001–02 में राज्य में सोयाबीन का उत्पादन 7.16 लाख टन हुआ था। राज्य में तिलहल (Oilseeds) का उत्पादन हाल के वर्षो में काफी बढ़ा है।

(6) गन्ना (Sugarcane) – राजस्थान में गन्ने का उत्पादन अधिक नहीं होता है। गन्ने का सबसे ज्यादा उत्पादन बूँदी जिले में होता है। अन्य जिले उदयपुर, चित्तौड़गढ़ व गंगानगर है। 2003–04 में गन्ने का उत्पादन 3.1 लाख टन हुआ। 2004–05 में इसका संभावित उत्पादन 2.1 लाख टन रहा है। गन्ने के उत्पादन में सर्वोच्च स्थान उत्तर प्रदेश का आता है, जहां देश की पैदावार का 40 प्रतिशत गन्ना होता है। राजस्थान का अंश भारत के कुल उत्पादन में नगण्य है। (2003–04 में 0.13 %)।

(7) कपास (Cotton) – कपास की बुवाई का काम मई–जून में किया जाता है। पौधे उग जाने के बाद चार–पांच बार सिंचाई की आवश्यकता होती है। सितम्बर–अक्टूम्बर तक इन पौधों में कपास के फूल निकल आते है। इन फूलों से कपास निकालने के लिए मजदूरों की आवश्यकता होती है।

वर्ष 2003–04 में कपास का उत्पादन 7.1 लाख गांठें हुआ। यह 2004–05 घटकर 6.5 लाख गाँठें हो गया। इसका सर्वाधिक उत्पादन नहरी सिंचाई की सुविधाओं के कारण गंगानगर जिले में होता है। यह मुख्यतः तीन प्रकार की होती है। देशी कपास मुख्यतः उदयपुर, चित्तौड़गढ़ और बाँसवाड़ा में बोई जाती है। अमेरिकन कपास मुख्यतः गंगानगर जिले में बोई जाती है। इस कपास का रेशा लम्बा होता है और यह अच्छे किस्म के सूती कपड़े बनाने के काम आती है। तीसरे प्रकार की मालवी कपास होती है जिसे कोटा, बूँदी, झालावाड़ और टोंक जिलों में बोया जाता है।

(8) **विविध प्रकार की फसलें (Miscellanious crops)** – राज्य की अन्य पैदावारों में ग्वार, धनिया, सूखी लाल मिर्च, आलू, तम्बाकू, मैथी, जीरा (Coriander) आदि आते हैं।

8. **भारत के औद्योगिक विकास में राजस्थान का योगदान :–** सन् 1949 में राजस्थान के पुनर्गठन के पूर्व राजस्थान में छोटे–बड़े कई राज्य थे, जिनमें बिजली, पानी व यातायात के साधनों के अभाव के कारण बड़े पैमाने के आधुनिक उद्योगों का विकास करना संभव नहीं था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व राज्य में केवल सात सूती–वस्त्र मिलें, दो सीमेन्ट की फैक्ट्रियाँ व दो चीनी की मिलें थी। आज भी राजस्थान को औद्योगिक दृष्टि से अपेक्षाकृत एक पिछड़ा हुआ राज्य माना जाता है।

वर्ष 2001–02 में पंजीकृत फैक्ट्रियों की संख्या, कर्मचारियों की संख्या, उत्पादन के मूल्य, विनियोजित–पूँजी की मात्रा, विनिर्माण द्वारा जोड़े गए शुद्व मूल्य (Net value added by manufacture) आदि का 4/5 से अधिक अंश देश के 10 राज्यों में महाराष्ट्र, गुजरात, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश व पंजाब में पाया गया था। 1986–87 में पहली शुद्व जोड़े गए मूल्य की दृष्टि से समस्त भारत फैक्ट्री क्षेत्र में राजस्थान का दसवां स्थान आया था। लेकिन बाद में उसे यह स्थान नहीं प्राप्त हुआ। सर्वप्रथम स्थान महाराष्ट्र का रहा है। अन्य राज्यों का क्रम ऊपर दिया गया है। राज्य में 1962 की तुलना में 2001–02 में औद्योगिक प्रगति हुई है, लेकिन सम्पूर्ण देश की पृष्ठभूमि में अब भी राजस्थान का पिछड़ापन अगली तालिका से स्पष्ट हो जाता है।

तालिका से स्पष्ट होता है कि 2001–02 में भी राजस्थान का भारत की औद्योगिक अर्थव्यवस्था में काफी नीचा स्थान था। इस वर्ष भारत में पंजीकृत फैक्ट्रियों का 4.1 प्रतिशत राजस्थान में तथा महाराष्ट्र में 13.9 प्रतिशत था। फैक्ट्री में रोजगार की दृष्टि से राजस्थान का समस्त भारत में अंश 3.3 प्रतिशत था, जबकि महाराष्ट्र का 16.0 प्रतिशत था। विनिर्माण द्वारा जोड़े गए शुद्व मूल्य (net value added) में भी राजस्थान का अंश 3.3% ही था, जबकि महाराष्ट्र का 20.4 प्रतिशत था। इस प्रकार जोड़े गये शुद्व मूल्य में भारत में जहां महाराष्ट्र का अंश लगभग 1/5 था, वहाँ राजस्थान का केवल 1/30 था। फैक्ट्री–क्षेत्र में जोड़ा गया मूल्य राजस्थान में 1960–61 में समस्त भारत 1% था, जो 1970–71 में 2.1% तथा 2001–02 में 3.3% हो गया। इस तरह राजस्थान का स्थान औद्योगिक दृष्टि से फैक्ट्री क्षेत्र में काफी नीचे आता है। लेकिन जोड़े गए मूल्य में उसकी स्थिति असम, हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर व उड़ीसा आदि से बेहतर है।

सर्वे के अनुसार राज्य में 1951 में 103 पंजीकृत फैक्ट्रियाँ थी, जिसमें लगभग 18 हजार व्यक्ति काम पाए हुए थे और उनमें केवल 9 करोड़ रुपयों की पूँजी लगी हुई थी। 2001–02 में रिपोर्टिंग फैक्ट्रियों की संख्या 5147, स्थिर पूँजी की राशि लगभग 13723 करोड़ रुपये, कर्मचारियों की संख्या 2.33 लाख तथा विनिर्माण द्वारा जोड़ें गए शुद्व मूल्य की राशि 4538 करोड़ रुपये रही थी। राजस्थान में लघु इकाइयों में ज्यादातर 'अति लघु इकाइयाँ' (संयत्र व मशीनरी में 25 हजार रुपये तक का विनियोग) पाई जाती है। आधी से अधिक इकाइयाँ धातु–पदार्थों, चमड़े की वस्तुओं व अध्यात्मिक खनिज पदार्थों के निर्माण में लगी हुई है।

सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं में राज्य के औद्योगीकरण के लिए विद्युत–सृजन पर काफी बल दिया है। भाखड़ा व चम्बल परियोजनाओं से विद्युत प्राप्त करने का प्रयास किया गया है। थर्मल व विद्युत संयंत्रों की स्थापना की गई है। राज्य में अणुशक्ति का भी विकास किया गया है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में शक्ति की प्रस्थापित क्षमता केवल 13 मेगावाट थी जो 2003–04 के अन्त में लगभग 5167.43 मेगावाट हो गई। इसी प्रकार पानी की व्यवस्था का भी कई नगरों व गाँवों में विस्तार किया गया है। सड़कों का निर्माण किया गया है और उद्यमकर्ताओं को कई प्रकार की रियायतें दी गई है, जिनका सम्बन्ध भूमि के आवंटन, विद्युत की दर, बिक्री कर, चुंगी एवं वित्तीय सहायता व पूंजी–सब्सिडी आदि से रहा है। इन रियायतों के फलस्वरुप राज्य में पंजीकृत फैक्ट्रियों की संख्या काफी बढ़ी है।

उद्योगों का कुल राज्य घरेलू उत्पति एवं रोजगार में स्थान

राज्य घरेलू उत्पति : – औद्योगिक क्षेत्र का राजस्थान की शुद्ध घरेलू उत्पत्ति में 1980–81 में लगभग 13.1% अंश था, जो 1990–91 में 13.7% तथा 2003–04 में 17.1 प्रतिशत रहा। इस प्रकार 1980–81 से 2003–04 की अवधि में इसमें कुछ सीमा तक (लगभग 4 प्रतिशत बिन्दु की) वृद्धि हुई है। अखिल भारतीय स्तर पर यह लगभग 25 प्रतिशत आंका गया। इस प्रकार राजस्थान में उद्योगों का राज्य की आय में अंश आज भी समस्त भारत की तुलना में काफी कम है, जिसे भविष्य में बढ़ाने की आवश्यकता है। 2003–04 में अखिल भारतीय स्तर पर विनिर्माण, निर्माण, विद्युत, गैस व जल–पूर्ति का सकल घरेलू उत्पाद में (1993–94 की कीमतों पर) योगदान 24.5 प्रतिशत रहा था, जबकि राजस्थान में यह 25.0 प्रतिशत रहा था, (1993–94 की कीमतों पर निर्माण का 7.93 प्रतिशत अंश जोड़ने पर)। अतः राजस्थान में यह अनुपात अपेक्षाकृत ऊंचा हो गया है (विशेषतया निर्माण क्षेत्र के योगदान के कारण)।

उद्योगों में विनिर्माण (Manufacturing) का अंश विशेष महत्वपूर्ण माना जाता है। राजस्थान में यह 2003–04 में लगभग 11.3% आंका गया है। इसमें पंजीकृत क्षेत्र का अंश लगभग 6% तथा गैर–पंजीकृत क्षेत्र का लगभग 5.3% है। इस प्रकार विनिर्माण क्षेत्र का अंश आज भी कम है। पंजीकृत व गैर–पंजीकृत दोनों क्षेत्रों का अंश कम है। पंजीकृत क्षेत्र में फैक्ट्री क्षेत्र या संगठित क्षेत्र की प्रधानता होती हैं, जबकि गैर–पंजीकृत क्षेत्र में ग्रामीण व कुटीर उद्योग, दस्तकारी आदि आते है, जिनमें कारीगर अपने घरों में ही काम करके माल का उत्पादन करते हैं। अभी भी विनिर्माण का अंश शुद्ध घरेलू उत्पाद 11–12 प्रतिशत ही पाया जाता है, जो काफी कम हैं। यह गणना 1993–94 के मूल्यों पर की गयी है।

(2) उद्योगों का रोजगार में स्थान – जैसा कि जनसंख्या के अध्याय में बतलाया गया था, 1991 की जनगणना के अनुसार राजस्थान में विनिर्माण कार्यों में रोजगार का अंश मुख्य श्रमिकों में 7.4 प्रतिशत था, जिसमें पारिवारिक उद्योगों में यह 2 प्रतिशत तथा अन्य में 5.4 प्रतिशत था। यह खनन व पत्थर निकालने में 1 प्रतिशत तथा विद्युत, गैस व जल–पूर्ति में भी इससे कम है।

उद्योगों में श्रम–शक्ति का अनुपात (प्रतिशत में)

1981–91 की अवधि में घरेलू उद्योगों के अलावा अन्य उद्योगों में रोजगार का अंश बढ़ा है तथा घरेलू में कछ कम हुआ है। खनन व विनिर्माण कार्य में श्रम–शक्ति का अंश 1991 में केवल 8.4 प्रतिशत

रहा है, जो पहले से भी कुछ कम है। भविष्य में राज्य का औद्योगिक विकास करके उद्योगों का रोजगार में अंश बढ़ाने का प्रयास किया जाना चाहिए।

राज्य में औद्योगिक विकास, हस्तकला के विकास एवं औद्योगिक गतिविधियों के संचालन में मार्गदर्शन प्रदान करने तथा आवश्यक सहायता व सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए उद्योग निदेशालय उत्तरदायी है। वर्तमान में 34 जिला उद्योग केन्द्र एवं 7 उप केन्द्र, उद्यमियों को सुविधाएं उपलब्ध कराने हेतु उद्योग विभाग के अधीन कार्यरत हैं। औद्योगिक विकास के विभिन्न कार्यक्रमों/ योजनाओं की उपलब्धियां निम्नानुसार हैंः–

सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम औद्योगिक इकाइयों का पंजीयन/मेमोरेण्डमः वित्तीय वर्ष 2010–11 में दिसम्बर, 2010 तक 14,300 इकाइयों के पंजीयन के लक्ष्य के विरूद्ध 9,577 औद्योगिक इकाइयों का पंजीयन किया गया। इन इकाइयों में ₹ 1,417.16 करोड़ के निवेश से 60,986 व्यक्तियों को प्रत्यक्ष रोजगार सुलभ हुआ है।

औद्योगिक उद्यमिता ज्ञापनः वर्ष 2010–11 में माह नवम्बर, 2010 तक राज्य में 71 वृहद् एवं मध्यम उद्योगों की स्थापना हेतु भारत सरकार को प्रस्ताव प्रस्तुत किए गए हैं जिनमें 15,378.00 करोड़ का पूंजी निवेश प्रस्तावित है।

प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रमः सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रधानमंत्री रोजगार योजना एवं ग्रामीण रोजगार सृजन कार्यक्रम को सम्मिलित करते हुए प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम नाम से नवीन योजना वर्ष 2008–09 से शुरू की गई है। इस योजना का उद्देश्य शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकाधिक ग्रामोद्योग सेवा एवं व्यावसायिक गतिविधियों को बढ़ावा देकर रोजगार के नए अवसर प्रदान करना है। वित्तीय वर्ष 2010–11 में माह दिसम्बर, 2010 तक विभाग द्वारा 1,088 प्रोजेक्ट स्थापित करने के लक्ष्य के विरूद्ध 1,363 आवेदकों को ऋण स्वीकृत कर 719 व्यक्तियों को ऋण वितरित किए गए।

औद्योगिक शिविरः औद्योगिक विकास को बढ़ावा देने तथा जनता को औद्योगिक इकाई स्थापित करने से संबंधित नियमों की जानकारी देने के लिए जिला एवं पंचायत समिति स्तर पर औद्योगिक शिविर आयोजित किए गए। इसके अतिरिक्त शिविरों में औद्योगिक इकाईयों के पंजीयन, ऋण आवेदन.पत्रा तैयार करने तथा स्वीकृतियां जारी करने सम्बन्धी कार्य भी किए गए। वर्ष 2010–11 में माह दिसम्बर, 2010 तक 34 जिला स्तरीय एवं 240 पंचायत समिति स्तरीय उद्योग प्रशिक्षण शिविर आयोजित किए जाने के लक्ष्य के विरूद्ध क्रमशः 22 जिला स्तरीय एवं 206 पंचायत समिति स्तरीय शिविर आयोजित किए गए।

खनिज पदार्थः राजस्थान खनिज पदार्थो का एक अजयाबघर (A Museum of Minerals) माना गया है। वर्तमान में यहाँ 39 किस्म के बड़े खनिज तथा 22 प्रकार के लघु पाये जाते हैं। इस प्रकार राजस्थान में कुल 61 किस्म के खनिज पदार्थ पाये जाते हैं। बड़े खनिजों (Major Minerals) में **धात्विक खनिज** (Metallic Minerals) (तांबा, कच्चा लोहा, सीसा–जस्ता व मैंगनीज शामिल हैं) तथा **अधात्विक खनिज** (Non-Metallic Minerals) (जिप्सम, लाइमस्टोन, अभ्रक चाइनाक्ले, आदि शामिल हैं) आते हैं। लघु खनिजों (Minor minerals) में मार्बल, इमारती पत्थर, सेण्डस्टोन, हरा मार्बल, स्लेट स्टोन, आदि शामिल हैं। अलौह धातु (non-ferrous metals) (सीसा, जस्ता व ताँबा) के उत्पादन–मूल्य की दृष्टि से भारत में इसका प्रथम स्थान है, तथा लौह खनिजों (ferrous minerals) जैसे टंगस्टन, आदि के उत्पादन–मूल्य में

इसका चौथा स्थान है। 2008–09 में खनन क्षेत्र से 1999–2000 में भावों पर राज्य को लगभग 3398.2 करोड़ रू. की आय हुई थी, जो राज्य के शुद्ध घरेलू उत्पाद का 2.73 प्रतिशत अंश था। राज्य को इसी वर्ष रेन्ट व रोयल्टी के रूप में 1211 करोड़ रू. का राजस्व प्राप्त हुआ था, जो पहले से अधिक था। इसी वर्ष खनन–क्रिया में लगभग 5 लाख व्यक्तियों को प्रत्यक्ष (direct) रोज़गार तथा 20 लाख व्यक्तियों को परोक्ष (indirect) रोज़गार मिला हुआ था।

वर्तमान में राजस्थान जास्पर व वोलस्टोनाइट का एकमात्र उत्पादक राज्य है तथा टंगस्टन, सीसा व जस्ता कन्सन्ट्रेट्स, ताँबा धातु, सीमेंट व स्टील ग्रेड चूना पत्थर, सोप–स्टोन, बाल क्ले, कैल्साइट, फैल्सपार, प्राकृतिक जिप्सम, चीनी मिट्टी (केओलिन), रॉक फॉस्फेट, गेरू (ऑकर) एवं इमारती पत्थर का अग्रणी उत्पादक माना गया है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुविकलात्मक प्रश्न –

1. राज्य की जनसंख्या का कितना प्रतिशत भाग कृषि कार्यों पर निर्भर करता है।

(अ) 76.6 % (ब) 75.6 % (स) 65 % (द) 70 %

2. भारत मे उदारीकरण का प्रारंभ कब से माना जाता है।

(अ) 1990–91 (ब) 1991–92

(स) 1992–93 (द) 1993–94

3. राज्य की किस देश के साथ लम्बी अंतराष्ट्रीय सीमा है।

(अ) नेपाल (ब) चीन (स) बांग्लादेश (द) पाकिस्तान

4. 2011 की जनगणना अनुसार भारत की कुल जनंसख्या कितनी है।

(अ) 112.87 करोड़ (ब) 121 करोड

(स) 103.50 करोड (द) 110 करोड़

5. क्षेत्रफल के अनुसार भारत में सबसे बड़ा राज्य कौनसा हैं ।

(अ) मध्यप्रदेश (ब) उत्तरप्रदेश

(स) गुजरात (द) राजस्थान

6. भारत में सबसे कम जनसंख्या वाला राज्य कौन सा है।

(अ) राजस्थान (ब) सिक्किम

(स) त्रिपुरा (द) मिजोरम

7. 2011 की जनगणना के अनुसार राजस्थान का जनसंख्या मं स्थान निम्न में से है।

(अ) 8 (ब) 2 (स) 8 (द) 7

8. 2011 की जनगणना के अनुसार राजस्थान में लिंग अनुपात है।

(अ) 933 (ब) 926 (स) 898 (द) 861

अतिलघुरात्मक प्रश्न

1.राजस्थान में समस्त भारत की जनसंख्या का कितना प्रतिशत भाग निवास करता है।

2. खनिजों का अजायबघर के नाम किस राज्य को जाना जाता है।

3. 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में लिंग अनुपात क्या हैं ।
4. राजस्थान में साक्षरता दर का क्या प्रतिशत है।
5. राजस्थान में 2011 के अनुसार महिला साक्षरता दर का क्या प्रतिशत है।
6. 2003–04 में राजस्थान में शक्ति की प्रस्तावित क्षमता कितनी थी।
7. राजस्थान में 2002–03 में प्रति व्यक्ति विद्युत उपभोग कितना किलोवाट घंटे रहा।
9. राजस्थान राज्य सड़क परिवहन निगम की स्थापना किस सन् में हुई ।

लघुत्तरात्मक प्रश्न –

1. राजस्थान को खनिजों का अजायबघर के नाम से क्यों जाना जाता है।
2. राजस्थान में इंदिरा गांधी नहर परियोजना का विवरण दीजिए।
3. राजस्थान की प्रमुख फसलों के नाम बताइये।
4. सकल घरेलू उत्पाद को समझाइये।
5. सेवा क्षेत्र से क्या तात्पर्य हे।
6. आधारभूत ढांचे से आप क्या समझते है।
7. साक्षरता दर से आप क्या समझते है।

निबंधात्मक प्रश्न –

1. राजस्थान की अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र के योगदान पर प्रकाश डालिये।
2. आधारभूत ढांचें की दृष्टि से राजस्थान की अर्थव्यवस्था की समीक्षा भारतीय संदर्भ में करे।
3. राजस्थान की अर्थव्यवस्था को जनसंख्या की दृष्टि से समझाइए।

अध्याय – 4

आधुनिक राजस्थान में सामाजिक विकास

15 अगस्त 1947 को आजादी के बाद 30 मार्च 1949 को राजपूताना की रियासतों का राजस्थान प्रान्त के रूप में लगभग एकीकरण और 1 नवम्बर 1956 को पूर्ण एकीकरण हुआ। इसका राजनीतिक ही नही, वरन् सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक जन–जीवन की दशा और दिशा पर व्यापक प्रभाव पड़ा। अब सम्प्रभुता जनता में निहित है, अतः जनता प्रत्यक्ष रूप से व्यवस्था से जुड़ गई है। विकास के प्रत्येक कार्य में उसकी भागीदारी है। सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाली लोककल्याणकारी योजनाएं– शिक्षा, चिकित्सा, जलापूर्ति, मानव–विकास, खाद्य– सुरक्षा, आर्थिक उदारीकरण का सामाजिक दर्शन, गरीबी उन्मूलन जैसे प्रशासनिक और सामाजिक कार्यक्रम, कल्याणकारी राज्य एवं सामाजिक विकास के प्रमुख स्तम्भ हैं। इसने प्रशासन के विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया को बढ़ाया।

शिक्षा :–

स्वरूप :–

1949 को राजस्थान में पहले मंत्री मण्डल का गठन किया गया, उसमें पहली बार शिक्षा मंत्रालय बनाया गया, पहले शिक्षा एवं गृह मंत्री प्रो. प्रेमनारायण माथुर बनाये गये। 1950 में राजस्थान में प्राथमिक शिक्षा में 3.30 लाख, हायर सेकेण्डरी में 0.18 लाख और उच्च शिक्षा में 0.11 लाख विद्यार्थी नामांकित थे। राज्य में 40 कॉलेज और 01 विश्वविद्यालय था। शिक्षा के विकास का कार्य मूलतः 13 नवम्बर 1954 में मोहनलाल सुखाड़िया के मुख्यमंत्री बनने के बाद उनके 9 जुलाई 1971 तक के लम्बे कार्यकाल में हुआ। शिक्षा व्यवस्था तीन भागों में विभक्त थी। प्रथम सरकारी शिक्षण संस्थायें, दूसरा अनुदानित शिक्षण संस्था और तीसरा– गैर अनुदानित निजी शिक्षण संस्थायें। इन शिक्षण संस्थाओं में शिक्षकों के वेतन, सेवा नियम बनाये, शिक्षण प्रशिक्षण के लिये राज्य शिक्षण शोध एवं प्रशिक्षण समिति गठित की गई। शिक्षा के लिये स्कूलों में निरीक्षक नियुक्त किये गये। अधिक से अधिक बच्चे शिक्षित हो सके इसके लिये प्राथमिक स्कूल एक किलोमीटर से अधिक दूरी पर न हो दूसरा बच्चों के स्कूल अध्ययन अवधि तीन घंटे तक सीमित रखा जाय। इस काल में दो विद्यालय– विद्या भवन उदयपुर और वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली को स्वायत्त शासित बनाये गये। 1964 में जोधपुर और उदयपुर विश्वविद्यालय स्थापित किये गये। वर्तमान में राजस्थान में 14 विश्वविद्यालय स्थापित हैं। (1) राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर, (2) जयनारायण विश्वविद्यालय जोधपुर, (3) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय उदयपुर (4) वर्द्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय कोटा, (5) महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय अजमेर, (6) महाराणा प्रताप कृषि एवं तकनीकी विश्वविद्यालय उदयपुर, (7) बीकानेर विश्वविद्यालय बीकानेर, (8) राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय बीकानेर, (9) तकनीकी विश्वविद्यालय कोटा, (10) राजस्थान स्वास्थ्य विज्ञान, अनुसंधान विश्वविद्यालय (मेडिकल वि.वि.) जयपुर (11) जगतगुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय जयपुर (12) आयुर्वेद विश्वविद्यालय जोधपुर (13) राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालय जोधपुर (14) कोटा विश्वविद्यालय कोटा।

केन्द्र सरकार की नीति :–

राज्य सरकार की शिक्षा नीति केन्द्र सरकार के निर्णयों तथा समय–समय पर बनाये गये आयोग, समितियाँ और विशेषकर विश्वविद्यालय आयोग से प्रभावित रही है। यद्यपि 1976 में संवैधानिक संशोधन से

पूर्व शिक्षा संविधान की राज्य सूची विषय के अन्तर्गत था। 1948–49 में राधाकृष्णन आयोग का गठन किया गया, इसे विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग भी कहा जाता है। 1952 में मुदालियर आयोग गठित किया गया। इसके सुझावों पर ही अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षा परिषद् का गठन किया गया, जिसे 1961 में राष्ट्रीय शैक्षणिक अनुसंधान प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) के रूप में पुनर्गठित कर क्षेत्र व्यापक कर दिया गया। उक्त परिषद के सुझावों और कार्यों से राज्य की शिक्षा प्रभावित होती है। 1964–66 में कोठारी आयोग बना, जिसे शिक्षा आयोग भी कहते है। इसके अध्यक्ष यू.जी.सी. के अध्यक्ष प्रो. दोलत सिंह कोठारी थे। आप राजस्थान के उदयपुर के निवासी थे। कोठारी आयोग के सुझावों का सर्वाधिक प्रभाव पड़ा। क्योंकि इसी के आधार पर देश की पहली शिक्षा नीति अपनाई गई, इसके सुझावों के अनुसार 10+2+3 शिक्षा प्रणाली लागू की गई, त्रिभाषा सूत्र, परीक्षा प्रणाली में सुधार सायंकालीन विद्यालय और कॉलेज खोलने एवं तकनीकी हाई स्कूल की व्यवस्था को लागू किया गया, इसके अतिरिक्त शिक्षा को व्यावसायिक बनाया जाय। 1968 में इसे राष्ट्रीय शिक्षा नीति के रूप में देश में लागू किया गया। राजस्थान में भी यही शिक्षा नीति अपनाई गई। सामाजिक विकास की दृष्टि से इस शिक्षा नीति में महत्वपूर्ण कार्य थे, सांयकालीन शिक्षा के कारण आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्ग जो दिन में नौकरी करते थे वे भी शिक्षा का लाभ उठा सकते थे। इसके अतिरिक्त स्कूल में व्यावसायिक शिक्षा और तकनीकी शिक्षा को महत्त्व देकर शिक्षा को रोजगारोन्मुख भी बनाया।

शिक्षा को सामाजिक और राष्ट्रीय विकास का आधार मानते हुए 1976 में और 1985 में बड़े कदम उठाये गये। 1976 में संविधान के 42 वें संशोधन द्वारा शिक्षा को समवर्ती सूची में स्थानान्तरित किया गया, अर्थात् 1976 से शिक्षा केन्द्र और राज्य की साझा जिम्मेदारी हैं, अब शिक्षा के स्वरूप और गुणवत्ता के दायित्व का केन्द्र सरकार और नीति निर्धारण एवं शैक्षणिक नियोजन का दायित्व केन्द्र सरकार राज्य सरकार के साथ मिलकर निभाती है। लेकिन शिक्षा प्रणाली और उसके स्वरूप के बारे में निर्णय सामान्यतः राज्य सरकारें ही करती है। अगस्त 1986 में नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू की गई, इसके 'प्रोग्राम ऑफ एक्शन' द्वारा शिक्षा में व्यापक सुधार किये गये, अब स्कूली शिक्षा में एक वर्ष का अध्ययन काल बढ़ाकर तैरहवीं कक्षा की पढाई प्रारम्भ कर दी, इस प्रकार अब स्कूल शिक्षा 10+2+1 हो गई। पिछड़े वर्गों तथा ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चों के लिये नवोदय विद्यालय, महिला शिक्षा को बढ़ावा देने हेतु व्यवस्थ की गई। अब तकनीकी, व्यवसायी शिक्षा पर बल दिया एवं कम्प्यूटर शिक्षा अनिवार्य एवं महाविद्यालय, विश्वविद्यालय शिक्षकों के लिये सेवाकाल में प्रशिक्षण (रेफ्रेशर) कोर्स अनिवार्य करने की व्यवस्था की गई। 2010 में शिक्षा के मौलिक अधिकार से जोड़कर 1 से 14 वर्ष के बच्चों के लिये शिक्षा की व्यवस्था की गई है। केन्द्र की यह सभी ऐसी योजनायें रही हैं जिसे राजस्थान में भी लागू किया गया।

राजस्थान सरकार की नीति :–

राजस्थान सरकार ने शिक्षा को सामाजिक उत्थान का महत्त्वपूर्ण साधन मानते हुए समय–समय पर कदम उठायें, 2001 में 'सर्वशिक्षा अभियान' प्रारम्भ किया। इसका उद्देश्य शत प्रतिशत नामांकन व पूर्ण साक्षरता का लक्ष्य प्राप्त करना है। इस योजना में भारत व राज्य सरकार की हिस्सेदारी 85:15 है। यह योजना राजस्थान प्राथमिक शिक्षा परिषद् द्वारा संचालित है। सर्वशिक्षा अभियान के मुख्य उद्देश्य निम्न हैं– (1) वर्ष 2003 तक 6–14 वर्ष की आयु के सभी बच्चे शिक्षा से जुड़ सकें (2) जीवन के लिए शिक्षा पर जोर देते हुए संतोषजनक स्तर की बुनियादी शिक्षा प्रदान की जा सके। (3) प्राथमिक स्तर पर वर्ष 2010

तक सभी लिंग सम्बंधी और सामाजिक वर्गीकरण के अंतरों को समाप्त करना। (4) वर्ष 2010 तक सार्वजनिक तौर पर स्कूली शिक्षा देना।

राज्य के सभी बच्चों को शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए तत्कालीन सरकार ने 1 जुलाई 1999 को राजीव गाँधी स्वर्ण जयन्ती पाठशालाएँ खोली, जिनका मुख्य उद्देश्य किन्हीं कारणों से वंचित बालकों को शिक्षा देना था। 1 अप्रैल 2006 से समस्त राजीव गाँधी स्वर्ण जयन्ती पाठशालाओं को राजकीय प्राथमिक विद्यालय बना दिया गया। राज्य में चल रही औपचारिक व अनौपचारिक प्रारम्भिक शिक्षा परियोजनाओं में किसी कारण से वंचित रह गए बच्चों को प्रारम्भिक शिक्षा से जोड़ने हेतु 19 नवम्बर 2001 को राज्य सरकार ने 'शिक्षा आपके द्वार' योजना शुरू की।

राजस्थान में साक्षरता बढ़ाने हेतु किये गये प्रयत्न :–

1. **गुरु मित्र योजना–** यूनीसेफ के वित्तीय सहयोग से 1994–95 से आरम्भ की गई योजना है।
2. **लोक जुम्बिश योजना–** यह योजना सीड़ा के वित्तीय सहयोग से चलाई गई है।
3. **सरस्वती योजना–** यह योजना 1994–95 से लागू हुई। इसका उद्देश्य किन्हीं कारणों से वंचित ग्रामीण बालिकाओं के लिए औपचारिक शिक्षा की व्यवस्था करना है। इसके लिए पाँचवीं उत्तीर्ण आशार्थी महिला को प्रशिक्षित कर सरस्वती बहन बनाया जाता है।

राजस्थान में साक्षरता की दर 2001 की जनगणना के अनुसार 60.4% है। महिलाओं का साक्षरता प्रतिशत 43.9% और पुरुषों का साक्षरता प्रतिशत 75.7 है। ग्रामीण क्षेत्र में साक्षरता दर 55.3% एवं शहरी क्षेत्र में 76.2% है। ग्रामीण महिला साक्षरता 37.7% प्रतिशत है।

शिक्षा का अधिकार

86 वॉ संविधान संशोधन 2010 द्वारा 4–14 वर्ष आयु के बच्चों को अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा देने का प्रावधान किया गया है। यह अप्रैल 2010 में लागू किया गया।

चिकित्सा एवं स्वास्थ्य

शिक्षा के साथ–साथ राज्य में स्वास्थ्य और चिकित्सा सेवाओं का भी विस्तार हुआ है। सघन टीकाकरण द्वारा अनेक महामारियों को समाप्त किया गया है। परिवार कल्याण सेवाओं का विस्तार हुआ है। साथ ही आधुनिक चिकित्सा सेवाएँ राजस्थान में उपलब्ध हुई है। "मुख्यमंत्री जीवन रक्षा कोष" की स्थापना से गरीब जनता को राहत मिली है। हमारे राज्य में 'मलेरिया उन्मूलन', 'सुरक्षित बाल जीवन' व 'सुरक्षित मातृत्व कार्यक्रम', 'अंधता निवारण', एड्स नियंत्रण आदि कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। स्वास्थ्य सेवाओं में सन् 1951 की अपेक्षा बढ़ोतरी हुई है। आजादी के समय लगभग 390 एलोपैथिक चिकित्सालय एवं 350 आयुर्वेदिक औषधालय थे वहीं अब बढ़कर क्रमशः 2500 एवं 3700 के आस–पास हो गए हैं।

भारतीय चिकित्सा परिषद् :–

भारतीय चिकित्सा परिषद् की स्थापना एक विधायी संस्था के रूप में भारतीय चिकित्सा परिषद् 1993 के अन्तर्गत की गई। वर्ष 1993 में भारतीय चिकित्सा परिषद् अधिनियम 1956 में व्यापक संशोधन कर नए मेडिकल कॉलेज खोलने, उनकी सीटों में बढ़ोतरी और नए पाठ्यक्रम शुरू करने के लिए स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय की मंजूरी को अनिवार्य बना दिया गया। इस समय देश में 264 मेडिकल कॉलेज हैं। इनमें से 185 को भारतीय चिकित्सा परिषद् की मान्यता प्राप्त है। राजस्थान में 06 मेडिकल

कॉलेज हैं।

टेलीमेडिसन योजना :—

दूरस्थ क्षेत्रों के रोगियों के लिये विशेषज्ञ चिकित्सकों की सेवा उपलब्ध कराने की यह योजना 14 फरवरी 2006 को लागू हुई, झालावाड़ से इसका उद्‌घाटन हुआ। इस योजना के तहत राजस्थान के सभी 32 जिला अस्पताल और 6 मेडिकल कॉलजों को इनसेंट संचार प्रणाली के माध्यम से एस.एम.एस. मेडिकल कॉलेज जयपुर से जोड़ा जायेगा। इस प्रकार राजधानी जयपुर के व अन्य मेडिकल कॉलेजों की सेवायें हर क्षेत्र के रोगियों को उपलब्ध हो सकेगी।

राज्य में राजकीय क्षेत्र में 6 मेडिकल कॉलेज व एक डेन्टल कॉलेज संचालित है जबकि निजी क्षेत्र में 2 मेडिकल कॉलेज व 7 डेन्टल कॉलेज संचालित हैं। राजकीय क्षेत्र में संचालित मेडिकल कॉलेज—(1) सरदार पटेल मेडिकल कॉलेज, बीकानेर (2) सवाई जयसिंह मेडिकल कॉलेज, जयपुर (3) डॉ. सम्पूर्णानन्द मेडिकल कॉलेज, जोधपुर (4) जवाहर लाल नेहरू मेडिकल कॉलेज, अजमेर (5) राजकीय मेडिकल कॉलेज, कोटा (6) रवीन्द्र नाथ टैगोर मेडिकल कॉलेज, उदयपुर।

राजकीय क्षेत्र में संचालित डेन्टल कॉलेज— राजकीय डेन्टल कॉलेज, जयपुर में स्थित है।

राजस्थान स्वास्थ्य विज्ञान विश्वविद्यालय जयपुर की स्थापना 22 सितम्बर 2004 को की गई। यह चिकित्सा क्षेत्र का राज्य का प्रथम विश्वविद्यालय है। राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान जयपुर में स्थित है। इस प्रकार चिकित्सा सुविधाओं के विस्तार से सामाजिक विकास उन्नत हो सकेगा।

जलापूर्ति

जल प्रकृति से विरासत में मिला वह संसाधन है जो सम्पूर्ण जीव जगत का आधार है। जल के बिना जीव जगत की कल्पना ही व्यर्थ है। वस्तुतः जल ही जीवन है। पृथ्वी के 70% भाग पर जल है। किन्तु पृथ्वी पर उपलब्ध जल का 0.07% हिस्सा अर्थात् 1 लाख लीटर पानी में से 7 लीटर पानी ही मानव के लिए उपयोगी है। सारे विश्व में जल का संकट है किन्तु भारत की स्थिति अधिक गम्भीर है क्योंकि यहाँ दुनिया की 16% आबादी निवास करती है जबकि पानी केवल 4% ही उपलब्ध है। राजस्थान जो कि क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत का सबसे बड़ा प्रदेश है तथा भारत के क्षेत्रफल का 10.43% भाग धारण करता है उसमें भारत का मात्र 1% जल उपलब्ध है। सतही जल के स्त्रोत— नदी, तालाब एवं झीलें आदि पर्यावरणीय कारण जैसे ग्लोबलवार्मिग एवं मनुष्य जनित कारण जैसे बढ़ती जनसंख्या, अधिक खाद्यान्न उत्पादन, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण के कारण सतह के जल स्रोत अपना अस्तित्व खोते जा रहे हैं। राजस्थान की भौगोलिक परिस्थितियाँ अत्यधिक विषम हैं यहाँ वार्षिक औसत वर्षा सबसे कम तो है ही बारह मास बहने वाली नदियों का अभाव है तथा राजस्थान का पश्चिमी भाग मरुभूमि तो सदियों से अकाल और सूखे की चपेट में रहा है। भूमिगत जल स्रोतों में नाममात्र का उपलब्ध जल सीमित उपयोग द्वारा ही भविष्य के लिए बचाया जा सकता है। राजस्थान की 90% आबादी पेयजल के लिये भूजल स्रोतों पर निर्भर है तथा कृषि कार्य हेतु 60-70% भू जल स्रोतों का उपयोग होता है।

मानव जिस जल को प्राचीन काल में देवता एवं जल स्रोतों को पवित्र मानता आ रहा है आधुनिक जीवन शैली, शहरीकरण एवं औद्योगिकीकरण द्वारा प्रदूषित कर अपने ही वर्तमान एवं भविष्य के साथ खिलवाड़ कर रहा है।

जल का मानव जीवन के सभी पक्षों यथा सिंचाई, कृषि खाद्यान्न उत्पादन, उद्योग निर्माण, पर्यटन,

सांस्कृतिक जीवन, जीवनयापन आदि सभी क्षेत्रों से प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। जल के अभाव मे मानव पशु–पक्षी जीव जन्तु वनस्पति किसी का भी अस्तित्व सम्भव नहीं हैं जल की कमी मानव एवं समस्त जैव जगत के अस्तित्व को प्रभावित करती है।

राजस्थान के जल–संसाधन/जल स्रोत को दो भागों में बाँटा जा सकता है– (1) सतह जल संसाधन (2) भूगर्भीय जल संसाधन। सतही जल संसाधन– नदियाँ, झीलें व तालाब हैं जबकि भूगर्भीय जल संसाधन कुएँ और नलकूप हैं।

राजस्थान में नदियों से संभावित जल– संसाधनों का केवल 50% ही उपयोग हो रहा है। राजस्थान की प्रमुख नदियाँ चम्बल, बनास, लूणी, सूकड़ी, साबरमती एवं बाणगंगा हैं। राजस्थान में मीठे एवं खारे पानी की कई झीलें हैं। मीठे पानी की झीलें कृत्रिम हैं जबकि खारे पानी की झीलें प्राकृतिक हैं और उनसे नमक का उत्पादन किया जाता है। मीठे पानी की झीलें– जयसमन्द, राजसमन्द, पिछोला फतहसागर, आनासागर आदि झीलें हैं जबकि खारे पानी की झीलों में– सांभर, डीडवाना, लूणकरण झील व पंचभद्रा झील प्रमुख हैं।

राजस्थान में सतही जल स्रोतों की पूर्ति वर्षा पर निर्भर करती है और वर्षा न होने पर सतही जल स्रोत भी सूखने लगते हैं और अन्ततः सूखे रह जाते हैं अतः अकाल का सामना करने के लिए भूगर्भीय जल स्रोतों का विकास एवं विदोहन करना आवश्यक हो गया है।

विभिन्न सर्वेक्षणों के आधार पर राजस्थान में 149 लाख एकड़ फुट से अधिक भू–गर्भीय जल भण्डार होने का अनुमान है। दक्षिणी–पूर्वी राजस्थान में भूगर्भीय जल भण्डार पर्याप्त तथा उनका जल स्तर ऊँचा जबकि पश्चिमी भागों में जलस्तर बहुत नीचा होने पर भी काफी भूगर्भीय जल भण्डार है। अतः जहाँ दक्षिण–पूर्वी राजस्थान में कुओं से जल साधनों का प्रयोग होता है वहाँ पश्चिमी भागों में नलकूपों का विकास जरूरी है। राजस्थान में कुओं एवं ट्यूबवैल से कुल सिंचित क्षेत्र के लगभग 58% भाग में सिंचाई होती है। यह अनुमान लगाया गया है कि राज्य में उपयोग योग्य कुल भूगर्भीय जल संसाधन लगभग 102 लाख एकड़ फीट है उसमें से लगभग 86.6 लाख एकड़ फीट सिंचाई के लिए उपलब्ध है और 15 लाख एकड़ फीट पानी औद्योगिक एवं पेयजल आदि के लिए आवश्यक है।

राजस्थान में योजनाबद्ध विकास के अन्तर्गत उपलब्ध जल–संसाधनों के विकास एवं समुचित उपयोग का प्रयास रहा है फिर भी पेयजल संकट तथा सिंचाई की बढ़ती आवश्यकता को देखते हुए राज्य में जल संसाधनों के और अधिक विकास एवं सदुपयोग के लिए कुछ सुझाव निम्न है– (1) उपलब्ध पानी के सदुपयोग के लिए सिंचाई में आधुनिक विधियां– फंव्वारा सिंचाई और बूंद–बूंद सिंचाई अपनाने से कम से कम पानी में अधिकतम सिंचाई की जा सकती है। (2) जन–जागृति द्वारा पानी के दुरुपयोग पर नियंत्रण लगाया जा सकता है। (3) सिंचाई एवं पेयजल परियोजना का समयबद्ध क्रियान्वयन से भी जल संसाधनों का उचित दोहन किया जा सकता है। (4) सतही एवं भूगर्भीय जल संसाधनों का मिला–जुला उपयोग भी उपलब्ध जल संसाधनों के समुचित विकास में सहायक है।

जल संरक्षण– 16 मई 2006 से 15 जून 2006 को राजस्थान सरकार ने पानी के भारी संकट को देखते हुये ग्रामीण जनता को जल संरक्षण हेतु प्रोत्साहन करने के उद्देश्य से जल चेतना और जल रथ यात्राएँ संचालित की गई, गाँवों से यात्राएँ करके जनता को जल का संरक्षण करने के लिये प्रोत्साहित किया।

मानव संसाधन विकास

राजस्थान में मानव संसाधन विकास के लिये योजनाओं के अन्तर्गत प्रभावी कदम उठाये गये हैं। जहाँ एक ओर तकनीकी, व्यावसायिक व सामान्य शिक्षा सेवाओं का विस्तार कर राज्य में साक्षरता एवं व्यावसायिक योग्यता में वृद्धि का मार्ग प्रशस्त किया है वहाँ दूसरी ओर चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार, कुपोषण से बचाने के लिये यथासंभव पौष्टिक आहार की आपूर्ति में वृद्धि आदि से लोगों की औसत आयु बढ़ी है और उनकी कुशलता में वृद्धि हुई है फिर भी भारत के विकसित राज्यों के मुकाबले में राजस्थान में मानव संसाधनों के विकास की गति धीमी है और राज्य में अभी भी कई लोग कुपोषण के शिकार हैं।

मानव विकास के लिये शिक्षा प्रसार को आधार माना जा सकता है इसलिये राजस्थान में योजनाबद्ध विकास के अन्तर्गत शिक्षा प्रसार पर बल दिया गया। जहाँ 1950–51 में साक्षरता का प्रतिशत 8.95 था वह 1991 में 38.6% और 2001 में 60.4% हो गया। 1994–94 का बजट शिक्षा को समर्पित बजट था। राज्य के सभी जिलों में सम्पूर्ण साक्षरता का कार्यक्रम लागू किया गया है।

राज्य में पिछड़ापन एवं गरीबी के कारण सामान्य जनता का जीवन स्तर काफी नीचा है। राज्य में लोगों को पौष्टिक आहार उपलब्ध कराने के लिये दूध, साग–सब्जियाँ, मछली एवं मांस उत्पादन को बढ़ावा दिया गया है और उनकी पर्याप्त वितरण व्यवस्था का प्रयास किया गया है। फिर भी राज्य के लोगों को पर्याप्त पौष्टिक आहार नहीं मिल पाता। गर्भवती महिलायें व बच्चे कुपोषण के अधिक शिकार हैं। कुपोषण के कारण कई बच्चों की अकाल मृत्यु हो जाती है। महिलाएं कमजोर और उनकी सन्तान भी काफी कमजोर होती है। 70% बच्चों का वजन सामान्य से नीचे है। राज्य में शिशु मृत्यु दर भारतीय औसत 91 के मुकाबले 96 प्रति हजार है। इसके लिए सरकार द्वारा महिलाओं को विटामिन, आयरन तथा स्वास्थ्य वृद्धि की गोलियां मुफ्त बाँटी जाती है।

मानव विकास के लिये राज्य में लोगों की आय एवं रोजगार बढ़ाकर उनके जीवन स्तर में वृद्धि के लिये राज्य में योजनाबद्ध आर्थिक विकास का क्रम पिछले 48 वर्षों से चलाया जा रहा है। जिसके अन्तर्गत राज्य में पंचवर्षीय योजनाएँ तथा वार्षिक योजनाएँ क्रियान्वित की गई है। जहाँ प्रथम योजना में सार्वजनिक क्षेत्र का कुल व्यय 1,960 करोड़ रु. था वह बढ़कर नवीं योजना में लगभग 27,260 करोड़ रु. हो गया था।

राज्य में पानी का नितान्त अभाव होने से सदैव मानव एवं पशुओं के पेयजल की समस्या रही है। इससे निपटने के लिए पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत राज्य सरकार ने जल प्रदाय योजनाओं को हाथ में लिया। अब राज्य के लगभग 37750 गाँवों में पेयजल की पूर्ण या आंशिक व्यवस्था हो गई है। स्वच्छता व्यवस्था ग्राम पंचायतों और नगरपालिकाओं को सौंपी गयी है जो अपनी वित्तीय स्थिति और प्रशासनिक कुशलता के आधार पर इस कार्य में संलग्न है।

इस प्रकार मानव विकास कार्यक्रमों को बढ़ावा देकर आधुनिक राजस्थान में सामाजिक विकास को उन्नत किया जा सकता है।

खाद्य सुरक्षा

खाद्य और सार्वजनिक वितरण विभाग देश की खाद्य अर्थव्यवस्था का प्रबन्ध करता है। यह खाद्यान्न की खरीद, उनके भंडारण, परिवहन एवं वितरण एजेंसियों तक उनकी आपूर्ति का कार्य करता है। अन्न के उत्पादन पर कड़ी नजर रखी जाती है और देश के विभिन्न भागों में उचित मूल्यों पर उनकी

पर्याप्त उपलब्धता सुनिश्चित करने के प्रयास किए जाते हैं।

कालाबाजारी और जमाखोरी रोकने के लिए केन्द्र और राज्य सरकारें द्वारा कालाबाजारी की रोकथाम तथा आवश्यक वस्तु–आपूर्ति एवं रख–रखाव अधिनियम 1980 को क्रियान्वित किया जा रहा है। इस अधिनियम के तहत केन्द्र और राज्य सरकारों को यह अधिकार है कि वे ऐसे व्यक्तियों को हिरासत में ले सकें जिनकी गतिविधियाँ समुदाय के लिए आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति बनाएं रखने के मामले में संदिग्ध पाई जाती है।

वायदा व्यापार आयोग एक वैधानिक निकाय है, जिसकी स्थापना वायदा अनुबंध (विनियमन) अधिनियम 1952 के तहत की गई है। यह आयोग उपभोक्ता मामले, खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण मंत्रालय के अधीन काम करता है। आयोग वस्तुओं में वायदा कारोबार को मान्यता प्राप्त संगठनों के माध्यम से नियंत्रित करता है और देश में वायदा बाजार की कार्य प्रणाली में सामान्य सुधार लाने की सिफारिश करता है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम–

1986 में लागू इस अधिनियम द्वारा उन सभी उपभोक्ता के अधिकारों को सुरक्षा प्रदान की गई है जिनको अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार किया गया हैं जैसे–सुरक्षा, उत्पादित वस्तु का मूल्य उसकी गुणवत्ता के आधार पर हो, सम्पूर्ण निर्माण और सेवा क्षेत्र में कुशलता, पारदर्शिता एवं उत्तरदायित्व हो। उपभोक्ता के जीवन एवं सम्पत्ति के लिये हानिकारक उत्पादन के विक्रय पर नियंत्रण करना तथा जो भी सामग्री उपभोक्ता खरीदता है उसकी गुणवत्ता और मूल्य का उचित निर्धारण हो यदि उपभोक्ता को मूल्य के आधार पर गुणवत्ता उपलब्ध नहीं होती है तब ऐसी स्थिति में उपभोक्ता जहाँ से वस्तु खरीदी गई उस दूकान, संस्था आदि के विरुद्ध पहले जिला उपभोक्ता मंच में अपना दावा पेश कर सकता है, यदि दावा सही पाया जाता है तो मंच दुकान, संस्था एवं निर्माता को जुर्माना देने की सजा सुना सकता है। जिला उपभोक्ता मंच के निर्णय के विरुद्ध राज्य उपभोक्ता मंच में अपील भी की जा सकती है। उपभोक्ता मंच का गठन राज्य स्तर एवं जिला स्तर पर किया गया है। राज्य स्तर पर एक अध्यक्ष एवं दो सदस्य होते है। अध्यक्ष उच्च न्यायालय का न्यायाधिपति या पूर्व न्यायाधीपति या न्यायाधिपति होने की योग्यता रखता हो, दो सदस्य सामाजिक कार्यकर्ता होते है। जिला स्तर पर भी एक अध्यक्ष एवं दो सदस्य होत है, अध्यक्ष– जिला सत्र न्यायाधीश या पूर्ण न्यायाधीश होते है, दो सदस्य समाजिक कार्यकर्ता होते हैं, इनमें से एक सदस्य महिला होनी चाहिये।

अन्नपूर्णा योजना–

यह योजना ग्रामीण विकास मंत्रालय की है। इसके अन्तर्गत 65 वर्ष या उससे अधिक आयु वर्ग के ऐसे असहाय वृद्ध नागरिक आते हैं, जो राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना के पात्र तो हैं, उन्हें इस योजना का लाभ नहीं मिल रहा है। इस योजना में प्रति व्यक्ति प्रतिमाह 10 किग्रा खाद्यान्न निःशुल्क दिया जाता है।

गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों को खाद्यान्न की न्यूनतम मात्रा की उपलब्धता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से सरकार ने लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली की शुरूआत की। लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली को प्रभावी बनाने के लिए सरकार द्वारा निर्धनों में से निर्धनतम व्यक्तियों के लिए अन्त्योदय अन्न योजना की शुरुआत की गई। इस योजना के अन्तर्गत प्रत्येक पात्र परिवार को दो रुपये प्रति किलोग्राम गेहूं तथा तीन रुपये प्रति किलो ग्राम चावल की अत्यधिक रियायती दर पर खाद्यान्न उपलब्ध कराया गया।

सरकार केन्द्रीय एवं राज्य पूल के लिये खरीदे गये खाद्यान्न की गुणवत्ता पर समुचित नियंत्रण रखती है। आर्थिक उदारीकरण के युग में जहाँ खाद्य प्रंसस्करण उद्योग के विकास में निजी, सार्वजनिक और सहकारी क्षेत्र को कारगर भूमिका अदा करती है, मंत्रालय इसक्षेत्र में पूंजी निवेश बढ़ाने, उचित दिशा–निर्देश देने, निर्यात–प्रोत्साहन तथा उचित माहौल बनाने में उत्प्रेरक की भूमिका निभाता है।

इस प्रकार खाद्य सुरक्षा के उचित प्रबन्धन से आधुनिक राजस्थान में सामाजिक विकास की गति को बढ़ावा मिल सकता है।

आर्थिक उदारीकरण और सामाजिक दर्शन

आर्थिक उदारीकरण का मुख्य उद्देश्य अर्थव्यवस्था को प्रतिस्पर्धात्मक, आधुनिक व कार्यकुशल बनाना था ताकि भारतीय माल विश्व–प्रतिस्पर्धा में टिक सके और राज्य की अर्थव्यवस्था विश्व की अर्थव्यवस्था से जुड़ सके। इसके लिए बाजार–संयंत्र को अपनाने पर बल दिया गया ताकि आर्थिक निर्णयों में बाजार की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो सके। अतः नई आर्थिक उदारीकरण की नीति में बाजारीकरण, निजीकरण व वैश्वीकरण अथवा अन्तर्राष्ट्रीयकरण को अधिक महत्त्व दिया गया।

राजस्थान में औद्योगिक क्षेत्र में उदारीकरण व सुधार की प्रक्रिया बहुत–कुछ औद्योगिक नीति (1990) के तहत ही चल रही है। लेकिन सही रूप में राज्य में आर्थिक उदारीकरण की प्रक्रिया का सिलसिला जून 1994 से प्रारम्भ हुआ जब राज्य सरकार ने अपनी नई औद्योगिक नीति की घोषणा की।

उदारीकरण के फलस्वरूप राज्य के लघु व कुटीर उद्योगों के विकास को क्षति नहीं पहुँचनी चाहिए। अल्पकाल व मध्यकाल में समाज के कमजोर वर्गों को सुधारों के प्रतिकूल व कष्टदायक प्रभावों से बचाने का पूरा प्रयत्न किया जाना चाहिए।

आर्थिक सुधारों को पूर्णतया जनहितकारी व लोक कल्याण कारी बनाना रहा है और उदारीकरण के फलस्वरूप गरीबों पर अनुचित आर्थिक भार न पड़े, राज्य के परम्परागत कुटीर व ग्रामीण उद्योग अधिक समृद्ध हों तथा बेरोजगार व्यक्तियों को काम उपलब्ध किया जा सके ताकि उनका जीवन स्तर उन्नत हो सके। वास्तव में आर्थिक उदारीकरण के लिए जन–सहयोग तभी सम्भव हो सकता है जब लोग इनसे प्रत्यक्षतया लाभान्वित हो, अन्यथा उनकी इन सुधारों में कोई रुचि नहीं हो सकती। यह सही है कि आर्थिक सुधारों का लाभ केवल समाज के सम्पन्न व सम्भ्रान्त वर्ग तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए, बल्कि इनमें समाज के कमजोर व उपेक्षित वर्ग की भी भागीदारी होनी चाहिए।

गरीबी उन्मूलन

भारत के सन्दर्भ में यह कहा जाता है कि “भारत एक समृद्ध देश है जिसमें निर्धन जनता बसती है” राजस्थान के सन्दर्भ में भी सही एवं सटीक लगता है। राजस्थान विशाल भू–भाग एवं विविध खनिज सम्पदा की समृद्धि के बावजूद अल्प विकास एवं जलाभाव के कारण आर्थिक पिछड़ेपन एवं गरीबी के कुचक्र में फंसा हुआ राज्य है। आज समूचा विश्व इस भय से त्रस्त है कि “गरीबी अभिशाप ही नहीं वरन् विश्व शान्ति एवं आर्थिक समृद्धि का सबसे बड़ा खतरा है।” यही कारण है कि सभी राष्ट्र गरीबी उन्मूलन के लिये प्रभावी कदम उठाने को बाध्य हैं। पांचवीं पंचवर्षीय योजना में “गरीबी उन्मूलन” को योजना का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य स्वीकार किया गया। यह कार्यक्रम इसके बाद निरन्तर हर योजना में चलता रहा है।

राजस्थान में गरीबी उन्मूलन व रोजगार सृजन के कई विशेष कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये हैं जिनमें समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, जवाहर रोजगार योजना, ट्राइसम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम आदि प्रमुख कार्यक्रम हैं। गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम को योजनाओं का मुख्य भाग बनाने के पीछे उद्देश्य यह है कि– सामाजिक विषमताओं को दूर करना, गरीब से गरीब व्यक्ति के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन स्तर को ऊँचा उठाना था। यह कार्यक्रम महात्मा गाँधी के इस चिन्तन से प्रभावित है कि 'राज्य को अन्तिम व्यक्ति तक पहुँचना।

विभिन्न योजनाये:–

(1) समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम–

यह कार्यक्रम ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों की आय अर्जन क्षमता वृद्धि हेतु उन्हें आय अर्जन के साधन सुलभ कराने व रोजगार के अवसर प्रदान कर उन्हें आत्मनिर्भर बनाने के लक्ष्य से प्रेरित है।

(2) राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम–

इसके अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूल भवन बनाने, ग्रामीण सड़कों का निर्माण, लघु सिंचाई एवं भूमि संरक्षण कार्यक्रमों तथा कुएँ खुदवाने आदि पर मजदूरी पर रोजगार बढ़ाने की व्यवस्था थी। इसके माध्यम से अकाल राहत कार्यों पर भी रोजगार दिया जाता था और "काम के बदले अनाज" की व्यवस्था भी राजस्थान में लागू की गई जिसमें केन्द्र व राज्य का हिस्सा 50:50 होता है।

(3) सुनिश्चित रोजगार योजना–

इस योजना के अन्तर्गत गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले प्रत्येक परिवार में कम से दो सदस्यों को वर्ष में 100 दिन का रोजगार उपलब्ध करने की सुनिश्चित करती है।

(4) जीवनधारा योजना–

इस योजना के अन्तर्गत लघु एवं सीमान्त कृषकों को कुओं के निर्माण एवं लघु सिंचाई कार्यों के लिये शत–प्रतिशत अनुदान दिया जाता है।

(5) बंधुआ मजदूरों की पहचान एवं पुनर्वास–

इस कार्यक्रम का संचालन केन्द्र सरकार की सहायता से बन्धुआ मजदूर मुक्ति अधिनियम 1976 के अन्तर्गत किया जा रहा है।

(6) अपना गाँव अपना काम–

इस कार्यक्रम में जनोपयोगी सामुदायिक निर्माण कार्यों को करने तथा रोजगार वृद्धि के उद्देश्य को शामिल किया गया है।

(7) डांग क्षेत्र विकास योजना–

यह योजना 1995–96 में चम्बल घाटी क्षेत्र में गहरी घाटियों के क्षेत्र में विकास कार्य हेतु चलाई।

(8) मगरा क्षेत्र विकास योजना–

यह राजस्थान के पहाड़ी क्षेत्र के लागों का आधारभूत सुविधाओं, विकास और रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना है।

(9) मेवात क्षेत्र विकास–

1987–88 में मेवात क्षेत्र– अलवर, भरतपुर और मेव आबादी वाले क्षेत्र में विकास कार्यक्रम लागू किया, नागरिकों को आधारभूत सुविधायें उपलब्ध कराना मुख्य उद्देश्य रहा है।

(10) राजीव गाँधी पारम्परिक जल स्रोत संधारण कार्यक्रम अक्टूबर 1999 में इस योजना को लागू किया, इसका मुख्य उद्देश्य वर्षा के जल को संरक्षित कर भूमिगत जल स्रोत को बढाना, इसके लिये परम्परागत जल स्रोतो को पुनः निर्माण एवं व्यवस्थित करना भी एक कार्यक्रम रहा। कार्यक्रम क्रियांन्विति हेतु राज्य सरकार और जनता का व्यय अनुपात 70.30 का रखा गया।

(11) वानप्रस्थ योजना – सेवा निवृत व्यक्ति अपनी अभिरुचि के अनुसार स्वैच्छिक सेवायें प्रदान कर सकता था।

केन्द्र प्रवर्तित योजनायें :– गरीबी उन्मूलन हेतु अनेक ऐसी योजनायें राजस्थान में संचालित हैं, जो कि केन्द्र सरकार द्वारा लागू की गई है। इनमें प्रमुख योजनायें है :–

इंदिरागांधी आवास योजना 1996 में लागू की गई, गरीबी रेखा से नीचे के व्यक्तियों को आवास उपलब्ध कराना था।

एकीकृत बंजर भूमि विकास योजना 1992–93 में लागू की गई, इससे राजस्थान का बड़ा भू–भाग उपजाऊ बनाया जा सकता है।

मरु विकास योजना – अप्रेल 1991 में लागू की गई मरु विकास के लिये केन्द्र 75 प्रतिशत और राज्य 25 प्रतिशत राशि व्यय करने की व्यवस्था रखी गई है।

सीमा क्षेत्र विकास योजना – राजस्थान के सीमान्त जिले बाडमेर, जैसलमेर, बीकानेर और गंगानगर में आधारभूत विकास के लिये भारत सरकार राशि उपलब्ध कराती है। मानव संसाधन विकास कार्यक्रमों के विकास को बढ़ावा दिया गया है।

इसके अतिरिक्त सांसद विकास कार्यक्रम 1992–93 में बन्धुआ मजदूर मुक्ति एवं पुनर्वास योजना, जीवन धारा योजना (1995–96), बीस–सूत्री कार्यक्रम (जुलाई 1975), महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम (महानरेगा) महत्वपूर्ण योजनायें हैं।

ग्रामीण विकास और गरीबी उम्मूलन हेतु राज्य और केन्द्र सरकार के लिये सर्वाधिक महत्वपूर्ण उत्तरदायी कार्यक्रमों में से एक हैं। राजस्थान में 2001 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या का 76. 62 प्रतिशत भाग ग्रामीण जनसंख्या का है, स्पष्ट है कि भारत अभी भी गाँवों में बसता है, उसके विकास का उत्तरदायित्व को निभाना ही राष्ट्रीय विकास की कूंजी है। गरीबी उन्मूलन की दृष्टि से सरकार ने पंचवर्षीय योजना में कुछ लक्ष्य निर्धारित किये हैं, स्वास्थ्य एवं शीघ्र मृत्यु दर को 28 प्रतिशत नीचे लाना, महिलाओं और लड़कियों में रक्ताल्पता 50 प्रतिशत कम करना, शिक्षित बेरोजगारी को 5 प्रतिशत नीचे लाना, स्वच्छ पेयजल की सुविधा प्रत्येक गॉव में उपलब्ध कराना 7 करोड़ लोगों को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना आदि।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न :–

1. मुदालियर आयोग का गठन किया गया–
   (अ) 1948 में (ब) 1949 में
   (स) 1952 में (द) 1956 में
2. 'शिक्षा' किस सूची का विषय हैं–
   (अ) राज्य सूची का (ब) संघ सूची का
   (स) विशेष सूची (द) समवर्ती सूची का
3. टेलीमेडिसन योजना का उद्घाटन किया गया –
   (अ) भीलवाड़ा से (ब) झालावाड़ से
   (स) बाँसवाड़ा से (स) उदयपुर से

4. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम किस वर्ष उपभोक्ताओं को दिया गया है –
   (अ) 1990 (ब) 1985
   (स) 1986 (द) 1980
5. कौनसी पंचवर्षीय योजना में 'गरीबी उन्मूलन' को शामिल किया गया है–
   (अ) प्रथम पंचवर्षीय योजना (ब) पाँचवी पंचवर्षीय योजना
   (स) सांतवी पंचवर्षीय योजना (द) आठवीं पंचवर्षीय योजना

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न :–

1. कोठारी शिक्षा आयोग का गठन कब किया गया?
2. विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का दूसरा नाम बताइये?
3. गुरू मित्र योजना कब व किसके सहयोग से स्थापित की गई?
4. टेलीमेडिसन योजना कब व किनके लिए शुरु की गई?
5. राजस्थान के जल स्रोतों को कितने भागों में बॉटा जा सकता है? उनके नाम बताइये।
6. मई, 2006 में निकाली गई जल चेतना रैली का उद्देश्य बताइये।
7. अन्नापूर्णा योजना क्या हैं?
8. जीवन धारा योजना किससे सम्बन्धित हैं?
9. भू–गर्भीय जल स्रोतों के नाम बताइये।
10. डांग क्षेत्र विकास योजना क्या है?
11. आर्थिक उदारीकरण का उद्देश्य क्या है।
12. सुनिश्चित रोजगार योजना के अन्तर्गत कितने दिन का रोजगार दिया जाता हैं?
13. भारतीय मानक ब्यूरों का मुख्य कार्य हैं।

लघूत्तरात्मक प्रश्न :–

1. आजादी के बाद शिक्षा व्यवस्था किन तीन भागों में विभक्त की गई।
2. 1986 में लागू नई राष्ट्रीय–शिक्षा नीति की क्या विशेषतायें हैं।
3. लोक जुम्बिश योजना क्या है?
4. शिक्षा के आधार क्या है?
5. भारतीय चिकित्सा परिषद् का गठन क्यों किया गया, इसके कार्य क्या है?
6. जल–संसाधन कितने भागों में विभाजित किया जा सकता है?
7. पोष्टिक आहार उपलब्ध कराने के लिये क्या नीति अपनाई गई है?
8. जल प्रदाय योजना के तहत गॉव और शहरों में पानी पहुँचाने की क्या व्यवस्था की गई है।
9. 1980 का कालाबाजारी रोकथाम तथा आवश्यक वस्तु आपूर्ति एवं रख रखाव अधिनियम क्या है?
10. राज्य उपभोक्ता एवं जिला उपभोक्ता संरक्षण की संरचना क्या हैं?
11. अपना गाँव अपना काम योजना क्या हैं?
12. सीमा क्षेत्र विकास योजना क्या हैं?

निबन्धात्मक प्रश्न :–

1. स्वतन्त्र भारत में शिक्षा के विकास पर प्रकाश डालिये।
2. खाद–सुरक्षा के लिये सरकार ने क्या कदम उठायें है, उल्लेख कीजिये।
3. राजस्थान में मानव विकास पर प्रकाश डालिये।
4. उपभोक्ता मंच क्या है, उसकी कार्यव्यवस्था पर प्रकाश डालिये।
5. चिकित्सा क्षेत्र में किये गये कार्यो ओर योजनाओं का वर्णन कीजिये।

अध्याय–5
राजस्थान में नगरीय स्वशासन

स्थानीय शासन को साधारणतः स्थानीय स्वशासन कहा जाता है। स्थानीय स्वशासन शब्द भारत को ब्रिटिश शासन से विरासत में मिला है। ब्रिटिश सरकार ने भारतीयों को स्वशासन का अधिकार देने की शुरुआत स्थानीय स्तर पर म्यूनिसिपल संस्थाओं के माध्यम से की थी। भारतीयों को कुछ मात्रा में स्वशासन का अधिकार देने का यह प्रयास था। अतः भारत के स्वतन्त्र होने तथा लोकतंत्र स्थापित होने पर स्वशासन शब्द का प्रयोग अर्थहीन हो गया।

भारतीय संविधान में स्थानीय शासन को राज्य सूची में रखा गया है। स्थानीय शासन को दो भागों में विभक्त किया गया, एक शहरी तथा दूसरा ग्रामीण। शहरी निकायों को महानगरों में नगर निगम, नगरों के नगर परिषद् तथा छोटे नगरों में नगरपालिका कहा जाता है। स्वतंत्रता के बाद स्थानीय शासन की संस्थाओं का निरन्तर विकास हुआ। 1993 में 74वें संविधान संशोधन द्वारा शहरी स्थानीय शासन की संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्राप्त हुआ है।

नगरीय स्थानीय स्वायत्त शासन के क्षेत्र में राजस्थान अग्रणी प्रान्तों में रहा है। इस प्रदेश में प्रथम नगरपालिका की स्थापना आबू में 1865 ई. में हुई। 1885 तक बीकानेर, जोधपुर तथा कोटा में भी नगरपालिकाएँ स्थापित हुईं, किन्तु लोकप्रिय जनतांत्रिक सहभागिता नहीं थी। प्रोफेसर भाम्भरी लिखते हैं कि स्वतंत्रता से पूर्व राजस्थान में नगरपालिका संस्थाओं में सरकारी अधिकारियों का वर्चस्व था और ये संस्थाएँ नाममात्र का काम करती थीं। स्वतंत्रता के बाद 22 देशी रियासतों से मिलकर राजस्थान बना, उस समय एक सामान्य कानून की आवश्यकता अनुभव हुई। 1951 में 'राजस्थान कस्बा नगरपालिका अधिनियम' पारित किया गया, जिसके अन्तर्गत प्रमुख नगरों को छोड़कर सभी कस्बों की नगरपालिकाएँ काम करने लगीं। 1956 में अजमेर और माउण्ट आबू राजस्थान में सम्मिलित किये गये और उसके बाद राजस्थान सरकार ने राज्य के सभी नगरों एवं कस्बों की नगरपालिकाओं के लिए 1959 में राजस्थान नगरपालिका अधिनियम पारित किया। 1990 में इसके अनुच्छेद 5(स) में संशोधन कर नगरपालिकाओं का वर्गीकरण किया गया।

राजस्थान नगरपालिका अधिनियम, 1994 भी 74वें संविधान अधिनियम, 1992 के अनुसरण करने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम माना जायेगा।

नगरीय स्थानीय शासन का अर्थ एवं महत्त्व :–

अर्थ :– स्थानीय शासन को विभिन्न देशों में अलग–अलग नामों से पुकारा जाता है; भारत में स्थानीय स्वशासन, फ्रांस में स्थानीय प्रशासन, अमेरिका में म्यूनिसिपल शासन आदि नामों से पुकारा जाता है। मूल रूप में स्थानीय शासन का अभिप्राय यह है कि स्थानीय मामलों का प्रबन्ध स्थानीय व्यक्ति स्वयं अपने प्रतिनिधियों द्वारा करे।

भारतीय संविधान की 7वीं अनुसूची की 5वीं प्रविष्टि में लिखा है, ''स्थानीय शासन अर्थात् नगर निगम, सुधार न्यासों, जिला परिषदों, खनन बस्ती, प्राधिकरणों तथा स्थानीय स्वशासन अथवा ग्राम प्रशासन के प्रयोजनों के लिए अन्य स्थानीय प्राधिकारियों का गठन तथा शक्तियाँ।

इस प्रकार स्थानीय शासन से अभिप्राय ऐसी संस्थाओं के शासन से है जो स्थानीय स्तर

की हैं और इन्हें स्थानीय स्तर पर निर्वाचित प्रतिनिधि संचालित करते हैं। इन संस्थाओं को अपने कार्यक्षेत्र में पर्याप्त स्वायत्तता प्राप्त होती है किन्तु ये अपने क्षेत्र में सम्प्रभु नहीं होती।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि स्थानीय व्यक्ति स्वयं अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से स्थानीय मामलों का प्रबन्ध करे। व्यवहार में नगर निगमों, नगर परिषदों तथा नगरपालिकाओं आदि के द्वारा सम्पादित किये जाने वाले समस्त कार्य स्थानीय शासन के अन्तर्गत आते हैं।

ओ. पी. गाबा के अनुसार, ''स्थानीय स्वशासन, शासन का वह हिस्सा है जिसका मुख्य सरोकार किसी नगर या सीमित क्षेत्र के स्थानीय मामलों से होता है। स्थानीय शासन राज्य सरकार या राष्ट्रीय सरकार से प्राप्त शक्तियों का प्रयोग करता है।''

एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के अनुसार, ''स्थानीय शासन से तात्पर्य है—पूर्ण राज्य की अपेक्षा आन्तरिक तथा छोटे प्रतिनिधित्व क्षेत्र में निर्णय लेने तथा उनको क्रियान्वित करने वाली सत्ता।''

स्थानीय शासन का महत्त्व :—

लोकतंत्र को विकेन्द्रीकृत करने का माध्यम स्थानीय शासन संस्थाएँ ही हैं। स्थानीय शासन लोगों को यह अवसर प्रदान करता है कि वे स्थानीय कार्यों का निपटारा स्वयं अपनी सक्रिय भागीदारी से करें। आधुनिक लोकतंत्रीय शासन व्यवस्थाओं में स्थानीय शासन के महत्त्व को निम्न बिन्दुओं के रूप में व्यक्त कर सकते हैं :—

(1) नगरीय स्वशासन लोकतंत्र की नींव और आधारशिला है।
(2) नगरीय स्वशासन लोकतंत्र की सर्वश्रेष्ठ शिक्षण संस्थान है।
(3) लोकतंत्र की वास्तविक प्रयोगशाला।
(4) स्वशासित संस्थायें नागरिकों को जागरूक तथा उत्तरदायित्व का बोध कराती हैं।
(5) ये संस्थाएँ नागरिकों की सार्वजनिक कार्यों में गुणात्मक रुचि का विकास करती हैं।
(6) नागरिकों को राष्ट्रीय मुख्य धारा में बनाये रखना।
(7) नागरिकों में इन संस्थाओं के माध्यम से व्यापक दृष्टिकोण का विकास होता है।
(8) स्थानीय स्वशासन के माध्यम से केन्द्रीय एवं प्रान्तीय सरकारों की कुशलता में वृद्धि होती है।
(9) लोक कल्याणकारी राज्य के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहयोग।
(10) सरकार व जनता के मध्य सम्प्रेषण का कार्य सम्पन्न होता है।
(11) नौकरशाही की बुराइयों पर अंकुश लगता है।
(12) स्थानीय स्वायत्त शासन से सरकारी मितव्ययता।
(13) कार्य सम्पादन में शीघ्रता।

अतः आधुनिक राज व्यवस्था में नगरीय स्वशासन की सार्वजनिक हितों की पूर्ति के लिए भूमिका महत्त्वपूर्ण है।

स्थानीय स्वायत्त शासन के विकास की पृष्ठभूमि :—

भारत में वर्तमान नगरीय स्थानीय स्वायत्त शासन संस्थाएँ यद्यपि आधुनिक काल का विकास है, फिर भी प्राचीनकाल से ही हमारे देश में स्थानीय शासन की व्यवस्था रही है। वैदिक युग से अब तक स्थानीय स्वायत्त शासन भारतीय लोक कल्याणकारी चिन्तन, नीतियों एवं कार्यक्रमों का महत्त्वपूर्ण वैचारिक पक्ष रहा है। हमारे प्राचीन साहित्य में अनेक सन्दर्भ विद्यमान हैं, जिनसे उस

समय इन संस्थाओं की श्रेष्ठता व गुणवत्ता प्रमाणित होती है।

भारत में स्थानीय स्वायत्त शासन के स्वरूप के विकास का विवेचन निम्नलिखित शीर्षकों के माध्यम से किया जा सकता है :–

प्राचीनकाल में स्थानीय स्वशासन :–

ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में सभा, समिति एवं विदथ जैसी संस्थाओं का उल्लेख मिलता है। वाल्मीकि रामायण में पौर तथा जनपद सभाओं की सत्ता का उल्लेख मिलता है। महाभारत में नगरों के शासनाधिकारी को 'स्वार्थचिंतक' कहते थे। चन्द्रगुप्त मौर्य ने स्वायत्त शासन प्रणाली प्रचलित कर दूरदर्शिता और कुशल राजनीतिज्ञ का परिचय दिया। उसने शासन के विकेन्द्रीकरण की नीति अपनाई।

चन्द्रगुप्त मौर्य के शासनकाल में नगर की प्रशासन व्यवस्था सन्तोषजनक थी। कौटिल्य के अर्थशास्त्र के अनुसार नगर का सबसे बड़ा पदाधिकारी 'नागरिक' कहलाता था। मैगस्थनीज ने इण्डिका नामक पुस्तक में पाटलिपुत्र नगर की प्रशासन व्यवस्था का विस्तृत विवरण दिया है जिससे विदित होता है कि वह एक प्रकार की म्यूनिसिपल व्यवस्था थी। उसकी तुलना आज की म्यूनिसिपल कार्य–प्रणाली से की जा सकती है। पाटलिपुत्र का प्रशासन पाँच–पाँच सदस्यों की 6 समितियाँ करती थीं।

इन समितियों का कार्य क्रमशः औद्योगिक शिल्पों की देख–रेख, अतिथियों व विदेशियों के स्वागत–सत्कार का प्रबन्ध, जन्म–मृत्यु का अभिलेख रखने, व्यापार का प्रबन्धन तथा नाप–तौल के पैमानों का निरीक्षण, कारखानों के मालिकों पर अनुशासन रखना तथा बिक्रीकर वसूल करना आदि था। संयुक्त रूप से इन छहों समितियों पर नगरपालिका पर सार्वजनिक भवनों की मरम्मत, बाजारों, मूल्य निर्धारण तथा मन्दिरों की देख–रेख आदि का उत्तरदायित्व था।

गुप्त युग में भी स्थानीय स्वशासन की रूपरेखा लगभग मौर्यकालीन ही रही।

मध्यकाल में स्थानीय स्वशासन (1200–1707 ई.) :–

मुगल शासनकाल में कस्बों और नगरों में नगरपालिका प्रबन्ध की व्यवस्था थी। डॉ. श्रीराम महेश्वरी ने अबुल फजलकृत आइन–ए–अकबरी का लेखांश उद्धृत किया है, जिसमें नगरीय जीवन व प्रशासन का वर्णन मिलता है :–

नगरीय प्रशासक के पद के लिए व्यक्ति को अनुभवी, क्रियाशील, विचारवान, धैर्यवान, चतुर और दयालु होना चाहिए। उसे मकानों तथा प्रयुक्त होने वाले मार्गों की पंजिका रखनी चाहिए। नागरिकों को पारस्परिक सहायता के लिए प्रतिज्ञाबद्ध करना चाहिए। सार्वजनिक मार्गों का निरीक्षण करें। उनके मुहानों पर अवरोधक खड़ा करें। मार्गों को गंदा होने से बचाये। आयात कर वसूल करे। बाटों–नापों की जांच करनी चाहिए। इस नगरीय प्रशासक का कार्य शहर की सुरक्षा व्यवस्था करना, बाजार पर नियंत्रण रखना, अपराधों को रोकना, बूचड़खानों, शमशानों एवं कब्रिस्तानों के नियमों का संचालन करना आदि दर्शाया गया है। पेशवाओं के अधीन मराठा प्रशासन में भी शहरी स्थानीय संस्थाएँ कार्य करती थी।

ब्रिटिशकाल में नगरीय स्वशासन (1700–1947 ई.) :–

भारत में स्थानीय स्वशासन अपनी वर्तमान संरचना और कार्य–प्रणाली में मूलतः ब्रिटिश शासन की झलक मिलती है। ब्रिटिश शासन से पूर्व भारत में जो स्वायत्त शासन व्यवस्था थी, उसे अंग्रेजों ने समाप्त कर दिया और उसके स्थान पर अपनी पद्धति के अनुरूप भारत में स्थानीय स्वायत्त

शासन की स्थापना की। भारतीय स्थानीय संस्थाओं पर पश्चिमी प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा।

ब्रिटिश शासनकाल में स्थानीय स्वायत्त शासन के क्रमिक इतिहास और प्रगति को चार भागों में विभक्त कर सकते हैं :–

(1) **1700–1881 ई.** :– इस अवधि में स्थानीय शासन का उपयोग अंग्रेजों ने साम्राज्यवादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया।

(2) **1882–1919 ई.** :– इस अवधि में स्थानीय शासन के महत्त्व को स्थानीय स्वशासन के रूप में स्वीकृत किया गया।

(3) **1920–1937 ई.** :– इस काल में स्थानीय शासन को प्रान्तों के अधिकार क्षेत्र में हस्तान्तरित कर दिया गया।

(4) **1938–1947 ई.** :– इस अवधि में स्थानीय स्वशासन को लोकतंत्र की आधारशिला मानते हुए उसमें पुनर्निर्माण एवं पुनर्संशोधन के प्रयास हुए।

1700–1881 ई. :–

मद्रास नगर निगम प्रथम आधुनिक स्थानीय संस्था थी जिसकी स्थापना 1687 ई. में की गई। 1726 ई. में बम्बई और कलकत्ता नगरपालिका निकायों की स्थापना की गई। 1773 ई. में रेग्यूलेटिंग एक्ट के अन्तर्गत प्रेसीडेन्सी नगरों में 'जस्टिस ऑफ पीस' की नियुक्ति की गई, जिनका कार्य अपने नगरों की सफाई एवं स्वास्थ्य व्यवस्थाओं का निरीक्षण करना था।

1793 ई. में एक अधिनियम द्वारा प्रेसीडेन्सी नगरों में नगर प्रशासन की स्थापना का उत्तरदायित्व गवर्नर जनरल को सौंप दिया गया। 1863 ई. में कलकत्ता में नगर निगम की स्थापना की गई। लार्ड मेयो ने 1870 ई. में एक प्रस्ताव द्वारा विकेन्द्रीकरण को अनिवार्य मानते हुए स्थानीय शासन संस्थाओं की स्थापना पर बल दिया। 1881 ई. तक पाँच महानगरों में से चार महानगर पालिकाएँ पूर्णतः स्थापित संस्थाएँ थीं।

1882–1919 ई. :–

1882 ई. में लार्ड रिपन का प्रस्ताव अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था। इसमें सम्पूर्ण भारत के लिए स्थानीय स्वशासन संस्थाओं की आधारभूत रूपरेखा प्रस्तुत की गई। संस्थाओं में गैर सरकारी सदस्यों की संख्या अधिक रखी गई। 1883–85 ई. के मध्य अनेक प्रान्तों में स्थानीय स्वशासन अधिनियम पारित हुए, जिसके आधार पर शहरों में नगरपालिकाएँ तथा देहातों में जिला बोर्ड/स्थानीय बोर्ड स्थापित किए गये। 1890 ई. में विकेन्द्रीकरण के प्रश्न पर रॉयल कमीशन ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि धन के अभाव में स्थानीय संस्थाएँ प्रभावी काम नहीं कर पा रही हैं। आयोग ने नगरपालिकाओं को सशक्त बनाने हेतु अनेक महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये। 1918 ई. में मोण्ट–फोर्ड प्रस्ताव में सुझाया गया कि स्थानीय संस्थाओं को प्रतिनिधि संस्था बनाया जाये। इन पर सरकारी नियंत्रण कम हो तथा उन्हें गलतियों से सीखने का अवसर दिया जाए।

1920–1937 ई :–

1919 ई. में माण्टेग्यू चेम्सफोर्ड सुधार अधिनियम बना, जिसके अन्तर्गत स्थानीय स्वशासन का विभाग प्रान्तों के निर्वाचित मंत्रियों के अधीन आ गया। इसका क्रियान्वयन 1920 ई. में हुआ। इस समय स्थानीय संस्थाओं के विकास में महत्त्वपूर्ण प्रगति हुई। 1930 में साइमन आयोग ने स्थानीय

स्वशासन की कार्य प्रगति पर चिंता जताई और नगरीय निकायों पर सरकारी नियंत्रण को सुदृढ़ करने की बात कही।

1935 का अधिनियम पारित हुआ तथा 1937 ई. में प्रान्तों में लोकतंत्रीय मंत्रिमण्डलों का निर्माण हुआ। स्थानीय स्वायत्त शासन में प्रगति होने लगी।

1938—1947 ई :—

1935 के अधिनियम में स्वायत्त शासन को पूर्णतः राज्य अथवा प्रान्त का विषय बना दिया गया। स्थानीय स्वायत्त शासन के महत्त्व को स्वीकार करते हुए प्रजातंत्र की आधारशिला के रूप में इसे स्वीकार कर लिया गया। नगरपालिकाओं का विस्तार हुआ। 1939 ई. में प्रान्तीय मंत्रिमण्डलों द्वारा त्याग—पत्र दिये जाने के कारण स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं का विकास अवरूद्ध हो गया।

स्वतंत्र भारत में नगरीय स्थानीय संस्थाओं का विकास :—

स्वतंत्र भारत में एक दशक तक नगरीय शासन के क्षेत्र में महानगरों में नगर निगम, छोटे शहरों में नगरपालिकाएँ तथा नगर परिषदें ब्रिटिश प्रणाली पर कार्य करती रहीं। औद्योगिकीकरण के कारण शहरों में आवास, सफाई, पानी, बिजली, प्रदूषण, कच्ची बस्तियों आदि की समस्या उत्पन्न होने लगी। अतः 1961 ई. से शहरी स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं को महत्त्व दिया जाने लगा। तीसरी पंचवर्षीय योजना में नगर विकास हेतु मास्टर प्लान, गृह निर्माण हेतु मापदण्ड निर्धारण तथा विकास कार्यक्रमों के लिए इन संस्थाओं को उत्तरदायी बनाया गया।

भारतीय संविधान में 74वें संशोधन द्वारा भाग 9(क) स्थापित किया गया, जिसका शीर्षक है—'नगरपालिकाएँ'। इस व्यवस्था के द्वारा शहरी क्षेत्र में जनसंख्या के अनुपात में तथा वित्तीय साधनों की दृष्टि से तीन प्रकार की नगरपालिकाओं के गठन की व्यवस्था कर इन्हें संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया है, ये हैं—नगरपालिका, नगर परिषद् तथा नगर निगम। भारत में अन्य प्रकार के नगरीय निकाय भी हैं, जो स्थानीय शासन के क्षेत्र में कार्यरत हैं, किन्तु इन्हें संवैधानिक स्तर प्राप्त नहीं हैं। इनका वर्णन इस प्रकार है :—

छावनी मण्डल :—

छावनी मण्डल पर केन्द्र सरकार के सुरक्षा विभाग का नियंत्रण है। यह ब्रिटिश शासनकाल में 1924 छावनी मण्डल अधिनियम के द्वारा स्थापित है। वर्तमान में भारत में लगभग 62 छावनी मण्डल हैं। छावनी मण्डलों का गठन संविधान की सातवीं अनुसूची में संघीय सूची की तीसरी प्रविष्टि में है। छावनी मण्डल की स्थापना ऐसे स्थानों पर की जाती है, जहाँ सेना छावनी में रहती है। राजस्थान में छावनी मण्डल नसीराबाद, जिला अजमेर में है। छावनी मण्डल में आधे सदस्य सेना के अधिकारी तथा आधे सदस्य असैनिक नागरिक होते हैं जिनका निर्वाचन होता है। छावनी मण्डल का अध्यक्ष सैनिक छावनी का सर्वोच्च अधिकारी होता है। उप सभापति असैनिक नागरिकों में से लिया जाता है। निर्वाचित असैनिक सदस्यों का कार्यकाल तीन वर्ष होता है। सैनिक अधिकारियों का कार्यकाल उनके उस छावनी में पद पर बने रहने तक होता है।

छावनी मण्डल के द्वारा निम्न कार्य किये जाते हैं :—

- सार्वजनिक सुरक्षा, सुविधा मार्ग तथा स्वास्थ्य व्यवस्था।
- इमारतों एवं स्थानों को सुरक्षित बनाना या हटाना।
- सड़क पर विद्युत व्यवस्था एवं सफाई व्यवस्था।

- जल व ड्रिनेज व्यवस्था का निर्माण।
- शुद्ध पेयजल की व्यवस्था करना।
- चिकित्सा सुविधाएँ उपलब्ध करवाना तथा टीकाकरण की व्यवस्था करना।
- प्राथमिक शिक्षा केन्द्रों की स्थापना व संचालन करना।
- जन्म और मृत्यु का पंजीकरण।
- कुएं एवं तालाबों का निर्माण और रख–रखाव करना।

इस प्रकार राजस्थान में मात्र एक यही छावनी मण्डल है। यद्यपि राजस्थान में कई स्थानों पर सैनिक छावनियाँ हैं, परन्तु वहाँ प्रशासन के लिए छावनी मण्डल नहीं बनाये गये हैं।

विकास प्राधिकरण :–

महानगरों के क्षेत्र में विकास हेतु विकास प्राधिकरण का गठन राज्य विधानमण्डल अधिनियम बनाकर करते हैं। यह निगमित निकाय होता है। इनका नगरीय स्वशासन संस्था के रूप में विकास के सन्दर्भ में बहुत बड़ा योगदान है। राजस्थान में जयपुर व जोधपुर में विकास प्राधिकरण है। इनका उद्देश्य क्षेत्र का समुचित, व्यवस्थित एवं सुनियोजित विकास करना होता है। प्राधिकरण इस हेतु योजनाओं का निर्माण एवं क्रियान्वयन करता है। जयपुर विकास प्राधिकरण नगर निगम तथा आवासन मण्डल से मिलकर कार्य करता है। विकास प्राधिकरण के सभी सदस्य सरकार द्वारा मनोनीत होते हैं तथा इसके सदस्य अधिकांशतः सरकारी अधिकारी होते हैं। जयपुर व जोधपुर विकास प्राधिकरण, राजस्थान सरकार के नगरीय विकास मंत्री के अधीन आते हैं। जयपुर विकास प्राधिकरण शहरी आवास योजनाएँ, सड़क, बिजली व्यवस्था तथा आधुनिक रूप में मेट्रो–रेल्वे योजनाएँ संचालित करता है। इस क्रम में यह प्राधिकरण शहरी उन्नयन में महत्त्वपूर्ण भागीदारी निभा रहा है। जमीन अवाप्त कर आवासीय योजना के अन्तर्गत मकानों/दुकानों का आवंटन भी करता है।

नगर विकास न्यास :–

छोटे शहरों के विकास हेतु नगर विकास न्यास की स्थापना राज्य विधानमण्डल अधिनियम के माध्यम से की जाती है। यह भी निगमित निकाय है। इसका कार्य भवन निर्माण कानून से लागू करना, सड़कों, पार्कों, बाजारों, खुले स्थानों तथा शौचालयों की व्यवस्था करना आदि है। यह अपने विकास कार्यों को पूर्ण करने के बाद उस क्षेत्र को नगर निगम या नगर परिषद् को रख–रखाव हेतु हस्तांतरित कर देता है।

आवासन मण्डल :–

शहरों की आवास सम्बन्धी समस्याओं के समाधान हेतु राज्य सरकारों द्वारा शहर में आवासन मण्डल गठित किये गये हैं। आवासन मण्डल शहरों में व्यवस्थित तथा पर्यावरण की दृष्टि से स्वच्छ मकानों का निर्माण करता है तथा सभी आवश्यक सुविधाएँ, जैसे–पानी, बिजली, जल–मल निकासी की व्यवस्था, पार्कों का निर्माण करना तथा मकान बनाकर विक्रय करना आदि उपलब्ध करवाता है। आवासन मण्डल के सभी सदस्य सरकार द्वारा मनोनीत होते हैं। यह शहरी क्षेत्रीय विकास मंत्री, राजस्थान सरकार के अधीन आता है।

74वाँ संविधान संशोधन और राजस्थान में नगरीय स्थानीय शासन सम्बन्धी कानून :–

नगरीय स्थानीय संस्थाओं को सशक्त बनाने तथा लोकतांत्रिक प्रक्रिया में शहरी नागरिकों को स्वयं के स्थानीय मामलों का प्रशासन संचालित करने के लिए अधिकार देने के उद्देश्य से भारतीय

संविधान में 74वाँ संशोधन अधिनियम, 1992, नगरपालिकाएँ शीर्षक से भाग 9(क) लागू किया गया, जो 1 जून, 1993 से लागू हुआ। इसकी मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :–

(1) नगरपालिकाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया।
(2) राज्यों में तीन प्रकार की नगरपालिकाओं के गठन का प्रावधान किया गया–नगरपालिका, नगर परिषद् और नगर निगम।
(3) वार्ड समितियों का गठन।
(4) आरक्षण की व्यवस्था–अनुसूचित जातियों, जनजातियों तथा महिलाओं के लिए।
(5) अध्यक्ष, सभापति के लिए आरक्षण।
(6) राज्य विधान मण्डल चाहे तो, अन्य पिछड़े वर्गों हेतु आरक्षण व्यवस्था कर सकता है।
(7) निश्चित कार्यकाल 5 वर्ष निर्धारित किया गया।
(8) नगरपालिकाओं को कर वसूल करने की शक्तियाँ दी गईं।
(9) राज्य वित्त आयोग वित्तीय स्थिति का पुनरावलोकन करेगा।
(10) नगरपालिकाओं के निर्वाचन सम्बन्धी सभी व्यवस्थाओं का दायित्व राज्य निर्वाचन आयोग का होगा।
(11) जिला योजना समिति का गठन।
(12) महानगरीय योजना समिति का गठन।
(13) निर्वाचन क्षेत्रों के परिसिमन और आवंटन से सम्बन्धित किसी विधि की वैधानिकता में न्यायालय हस्तक्षेप से रोक।

12वीं अनुसूची : नगरपालिकाओं के अधिकार :–

संविधान के 74वें संशोधन द्वारा 12वीं अनुसूची (अनुच्छेद 243 ब) में 18 विषयों को सम्मिलित किया गया है। राज्य विधानमण्डल इन विषयों पर नगरपालिकाओं को अधिकार दे सकता है :–

(1) नगर योजना।
(2) भूमि प्रयोग व भवन निर्माण।
(3) सामाजिक विकास हेतु योजनाएँ।
(4) सड़कें और पुल निर्माण।
(5) घरेलू, वाणिज्य एवं औद्योगिक प्रयोजनार्थ जलापूर्ति।
(6) स्वास्थ्य, सफाई सेवा और कूड़ा–करकट का प्रबंधन।
(7) अग्निशमन सेवाएँ।
(8) नगरीय वानिकी, पर्यावरण संरक्षण आदि पहलुओं का प्रबन्धन।
(9) विकलांग व मंदबुद्धि आदि के सामाजिक हितों की सुरक्षा।
(10) बस्तियों का सुधार–उन्नयन।
(11) शहरीय गरीबी कम करने का प्रयास।
(12) बाग–बगीचे, खेल–मैदान की सुविधाएँ।
(13) सांस्कृतिक व कला पक्षों का संवर्धन।
(14) कब्रो, शमशानों तथा उनके लिए भूमि व्यवस्था।
(15) जन्म–मृत्यु पंजीकरण।

(16) पशुओं पर क्रूरता की रोकथाम।

(17) सड़कों का विद्युतीकरण, बस स्टॉप, वाहन पार्किंग व्यवस्था का संधारण।

(18) बूचड़खानों का विनियमन।

राजस्थान नगरीय शासन सम्बन्धी कानून :–

राजस्थान नगरपालिका अधिनियम, 1994 को राजस्थान नगरपालिका (संशोधन) विधेयक, 1994 को ध्वनिमत से पारित कर दिया। विधेयक में नगरपालिकाओं में नियुक्त प्रशासकों की अवधि तीन वर्ष से बढ़ाकर चार वर्ष करने का प्रावधान किया गया। राजस्थान सरकार ने 74वें संविधान संशोधन अधिनियम के अनुसरण में राजस्थान नगरपालिका अधिनियम में प्रभावी परिवर्तन करने का निर्णय लिया। निर्णय के अनुसार विभिन्न जिलों की नगरपालिकाओं के वार्डों में अनुसूचित जाति के लिए 15 प्रतिशत, अनुसूचित जनजाति के लिए 3 प्रतिशत एवं महिलाओं के लिए 33.3 प्रतिशत वार्ड आरक्षित होंगे। अन्य जातियों के पहचान हो जाने एवं उनकी जनसंख्या के अधिकृत आंकड़े प्राप्त होने पर उसी अनुपात में आरक्षण करने का निर्णय लिया गया। इसी अनुपात में नगरपालिकाओं के अध्यक्ष पद भी आरक्षित होंगे।

प्रस्तावित संशोधन के द्वारा नगरपालिका के विघटन के पश्चात् 6 माह की कालावधि में चुनाव कराए जाने का प्रावधान रखा गया है। निस्संदेह इस विधेयक को महत्त्वपूर्ण अधिनियम माना जायेगा।

राजस्थान सरकार ने 18 मार्च, 2008 को शहरी निकायों के निर्वाचन में महिलाओं को 50 प्रतिशत आरक्षण देने का प्रावधान कर दिया है।

अध्यक्ष, सभापति एवं महापौर का निर्वाचन प्रत्यक्ष मतदान से :–

राज्य में शहरी निकायों के सम्बन्ध में नया अध्यादेश लागू किया गया है। अब शहरी निकायों के महापौर, सभापति एवं अध्यक्ष चुनने का अधिकार जनता को सीधे ही प्राप्त हो गया है। जनता द्वारा चुने गये महापौर, सभापति या अध्यक्ष को तीन–चौथाई बहुमत से ही हटाया जा सकता है। 1 अक्टूबर, 2008 को राज्यपाल में इस अध्यादेश को स्वीकृति दे दी। यह व्यवस्था भी की गई कि शहरी निकाय अब अपना बजट स्वयं बना सकेंगे और पारित कर सकेंगे। सार्वजनिक स्थानों पर कचरा या मकान का मलबा फेंकने वालों तथा अतिक्रमण करने वालों पर कई गुना जुर्माना लगाया जा सकेगा। नये अध्यादेश में शहरी निकायों को अधिक शक्तियाँ दी गयी हैं। उनमें प्रशासनिक सुविधाओं, पारदर्शिता, विकेन्द्रीकरण तथा निर्वाचित मण्डलों की सर्वोच्चता पर बल दिया गया है। वर्ष में बोर्ड की कम–से–कम दो बैठकें बुलाना अनिवार्य होगा। दो बैठकों के मध्य कम–से–कम 60 दिन का अन्तराल होगा। 50 हजार से अधिक आबादी वाले शहरों में एरिया सभा का गठन अनिवार्य होगा।

राजस्थान राज्य सरकार ने 25 नवम्बर, 2010 को स्थानीय निकाय अधिनियम के अन्तर्गत अध्यादेश लाते हुए नगरपालिका अधिनियम 2009 की धारा 53 को हटाते हुए नगरपालिका अध्यक्ष, नगर परिषद् सभापति तथा नगर निगम के महापौर के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव लाने का अधिकार खत्म कर दिया था, किन्तु 11 जनवरी, 2011 को जोधपुर उच्च न्यायालय ने राज्य सरकार के 25 नवम्बर, 2010 के अध्यादेश पर रोक लगा दी है।

राजस्थान में नगरीय स्थानीय स्वशासन का संगठनात्मक ढाँचा :–

राजस्थान में शहरी क्षेत्र में स्थानीय स्वायत्त शासन का प्रारम्भ करने हेतु राजस्थान नगरपालिका

अधिनियम 1959 निर्मित किया गया। भारतीय संविधान में 74वें संशोधन से शहरी स्थानीय नगरीय निकायों को सशक्त बनाते हुए तथा संवैधानिक दर्जा प्रदान करते हुए तीन प्रकार की नगरपालिकाओं के गठन का प्रावधान किया गया। राजस्थान नगरपालिका अधिनियम 1959 में ही व्यापक परिवर्तन किये गये तथा तीन प्रकार की नगरपालिकाओं के गठन का प्रावधान किया गया–नगरपालिका मण्डल, नगर परिषद् तथा नगर निगम।

74वें संविधान संशोधन में भी प्रावधान है कि संक्रमणकालीन क्षेत्र, छोटे नगर, बड़े नगर की परिभाषा जनसंख्या, जनसंख्या के घनत्व, आय आदि के आधार पर राज्यपाल जैसा उचित समझे, निर्देशित कर सकते हैं। राजस्थान में 5 लाख या अधिक जनसंख्या वाले पाँच महानगरों–जयपुर, जोधपुर, कोटा, अजमेर और बीकानेर में नगर निगम, 1 लाख या इससे अधिक जनसंख्या वाले शहरों में नगर परिषद् तथा 20 हजार से अधिक जनसंख्या पर नगरपालिकाओं की स्थापना की गई है। राजस्थान में स्थित समस्त नगरपालिकाओं का वर्गीकरण निम्न सारणी के अनुसार किया जा सकता है :–

क्र.सं.	**नाम**	**संख्या**	**वर्गीकरण का आधार**
1.	नगर निगम	5	5 लाख से अधिक जनसंख्या
2.	नगर परिषद्	13	1 लाख से अधिक जनसंख्या, किन्तु 5 लाख से कम।
3.	नगरपालिका	166	20 हजार से अधिक, किन्तु 1 लाख से कम जनसंख्या।
	कुल	**184**	

नगरपालिका/नगर परिषद् : संरचना, कार्य और भूमिका :–

नगरपालिका–नगर परिषद् के सदस्यों का निर्वाचन जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से वयस्क मताधिकार के आधार पर गुप्त मतदान प्रणाली द्वारा किया जाता है। राजस्थान नगरपालिका अधिनियम के अनुसार नगरपालिका–नगर परिषद् के सभी स्थान वार्डों के नाम से प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुने गये व्यक्तियों से भरे जायेंगे। राजस्थान में नगरपालिका के लिए चुने जाने वाले सदस्यों को वार्ड मेम्बर तथा नगर परिषद् सदस्यों को पार्षद कहा जाता है।

स्थानों का आरक्षण :–

शहरीय निकायों में तीनों स्तर पर अनुसूचित जाति, जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग तथा महिलाओं को आरक्षण दिया गया है। निर्वाचन हेतु 21 वर्ष की आयु पूर्ण होनी चाहिए। उसका वार्ड की निर्वाचक नामावली में नाम अंकित होना चाहिए। आरक्षित स्थानों की दशा में वह उस वर्ग का सदस्य होना चाहिए। नगरपालिका–नगर परिषद् का कार्यकाल 5 वर्ष निर्धारित है। इनमें प्रत्येक का अध्यक्ष प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली द्वारा जनता द्वारा सीधा चुना जाता है तथा उपाध्यक्ष को निर्वाचित सदस्य अप्रत्यक्ष प्रणाली से चुनते हैं।

सांविधिक समितियाँ :–

सांविधिक समितियाँ उन्हें कहा जाता है, जिनके गठन, कार्य व शक्तियों का विस्तृत विवरण सम्बन्धित नगरपालिका अधिनियम में ही कर दिया जाता है।

वार्ड समितियाँ :–

जहाँ किसी नगर की जनसंख्या 3 लाख या उससे अधिक है, वहाँ वार्ड समितियों का गठन किया जायेगा। इनमें वार्डों का प्रतिनिधित्व करने वाले सदस्य होंगे।

नगरपालिका एवं नगर परिषद् की शक्तियाँ :—

राजस्थान नगरपालिका अधिनियम 1959 में नगरपालिकाओं व नगर परिषदों की निम्नलिखित शक्तियों का उल्लेख है :—

विधायी शक्तियाँ :—

(1) नियम निर्माण।
(2) नियमों में परिवर्तन।
(3) उपनियमों का निर्माण करना।
(4) लाइसेन्स जारी करने व निलम्बित करने का अधिकार।
(5) सफाई, स्वच्छता, डेयरी तथा दूध भण्डारण।
(6) आवासीय निर्माण व उपयोग को विनियमित करना।

प्रशासनिक शक्तियाँ :—

(1) नीतियों की क्रियान्विति।
(2) अनुबन्ध स्वीकृत करना।
(3) लाइसेन्स जारी करना।

वित्तीय शक्तियाँ :—

(1) सम्पत्ति की अवाप्ति करना।
(2) कर आरोपित करना।
(3) फीस—शुल्क वसूली।
(4) बजट निर्माण करना।
(5) सांविधिक तथा गैर सांविधिक समितियों के सदस्यों का निर्वाचन।

नगरपालिका तथा नगर परिषदों के कार्य :—

राजस्थान नगरपालिका अधिनियम में नगरपालिका तथा नगर परिषद् के कार्यों का उल्लेख किया गया है। ये तीन प्रकार के कार्य हैं—अनिवार्य, ऐच्छिक और विशेष कार्य।

अनिवार्य कार्य :—

(1) सार्वजनिक मार्गों तथा भवनों में विद्युतीकरण व्यवस्था करना।
(2) सार्वजनिक मार्गों—स्थलों से अवरोधों को हटाना।
(3) मार्गों की सफाई करना।
(4) आग बुझाना, जान—माल की सुरक्षा करना।
(5) भवनों की सुरक्षा/खतरनाक भवनों को हटाना।
(6) मृतक पशुओं को हटाना।
(7) सार्वजनिक शौचालयों एवं मूत्रालयों का निर्माण।
(8) शुद्ध व पर्याप्त जल की पूर्ति।
(9) भवनों का संख्यांकन करना।
(10) जन्म—मृत्यु का पंजीकरण करना।
(11) आवारा तथा पागल कुत्तों से सुरक्षा व्यवस्था।
(12) सम्पत्ति की सुरक्षा।

(13) पर्यावरण संरक्षण।

(14) परिवार कल्याण हेतु कार्य करना।

उपरोक्त कार्यों को करने के लिए न्यायालय द्वारा बाध्य किया जा सकता है।

ऐच्छिक कार्य :—

(1) नये सार्वजनिक मार्ग बनाने हेतु भूमि अवाप्त करना।

(2) पार्कों, पुस्तकालयों, विश्रामगृह आदि का निर्माण व रख—रखाव।

(3) गरीबों के लिए भवनों का निर्माण।

(4) कर्मचारियों को आवास सुविधा।

(5) सड़क किनारे वृक्ष लगवाना।

(6) दूध की सप्लाई करना।

(7) जन स्वास्थ्य तथा शिशु कल्याण व्यवस्था।

(8) मातृ—प्रसूति केन्द्रों तथा शिशु केन्द्रों का रख—रखाव।

(9) प्राथमिक पाठशालाओं की स्थापना।

विशेष कार्य :—

(1) बीमारी फैलने से रोकने के उपाय करना।

(2) अकाल, अभाव व प्राकृतिक आपदा की स्थिति में राहत कार्य प्रारम्भ करना।

(3) नगरपालिका, नगर परिषद् सीमा में निराश्रितों को राहत देना।

नगरपालिका अध्यक्ष व नगर परिषद् सभापति के कार्य एवं कर्त्तव्य :—

(1) बैठकों की तिथि निर्धारित करना, बैठक बुलाना।

(2) बैठकों का संचालन करना।

(3) सम्पूर्ण अभिलेखों का निरीक्षण करना।

(4) नगरपालिका / नगर परिषद् के अधिकारियों तथा कर्मचारियों के कार्यों का पर्यवेक्षण तथा नियंत्रण करना।

(5) नगरपालिका / नगर परिषद् द्वारा पारित समस्त संकल्पों की एक प्रति राज्य सरकार द्वारा नियुक्त सक्षम अधिकारी को प्रेषित करना।

(6) वार्षिक प्रतिवेदन, बजट आदि प्रस्तुत करना तथा उन्हें राज्य सरकार को प्रेषित करना।

आयुक्त, अधिशासी अधिकारी और सचिव की शक्तियाँ व कार्य :—

राजस्थान नगरपालिका, नगर परिषद् में निर्धारित नीतियों की क्रियान्विति हेतु अधिशासी अधिकारी को नियुक्त किया जाता है। यह वैतनिक पद है। राजस्थान में प्रथम श्रेणी की नगर परिषद् में अधिशासी अधिकारी को आयुक्त कहा जाता है। नगरपालिकाओं में इसे अधिशासी अधिकारी कहा जाता है। छोटी नगरपालिका में इसे सचिव कहा जाता है। ये निम्नलिखित शक्तियाँ व कार्यों का निर्वहन करते हैं :—

(1) नगर परिषद् / नगरपालिका के समस्त अभिलेखों की रक्षा करना।

(2) अध्यक्ष / महापौर द्वारा निकाय के हितों से असंगत कार्यवाही करने पर असहमति टिप्पणी के साथ कलेक्टर को या राज्य सरकार को अवगत कराना।

(3) अपने हस्ताक्षरों से लाइसेन्स तथा परमिट जारी करना।

(4) नगरपालिका/नगर परिषद् के समस्त अधिकारी तथा कर्मचारी आयुक्त/अधिशासी अधिकारी/सचिव के अधीनस्थ होते हैं।

(5) सरकार द्वारा समय–समय पर निर्धारित अथवा अधिनियम द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग आयुक्त/अधिशासी अधिकारी/सचिव करेंगे।

(6) नगर परिषद्/नगरपालिका के वित्तीय एवं कार्यकारी प्रशासन पर निगरानी रखना।

(7) नगर परिषद्/नगरपालिका की सम्पत्ति तथा राशियों की चोरी या हानि या गबन के समस्त मामलों की सूचना देना।

(8) नगर परिषद्/नगरपालिका के अंकेक्षण के दौरान रिपोर्ट में बताई गई अनियमितताओं या कमी को दूर करने के लिए तत्काल कार्यवाही करना।

नगरपालिका/नगर परिषद् की संरचना

1. अध्यक्ष	:	प्रत्यक्ष जनता द्वारा निर्वाचित।
2. उपाध्यक्ष	:	अप्रत्यक्ष निर्वाचित (निर्वाचित सदस्यों में से)।
3. निर्वाचित वार्ड मेम्बर	:	प्रत्यक्ष जनता द्वारा निर्वाचित।
1. सभापति	:	प्रत्यक्ष जनता द्वारा निर्वाचित।
2. उपसभापति	:	अप्रत्यक्ष निर्वाचित (निर्वाचित सदस्यों में से)।
3. निर्वाचित पार्षद	:	प्रत्यक्ष जनता द्वारा निर्वाचित।

नगर निगम : संरचना, शक्तियाँ और कार्य :–

ब्रिटिश भारत के शासनकाल में बम्बई में सर्वप्रथम 'नगर निगम' की स्थापना की गयी थी। स्वतंत्रता के बाद 1951 ई. में कलकत्ता में सर्वप्रथम नगर निगम स्थापित किया गया। वर्तमान में लगभग 90 नगरों में नगर निगम है। राजस्थान में जयपुर, जोधपुर, कोटा, अजमेर व बीकानेर कुल पाँच नगर निगम हैं।

संरचना :–

राज्य सरकारें उन नगरों में निगम स्थापित करती हैं, जहाँ नगर परिषद् की सुदृढ़ वित्तीय स्थिति के साथ–साथ निगम की स्थापना हेतु प्रबल लोकमत हो। इसकी संरचना में निम्न प्रमुख घटक होते हैं :–

(1) निगम परिषद्

(2) महापौर

(3) उपमहापौर

(4) समितियाँ

(5) निगम आयुक्त

प्रत्येक नगर निगम क्षेत्र को प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्रों में विभाजित किया जाता है, जो वार्डों के रूप में ज्ञात हैं तथा प्रत्येक वार्ड से सदस्य प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुने जायेंगे। जयपुर नगर निगम को लगभग 70 वार्डों में विभक्त किया गया है। राजस्थान में 17 दिसम्बर, 1992 को राजस्थान सरकार अधिसूचना द्वारा जयपुर व जोधपुर में नगर निगम स्थापित किये गये। 23 जनवरी, 1993 को कोटा नगर निगम स्थापित करने की अधिसूचना जारी की गई। 2008 में बीकानेर तथा अजमेर

में नगर निगम बनाये गये।

निर्वाचन में आरक्षण :–

राजस्थान में अनुसूचित जातियों, जनजातियों तथा अन्य पिछड़ा वर्ग का निगम क्षेत्र में उनकी जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण का प्रावधान किया गया है। महापौर के पद पर भी आरक्षण किया गया है।

74वें संविधान की अनुपालना में सामान्य वर्ग की महिलाओं को भी 1/3 (एक–तिहाई) स्थान महापौर पद सहित आरक्षित हैं। समस्त आरक्षित पदों व स्थानों का आवंटन चक्रानुक्रम से करने का प्रावधान किया गया है।

राजस्थान में नगर निगम सदस्य हेतु निर्वाचन की योग्यताएँ व अयोग्यताएँ वही हैं जो नगरपालिका तथा नगर परिषद् के सदस्य के रूप में चुने जाने हेतु हैं। नगर निगम का कार्यकाल 5 वर्ष निर्धारित है।

राजस्थान में नगर निगम ''राजस्थान नगरपालिका अधिनियम 1959'' से प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करता है। नगर निगम, नियम निर्माण, उनमें परिवर्तन, उपनियम निर्माण आदि के रूप में व्यवस्थापन शक्तियों का प्रयोग करता है। कार्मिक प्रशासन, परिषद् की नीतियों की क्रियान्विति, अनुबन्ध स्वीकार करना, लाइसेन्स तथा परमिट जारी करने के रूप में प्रशासनिक शक्तियों का प्रयोग करता है। सम्पत्ति अवाप्त, कर आरोपित करना, फीस तथा शुल्क वसूल करना, बजट निर्माण व पारित करने के रूप में नगर निगम वित्तीय शक्तियों का प्रयोग करता है। विकास कार्यों हेतु राजस्थान में निगम परिषदों को करोड़ों रुपये का सालाना बजट पारित करने का अधिकार है। जयपुर नगर निगम में 2011–12 का सालाना बजट 991.51 करोड़ का पारित किया है।

नगर निगम के कार्य :–

(1) कच्ची बस्तियों का विकास करना।
(2) सामुदायिक केन्द्रों की स्थापना/ रख–रखाव।
(3) रैन बसेरा योजना।
(4) सुलभ काम्पलैक्स।
(5) सड़क निर्माण।
(6) नाली–ड्रेनेज व्यवस्था।
(7) सार्वजनिक प्रकाश व्यवस्था।
(8) उद्यान रख–रखाव।
(9) नये उद्यान निर्माण।
(10) स्लाटर हाउस।
(11) सार्वजनिक मरम्मत।
(12) सीवरेज व्यवस्था।
(13) पार्किंग जोन व्यवस्था।

संचालित परियोजनाएँ :–

(1) स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना।
(2) मुख्यमंत्री रोजगार योजना।
(3) जनसहभागिता नगर विकास योजना।
(4) जवाहर रोजगार योजना।
(5) सीवर परियोजना आदि।

नगर निगम प्रमुख रूप से निम्न मदों से आय प्राप्त करता है :–

(1) चुंगीकर वसूली।
(2) गृहकर।
(3) यूडी टैक्स।
(4) भूमि निलामी।
(5) लीज से।
(6) रोड़ कटिंग से।

(7) विज्ञापन होर्डिंग्स से।

इनसे आय की अधिकांश राशि विकास कार्यों में व्यय की जाती है।

समितियाँ एवं महापौर :–

नगर निगम अपने कार्यों के सुचारू संचालन हेतु समितियों का गठन कर सकता है। यह अधिकार उसे नगर निगमों के गठन सम्बन्धी प्रावधानों से प्राप्त है। महापौर नगर निगम का औपचारिक अध्यक्ष होता है। निगम की कार्यकारी शक्तियाँ उसी में निहित हैं। महापौर का निर्वाचन प्रत्यक्ष प्रणाली द्वारा होता है जबकि उपमहापौर को निर्वाचित सदस्य अप्रत्यक्ष रूप से चुनते हैं। इनका चुनाव प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष दलीय आधार पर होता है। इनका कार्यकाल 5 वर्ष का होता है।

महापौर निगम परिषद् की सामान्य व विशेष बैठक आमन्त्रित करता है। बैठकों की अध्यक्षता करता है। कार्यवाही का संचालन करता है। निगम आयुक्त से निगम के स्थानीय प्रशासन के सम्बन्ध में प्रतिवेदन प्राप्त करता है।

निगम आयुक्त की शक्तियाँ और कार्य :–

नगर निगम की समस्त कार्यकारी शक्तियों के क्रियान्विति का दायित्व निगम आयुक्त का होता है। यह निगम का प्रमुख कार्यपालक अधिकारी होता है। राज्य में आयुक्त की नियुक्ति सरकार द्वारा 3 से 5 वर्ष तक के लिए की जाती है। राज्य सरकार समय से पूर्व आयुक्त को हटा सकती है, अन्यत्र स्थानान्तरण कर सकती है। आयुक्त निगम परिषद् की स्थायी समितियों की बैठक में भाग लेता है, उपनियम तैयार करता है तथा उचित परामर्श देता है। निगम के समस्त कार्मिक मामलों का प्रबन्धन करता है, जैसे–वेतन, भत्ते, अवकाश, प्रशिक्षण, पेंशन, अनुशासनात्मक कार्यवाही आदि। वित्तीय शक्तियों का प्रयोग करते हुए आयुक्त नगर निगम का बजट तैयार करवाना, बजट को निगम की स्थायी समिति से पारित करवाना, बजट स्वीकृति हेतु निगम परिषद् में प्रस्तुत करना, नये कर प्रस्तावित कर स्वीकृति प्राप्त करना तथा निर्धारित सीमा से अधिक अनुबन्धों की स्वीकृति हेतु निगम परिषद् से अनुमोदन प्राप्त करने का कार्य करता है।

नगर निगम की स्वायत्तता पर राज्य सरकार का नियंत्रण :–

राज्य सरकार जिस अधिनियम द्वारा नगर निगम की स्थापना करती है, उसमें नगर निगम के गठन, संरचना, शक्तियों, कार्यों, कर्त्तव्यों, वित्तीय तथा कार्मिक वर्ग सम्बन्धी प्रावधानों के साथ ही नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण का स्वरूप भी निर्धारित कर देती है। राज्य सरकार नगर निगम को वित्तीय सहायता हेतु अनुदान की राशि तथा ऋण भी उपलब्ध कराती है। अतः उपलब्ध कराई गई धनराशि के उचित उपयोग हेतु राज्य सरकार उस पर नियंत्रण भी करती है।

अतः राज्य सरकार नगर निगमों पर नियंत्रण तथा पर्यवेक्षण के लिए निम्न प्रक्रियाओं का प्रयोग करती है :–

(1) नगर निगम आयुक्त की नियुक्ति तथा स्थानान्तरण करना।

(2) निगम को निर्देश देना।

(3) सूचनाएँ प्राप्त करना।

(4) पर्यवेक्षक की नियुक्ति।

(5) अनुदानित राशि के उपयोग पर नियंत्रण।

(6) निगम परिषद् को भंग करना, आदि।

नगरीय विकास में स्थानीय निकायों का योगदान :—

नगरीय क्षेत्रों में स्थानीय निकाय, स्थानीय शासन की इकाई के रूप में ऐतिहासिक ढंग से विकसित हुए हैं। अब ये देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था का ताना—बाना बन चुके हैं। 74वें संविधान संशोधन ने नगरीय स्थानीय निकायों को एक नवीन प्रस्थिति तथा महत्ता प्रदान की है। अब इन निकायों को संवैधानिक संस्तर प्राप्त हैं। राजस्थान के नगरीय क्षेत्रों के विकास में नगर निगमों, नगर परिषदों व नगरपालिकाओं ने विविध कार्यक्रमों द्वारा महत्त्वपूर्ण कार्य किये हैं। सड़क, स्वास्थ्य, जल आपूर्ति, सफाई, विद्युत आपूर्ति के प्रबन्धन के साथ—साथ आम नागरिक के उन्नयन में महती भूमिका निभा रहे हैं। इसके अलावा विकास न्यास तथा विकास प्राधिकरण आपसी लोकतांत्रिक तालमेल से नगरीय क्षेत्रों में सुनियोजित विकास योजनाओं, सौन्दर्यकरण तथा आधुनिकीकरण के कार्य करते हैं। आवासन मण्डल राज्य के सभी नगरों तथा कस्बों में आवासीय सुविधा योजना बनाकर क्रियान्वित करता है जिससे आय वर्ग के अनुसार कम लागत पर सुविधाजनक आवास उपलब्ध हो सकें। जयपुर विकास प्राधिकरण ने सुन्दर, आधुनिक तथा सुविधा सम्पन्न बस्तियों का विकास व निर्माण किया है। अब समय की मांग के अनुसार जे. डी. ए. (जयपुर विकास प्राधिकरण) आवागमन तथा यातायात की बेहतर सुविधा के लिए बढ़ती हुई जनसंख्या को देखते हुए दिल्ली की तर्ज पर मैट्रो रेल्वे लाइन बिछाने की योजना पर अमल कर रहा है, जो जयपुर और आसपास के क्षेत्रवासियों के लिए आने वाले समय में एक सुन्दर सौगात होगी।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. भारतीय संविधान में स्थानीय स्वशासन को किस सूची में रखा गया है?
   (अ) राज्य सूची में (ब) केन्द्रीय सूची में
   (स) अनुसूची में (द) संघीय सूची में
2. नगरीय स्थानीय शासन संस्थाओं को कब संवैधानिक दर्जा प्राप्त हुआ?
   (अ) 1991 (ब) 1992 (स) 1993 (द) 1994
3. राजस्थान में सबसे पहले नगरपालिका अधिनियम पारित किया गया—
   (अ) 1951 में (ब) 1956 में
   (स) 1959 में (द) 1960 में
4. स्थानीय स्वायत्त शासन को कब प्रान्तों की विषय सूची में रखा गया?
   (अ) 1935 (ब) 1919
   (स) 1909 (द) 1939
5. कौनसे भारतीय संविधान संशोधन अधिनियम के तहत नगरीय स्थानीय शासन को संवैधानिक दर्जा मिला?
   (अ) 73वें संविधान संशोधन से (ब) 74वें संविधान संशोधन से
   (स) 72वें संविधान संशोधन से (द) 76वें संविधान संशोधन से
6. राजस्थान में छावनी मण्डल स्थानीय शासन कहाँ स्थित है?
   (अ) केकड़ी में (ब) अजमेर में

(स) नसीराबाद में (द) ब्यावर में

7. राजस्थान में कितने विकास प्राधिकरण हैं?

(अ) 2 (ब) 5 (स) 3 (द) 7

8. नगरपालिकाओं का कार्यकाल कितने वर्षों का होता है?

(अ) 3 वर्ष का (ब) 4 वर्ष का

(स) 5 वर्ष का (द) 2 वर्ष का

9. शहरीय निकायों में महिलाओं को कितना प्रतिशत आरक्षण दिया गया है?

(अ) 21 प्रतिशत (ब) 33 प्रतिशत

(स) 50 प्रतिशत (द) 15 प्रतिशत

10. राजस्थान में कितनी नगर परिषदें हैं?

(अ) 9 (ब) 5 (स) 13 (द) 7

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. स्थानीय शासन का अभिप्राय क्या है?
2. राजस्थान में नगर विकास न्यास के कार्यों का वर्णन कीजिए।
3. नगरपालिका में अध्यक्ष का कार्यकाल व निर्वाचन की विधि समझाइये।
4. राजस्थान में कितने और कहाँ–कहाँ नगर निगम स्थापित हैं?
5. नगर परिषद् के गठन में वर्गीकरण का आधार बताइये।
6. सभापति और उपसभापति की निर्वाचन पद्धति क्या है?
7. 25 नवम्बर, 2010 का राज्य अध्यादेश का सन्दर्भ समझाइये।

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. एनसाइक्लोपिडिया ब्रिटेनिका के अनुसार स्थानीय शासन की परिभाषा लिखिये।
2. मैगस्थनीज के अनुसार पाटलिपुत्र नगर की शासन व्यवस्था बताइये।
3. 1918 मोण्ट–फोर्ड प्रस्ताव के क्या सुझाव थे?
4. नगरपालिका की वित्तीय शक्तियाँ बताइये।
5. नगर निगम की स्वायत्तता पर राज्य सरकार के नियंत्रण को रेखांकित कीजिये।
6. महापौर एवं उपमहापौर की निर्वाचन प्रणाली समझाइये।
7. छावनी मण्डल के निर्वाचित सदस्यों का कार्यकाल कितना होता है?

निबन्धात्मक प्रश्न

1. स्थानीय शासन के महत्त्व पर प्रकाश डालिए।
2. लार्ड रिपन द्वारा स्थानीय शासन व्यवस्था के लिए किये गये प्रयासों का विश्लेषण कीजिये।
3. छावनी मण्डल प्रशासन पर एक लेख लिखिये।
4. नगर परिषदों के अनिवार्य कार्यों का लेखा प्रस्तुत कीजिये।
5. नगर निगम के निर्वाचन में आरक्षण व्यवस्था को समझाइये।
6. निगम आयुक्त की क्या–क्या शक्तियाँ हैं? लिखिये।
7. नगरीय स्थानीय शासन संस्थाओं का शहरीय विकास में क्या योगदान है? स्पष्ट कीजिये।

❑

अध्याय – 6

राजस्थान की पर्यावरणीय चुनौतियाँ

पर्यावरण जीवन का स्त्रोत है जो अनादि काल से पृथ्वी पर मानव एवं सम्पूर्ण जीव जगत् को न केवल प्रश्रय दे रहा है अपितु मानव के सांस्कृतिक एवं आर्थिक विकास का सदैव से नियंत्रक भी रहा है। अनुकूल पर्यावरण जहाँ विकास में सहायक होता है, वहीं इसकी प्रतिकूलता विकास को अवरूद्ध कर देती है। वायु, जल, भूमि, जीव–जन्तु तथा वनस्पति पर्यावरण के मूल घटक हैं, जिनकी क्रिया–प्रतिक्रिया से सम्पूर्ण 'जीव–मण्डल' परिचालित होता है। जीव मण्डल में जीवन का उद्‌भव, विकास और विलुप्त होना इस तथ्य पर निर्भर करता है कि प्रकृति अथवा प्राकृतिक पर्यावरण के साथ उसका कितना समन्वय एवं सामंजस्य है। जैसे ही प्राकृतिक संतुलन में किसी कारण से व्यतिक्रम आता है, पारिस्थितिक–तंत्र में असंतुलन होने लगता है और उसका विपरीत प्रभाव न केवल जीव जगत पर पड़ता है अपितु पर्यावरण की क्रियाशीलता पर भी होता है और उसकी नैसर्गिक क्रियाओं में अवरोध प्रारम्भ हो जाता है जो विनाश का कारण बनता है। मानव ने सदा से ही पर्यावरण का अनुकूलन एवं उपयोग किया है और वह शिकार अवस्था से पशुपालन, कृषि एवं वर्तमान विकसित व्यवस्था तक पहुँचा है। इस क्रम में जहाँ एक ओर उसने प्रकृति से समायोजन किया है तो दूसरी ओर वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास द्वारा प्रकृति को अनुकूल बनाया है। जब तक हमारा पर्यावरण के साथ सामंजस्य रहता है, विकास उत्तरोत्तर होता जाता है, किन्तु इस विकास क्रम में पर्यावरण का जब अधिक शोषण होने लगता है तो प्राकृतिक संतुलन बाधित होने लगता है, फलस्वरूप अनेक पर्यावरणीय समस्याओं का जन्म होता है।

विकास के प्रारम्भिक दौर में मानव का पर्यावरण से समांजस्य था, अतः वह निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर होता रहा। यद्यपि इसका कारण सीमित जनसंख्या, सीमित आवश्यकता एवं तकनीकी ज्ञान की कमी भी रहे हैं। किन्तु जैसे–जैसे औद्योगिक एवं तकनीकी प्रगति अधिकाधिक होती गई, एक और प्रकृति के शोषण में वृद्धि होने लगी, तो दूसरी ओर उसका कुप्रभाव भी आरम्भ हो गया। इसका प्रभाव यद्यपि औद्योगिक एवं परिवहन क्रान्ति से ही हो गया था, किन्तु विकास की दौड़ के उस युग में यह सोचने का समय सम्भवतः मानव को नहीं था कि अनियमित और अनियंत्रित पर्यावरण शोषण विकास के स्थान पर कुछ ऐसी समस्याओं का भी जन्म देगा जो स्वयं उसके अस्तित्व के लिए संकट का कारण बन जाएगी।

21वीं सदी के प्रारम्भ में आज विश्व के सम्मुख अनेक पर्यावरणीय समस्याऐं हैं जैसे जलवायु परिवर्तन, तापमान वृद्धि, हरित गृह प्रभाव, ओजोन विरलता, मरूस्थलीकरण, वनोन्मूलन, जल, वायु, भूमि और ध्वनि प्रदूषण, कीटनाशकों का प्रभाव, खनिज खनन का दुष्प्रभाव, आदि के साथ अनेक प्राकृतिक आपदायें हैं। वर्तमान में हो रहे भूमण्डलीकरण, व्यवसायीकरण, औद्योगीकरण तथा भौतिकवादिता और स्वार्थपरता के कारण हम पर्यावरण को नुकसान पहुँचा रहे है। पर्यावरणीय समस्याओं से आज विश्व का प्रत्येक देश ग्रसित है और भारत जैसे विकासशील

देशों के लिये ये समस्याएँ चुनौतियां के रूप में हैं क्योंकि ये न केवल विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रही हैं अपितु मानव के स्वास्थ्य पर भी इनका प्रतिकूल प्रभाव हो रहा है। राजस्थान राज्य भी इससे अछूता नहीं है। अतः यह आवश्यक है कि हम राजस्थान की पर्यावरणीय चुनौतियों को न केवल समझे अपितु ऐसे उपाय करे जिससे विकास के साथ पर्यावरण संतुलन बना रहे और राज्य निरन्तर, प्रगति के पथ पर अग्रसर होता जाय।

राजस्थान देश का सबसे बड़ा राज्य है और यहाँ विशिष्ट पारिस्थितिक तंत्रों का विकास हुआ है। इसमें शुष्क एवं अर्द्ध शुष्क प्रदेश है, जहाँ अत्यधिक तापमान और अल्प वर्षा के कारण प्राकृतिक वनस्पति अपेक्षाकृत कम है। दूसरी और अरावली के पर्वतीय क्षेत्र हैं। नदियों से निर्मित मैदान जैसे बनास बेसिन, माही बेसिन, बाणगंगा बेसिन, सावी बेसिन, गम्भीर बेसिन, बेड़च बेसिन जहाँ कृषि की प्रधानता है। इसी प्रकार दक्षिणी–पूर्वी राजस्थान में कृषि तथा उद्योग प्रधान चम्बल बेसिन है तो साथ ही में चम्बल के बीहड़ का क्षेत्र है। तात्पर्य है कि राज्य के पर्यावरण में अत्यधिक विविधता है और मानवीय गतिविधियों से इस पर्यावरण की छेड़छाड़ में निरन्तर वृद्धि हो रही है। इसके कारण तथा अनेक प्राकृतिक कारणों से राज्य में पर्यावरण की अनेक समस्याएँ चुनौतियों के रूप में उभर कर आ रही है। राजस्थान की प्रमुख पर्यावरणीय चुनौतियों का संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है :

मरुस्थलीकरण (Desertification)

मरूस्थलीकरण का समान्य अर्थ है उपजाऊ एवं अमरूस्थली भूमि का मरूस्थली भूमि में परिवर्तित हो जाना है। जबकि पर्यावरणविद् इसे एक क्रमबद्ध प्रक्रिया मानते हैं जो जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, मृदा, जीव–जन्तु एवं मानवीय क्रियाओं का परिणाम है तथा इस प्रक्रिया से मरूस्थली क्षेत्रों का विस्तार होता चला जाता है। केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र शोध संस्थान (CAZRI) के पूर्व निदेशक एच.एस.मान के अनुसार, ''मरूस्थलीकरण से तात्पर्य उन सभी प्रक्रिया के सामूहिक प्रभाव से है जिनके कारण एक विशेष पारिस्थितिक तंत्र में मूलभूत परिवर्तन आ जाता है तथा जिससे अमरूस्थली क्षेत्र मरूस्थल में परिवर्तित होने लगता है। यह जलवायु एवं जैविक तत्वों की क्रिया–प्रतिक्रिया का परिणाम होता है।''

राजस्थान का वर्तमान मरूस्थल इसका ज्वलन्त उदाहरण है, जहाँ कभी सरस्वती एवं दृषदवती नदियों का प्रवाह था तथा सभ्यता विकसित थी, जिसके अवशेष कालीबंगा, रंगमहल आदि स्थानों पर देखे जा सकते हैं। इस प्रदेश में मरूस्थल विकास का प्रमुख कारण अविवेकपूर्ण मानवीय क्रियाओं को माना जाता है। आज यहाँ की समस्या मरूस्थलीय नहीं, अपितु उसका विस्तार अथवा मरूस्थलीकरण है। मरूस्थल विस्तार जो पूर्ववर्ती क्षेत्रों में हो रहा है, इस पर विद्वानों में मतान्तर है, किन्तु यह सभी स्वीकार करते हैं कि मरूस्थलीरण में वृद्धि हो रही है। इसके मुख्य कारण निम्नलिखित हैं

(i) जलवायु की कठोरता – उच्च तापमान, न्यून वर्षा

(ii) वनस्पति का अभाव

(iii) जनसंख्या वृद्धि

(iv) अनियन्त्रित पशुचारण

(v) भू–जल स्तर में गिरावट

(vi) निरन्तर सूखा पड़ना

(vii) भू–क्षरण

(viii) वायु अपरदन में वृद्धि

(ix) जहाँ सिंचाई का विस्तार है वहाँ लवणता, जल संचयन, जल रिसाव की समस्या।

(x) संसाधनों का अत्यधिक शोषण।

राजस्थान में मरूस्थलीकरण की समस्या विकट होती जा रही है। यहाँ के कुल क्षेत्र का लगभग 57 प्रतिशत क्षेत्र में मरूस्थलीकरण का प्रभाव है। मरूस्थलीकरण से सर्वाधिक प्रभावित क्षेत्र पश्चिम राजस्थान है। इसमें बाड़मेर, जोधपुर, जैसलमेर, बीकानेर, जालौर जिलें हैं। दूसरी श्रेणी में अर्द्धशुष्क क्षेत्र – नागौर, सीकर, जयपुर, झुंझुनु, चूरू, अजमेर, दौसा, पाली जिले हैं। गंगानगर, हनुमानगढ़ एवं बीकानेर जिलों में यद्यपि सिंचाई सुविधाओं का विस्तार हुआ है किन्तु ये सभी मरूस्थलीकरण से अछूते नहीं है। अरावली की पर्वतमाला यद्यपि मरूस्थलीकरण के प्रभाव को रोके हुए हैं, किन्तु वनोन्मूलन, खनन एवं अन्य मानवीय क्रियाओ से ये पर्वतमाला भी मरूस्थलीकरण को रोकने में असफल हो रही है।

मरूस्थलीकरण का पर्यावरण का प्रभाव

मरूस्थलीकरण का प्रभाव न केवल राजस्थान के जनजीवन व पर्यावरण पर पड़ रहा है अपितु सम्पूर्ण देश के जन–जीवन एवं समूची मानव सभ्यता के लिये चुनौती बनता जा रहा है। मरूस्थलीयकरण जो कि अनेक कारणों का परिणाम है के प्रसार से राजस्थान तथा समीपवर्ती राज्यों के पर्यावरण तंत्र में निम्नलिखित गंभीर समस्याएँ उत्पन्न हो रही है :

1. अरावली पहाड़ी श्रृंखला के विभिन्न अन्तरालों से व्यावक रेत का बहाव।
2. तेज हवाओं एवं जल द्वारा कटाव।
3. मरूस्थल के प्रसार से वनों का विनाश।
4. नदियों तथा झीलों में गाद का भराव।
5. भूमिगत जलस्तर में अत्यधिक गिरावट।
6. खाद्यान्न उत्पादन में कमी।
7. पेयजल के स्त्रोतों का सूखना।
8. जलाऊ लकड़ी की कमी।
9. चारागाह क्षेत्रों में कमी।
10. निरन्तर अकाल की संभावना।

मरूस्थलीकरण की रोकथाम के उपाय

यदि समय रहते रेगिस्तान को नियंत्रित करने का प्रयास नहीं किया गया तो यह तेजी से बढ़ता हुआ राज्य के तथा समीपवर्ती राज्यों के उपजाऊ कृषि क्षेत्रों को मरूस्थलीकरण की चपेट में ले लेगा। मरूस्थलीकरण रोकने के निम्नलिखित उपाय किये जा सकते हैं :

1. अरावली पहाड़ी श्रृंखला के सभी अन्तरालों में हरी सुरक्षा पट्टियाँ स्थापित की जाये जिससे मरूस्थल का प्रसार पूर्वी राजस्थान की तरफ न हो सके एवं अरावली पहाड़ी श्रृंखला में 10 कि.मी. चौड़ाई में सघन वृक्षारोपण किया जाये।
2. राजस्थान तथा समीपवर्ती राज्यों में सघन वृक्षारोपण किया जाय। पर्यावरण संतुलन के लिये आवश्यक है कि कुल भू–भाग के लगभग एक तिहाई भाग में वन हो। राजस्थान में वनों का प्रतिशत कम है। अतः इस स्थिति को बदलने के लिये स्थानीय वृक्ष प्रजातियों का बडे पैमाने पर वृक्षारोपण किया जाय जो कि सामाजिक वानिकी, कृषि वानिकी एवं वन खेती के द्वारा सम्भव हो सकता है।
3. राजस्थान की रेतीली भूमि जो कि राज्य के 31.31 प्रतिशत भू–भाग पर विस्तृत है में सघन वृक्षारोपण किया जाय इससे जलाऊ लकड़ी की समस्या दूरी होगी।
4. वृक्षों की वे प्रजातियाँ जो कि जल व मृदा संरक्षण के लिये महत्वपूर्ण है के कटान पर पूर्ण रूप से प्रतिबन्ध लगाया जाय। अन्य वृक्ष प्रजातियों को भी संरक्षण प्रदान किया जाय।
5. अरावली के पश्चिम मे ंथार के मरूस्थल में उत्तर से दक्षिण की और अनेक वनस्पति पट्टियाँ विकसित की जाये। राष्ट्रीय राजमार्गों के दोनों तरफ व इन्दिरा गाँधी नहर के दोनों तरफ चौड़ी पट्टी के रूप में सघन वृक्षारोपण किया जाय।
6. पशु संख्या पर नियंत्रण किया जाय जिससे कि चारागाह भूमि पर दबाव कम से कम पड़े।
7. नये चारागाह क्षेत्रों का वैज्ञानिक ढंग से विकास किया जाय।
8. रेतीली तथा क्षारीय बंजर भूमि का उपयोग किया जाय।

यदि उपरोक्त योजनाओं के आधार पर कार्य किया जाय तो निश्चित ही राजस्थान का पर्यावरण सुरक्षित हो सकता है और सम्पूर्ण प्रदेश मरूद्यान में बदल सकता है।

सूखा और अकाल (Drought & Famine)

सूखा एक प्राकृतिक विपदा है, जो अल्प वर्षा न होने का परिणाम है। सूखा यदि सामान्य होता है तो उसका प्रभाव केवल सीमित होता है, किन्तु अधिक होने पर यह 'अकाल' का रूप ले लेता है, जिससे न केवल आर्थिक हानि होती है, अपितु जन–धन, पशु आदि की भी हानि होती है। सूखा और अकाल राजस्थान के नाम से जुड़े हुए हैं, क्योंकि इनका प्रकोप यहाँ यदा–कदा

होता ही रहता है। विगत बीस वर्षों में से 15 वर्ष ऐसे थे, जिनमें राज्य के 18 से 27 जिले सूखा या अकाल से प्रभावित रहे। इससे प्रभावित होने वाली जनसंख्या का प्रतिशत 20 से 90 तक रहा है। यह प्राकृतिक आपदा तो हैं ही, इसे मानव अपने कृत्यों से और अधिक गम्भीर बना देता है। वास्तव में सूखा अथवा अकाल का होना पारिस्थितिकीय संकट का प्रतीक है, जिसका प्रभाव पर्यावरण के अन्य घटकों पर पड़ता है।

राजस्थान में अल्प एवं अनिश्चित वर्षा के कारण सूखा अधिक होता है। संकलित आंकड़ों के आधार पर राज्य में सूखा की स्थिति निम्न तालिका 6.1 से स्पष्ट होती है–

तालिका 6.1

राजस्थान में सूखा की स्थिति

निरन्तरता अवधि में सूखा	जिले
3 वर्ष में एक बार	बाड़मेर, जैसलमेर, जालौर, जौधपुर, सिरोही।
4 वर्ष में एक बार	अजमेर, बीकानेर, बून्दी, डूंगरपुर, नागौर, हनुमानगढ़ और चूरू।
5 वर्ष में एक बार	अलवर, बांसवाड़ा, भीलवाड़ा, जयपुर, झुन्झुनू, पाली, सवाई माधोपुर, सीकर, दौसा और करौली।
6 वर्ष में एक बार	चित्तौड़गढ़, झालावाड़, कोटा, उदयपुर, टोंक, राजसमन्द और बांरा।
8 वर्ष में एक बार	भरतपुर और धौलपुर।

सूखा निवारण के उपाय

राज्य में सूखा की समस्या एक अल्पकालीन समस्या नहीं है अतः इस समस्या का स्थायी हल दीर्घकाल में ही सम्भव हो सकता है। राज्य सरकार ने सूखा से निपटने के लिए अनेक उपाय किये हैं। सूखा निवारण के निम्नांकित उपाय हैं :

(i) **वृक्षारोपण** – राज्य में परम्परागत जंगल नष्ट होने से वर्षा कम हुई है। इसके लिए कारगर योजनाएँ बनाई जाएँ जिसमें पहाड़ों, सरकारी भूमि एवं समस्त खाली भूमि पर उपयोगी वृक्ष लगाये जाने चाहिए। किसानों को प्रोत्साहित करके खेतों की मेड़ों पर वृक्ष लगाये जाने चाहिए।

(ii) **नदी जल आपूर्ति** – देश की बड़ी नदियों का जल सूखाग्रस्त क्षेत्रों की ओर मोड़ने का कार्य किया जाये। राज्यों के बीच जल विवाद खत्म करने के उद्देश्य से जल केन्द्र सूची में सम्मिलित किया जाये जिससे राहत कार्य में विलम्ब न हो। नदियों को आपस में जोड़ने की योजना को शीघ्रता शीघ्र लागू किया जाना चाहिए।

(iii) पानी, बिजली व अनाज की बचत – सूखा की स्थिति में इन संसाधनों के दुरूपयोग एवं अपव्यय के बजाय बिजली की प्रत्येक यूनिट, पानी की एक–एक बूँद तथा अन्न के एक–एक दाने का सदुपयोग होना चाहिए। शहरों में विद्युत का बहुत बड़ा हिस्सा सजावट के कार्यों में खर्च हो जाता है। जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में न्यून्तम आवश्यकता की पूर्ति नहीं हो पाती हैं।

(iv) संसाधनों का कुशलतम उपयोग – प्रकृति प्रदत्त बहुमूल्य एवं उपयोगी संसाधनों की पूर्ति में अवरोध या कमी ही प्राकृतिक आपदा है। राज्य में वर्षा की अधिकता या कमी अकाल का मुख्य कारण है। प्राकृतिक संसाधनों के उचित प्रबंधन के अभाव में भी अकाल की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। केन्द्र व राज्य सरकारों की योजनाओं में समन्वय के द्वारा एवं उपलब्ध संसाधनों का कुशलतम प्रबन्धन होना चाहिए।

(v) सामूहिक ग्राम सेवा योजना – सूखा की समस्या से मुक्ति हेतु सामूहिक ग्राम सेवा योजना चलाई जानी चाहिए। इसके अन्तर्गत प्रत्येक विद्यालय व ग्राम पंचायत निकटवर्ती तालाब, बावड़ी की खुदाई व रख–रखाव अपने ऊपर ले तथा खाली पड़े ताल–तलैया के चारों और वृक्ष लगाएँ। इससे पारम्परिक जलस्त्रोतों का अस्तित्व भी बना रहेगा। मनरेगा योजना इस दिशा में उपयोगी हैं।

(vi) तात्कालिक उपाय – सूखा की स्थिति में सरकार को मौसम विभाग पर निर्भर न रहकर तत्काल सार्थक प्रयास शुरू करने चाहिए। राज्य सरकार व केन्द्र सरकार को समय पर अकाल की स्थिति में अवगत कराकर उससे समय पर सहायता प्राप्त करनी चाहिए।

(vii) दीर्घकालीक उपाय – अकाल की स्थिति से निपटने के लिये दीर्घकालिक उपाय हैं – आधारभूत संरचना का विकास करना, बिजली, सड़क, सिंचाई सुविधाएँ, पेयजल, बैंकिंग, बीमा सुविधाओं का ग्रामीण क्षेत्रों में विस्तार करना। कम पानी की आवश्यकता वाली चारे की फसलें उत्पादित करना। सिंचाई परियोजना को यथाशीघ्र पूरा करना। कुओं, तालाब, बावड़ी, जोहड़ों को जलग्रहण योग्य बनाना। वनों के संरक्षण व विकास को सुनिश्चित करना।

(viii) आपदा कोष की स्थापना – सूखे से प्रत्येक वर्ग प्रभावित होता है। ग्रामीण क्षेत्रों में कुछ अधिक प्रभाव पड़ता है। इसके लिए सरकार को एक आपदा कोष की स्थापना करनी चाहिए तथा अन्य राज्यों से भी सहायता लेनी चाहिए। सरकार की तरफ से आम जनता को उचित मूल्य पर राशन की वस्तुएँ व पशुओं के लिए चारा उपलब्ध कराया जाना चाहिए। राजस्थान में इस प्रकार के प्रयास सरकार द्वारा किये जा रहे हैं।

(ix) **जनसहभागिता** – अकाल की समस्या से निबटने के लिए सरकारी प्रयासों के साथ–साथ जनता का सहयोग भी जरूरी है। निजी क्षेत्रों में कार्यरत व्यक्ति निष्ठावान व संवेदनशील होने चाहिए। जनता में परस्पर सहयोग की भावना हो तथा छीना–झपटी की प्रवृत्ति न हो। सरकार को चाहिए कि अकाल को राष्ट्रीय आपदा घोषित करके राज्य की जनता को इस आपदा से निपटने के लिए प्रेरित करना चाहिए। इससे सूखा जैसी विभिषिका से हमेशा के लिए मुक्ति मिल सकती है।

वनोन्मूलन (Deforestation)

वनोन्मूलन से तात्पर्य वनों का विनाश अथवा वनों की कटाई के कारण उनका नष्ट हो जाना है। राष्ट्रीय वन नीति के अन्तर्गत पर्यावरण की सुरक्षा एवं पारिस्थितिकी संतुलन को बनाये रखने के लिये कुल क्षेत्र का 33.33 प्रतिशत क्षेत्र पर वन होना आवश्यक है। राजस्थान राज्य इस दृष्टि से बहुत पीछे है। सांख्यकी विभाग के प्रकाशन के आधार पर राजस्थान में 31 मार्च 2009 को 32,701 वर्ग कि.मी. क्षेत्र पर वनों का विस्तार है जो राज्य के कुल क्षेत्र का 9.55 प्रतिशत है। इसमें समस्त प्रकार के वन, झाड़ियाँ आदि सम्मिलित है। विभागीय आंकड़ों के अनुसार राजस्थान में वन क्षेत्र में वृद्धि दर्ज की गई है। 1990–91 में राज्य के 6.87 प्रतिशत क्षेत्र पर वन थे जो 2000–01 में 7.60 प्रतिशत हो गये और 2005–06 में 9.54 प्रतिशत। किन्तु राज्य में अभी भी वन क्षेत्र बहुत कम है। वनों के कम होने के कारण यहाँ के पर्यावरण पर निम्न प्रतिकूल प्रभाव होते हैं :

(i) पारिस्थितिकी असंतुलन उत्पन्न होना।

(ii) वायुमण्डल में नमी धारण करने की क्षमता की कमी होना।

(iii) तापमान में वृद्धि

(iv) वर्षा में कमी।

(v) मृदा अपरदन में वृद्धि।

(vi) जैव–विविधता का विलुप्त होना।

(vii) प्रदूषण में वृद्धि, आदि।

वनों को नष्ट होने से बचाने और उनकी वृद्धि हेतु सरकार प्रयत्नशील है। वृक्षारोपण कार्यक्रम, सामाजिक वानिकी और वर्तमान में 'हरित राजस्थान' के माध्यम से न केवल वनों की रक्षा अपितु नवीन वन क्षेत्रों का विकास तथा आबादी वाले क्षेत्रों में भी वृक्षारोपण किया जा रहा है। सरकारी प्रयत्न के साथ–साथ जन भागीदारी द्वारा ही वन क्षेत्रों का विस्तार सम्भव है।

जैव विविधता पर संकट एवं संरक्षण

पृथ्वी पर पाए जाने वाले जीवन के विभिन्न रूपों को 'जैव विविधता' (Bio-diversity) कहते हैं। इसमें पेड–पौधे, जीव–जन्तु, सूक्ष्म जीव –जैसे कवक, शैवाल, जीवाणु आदि सभी सम्मिलित हैं। जैव विविधता धरती की आत्मा है और प्रकृति की निधि है। जैव विविधता से प्रकृति का प्राकृतिक तन्त्र स्वचालित रूप से संचालित होता है, अतः यह पर्यावरण का एक

अभिन्न घटक है। यह सर्वविदित तथ्य है कि सम्पूर्ण विश्व में जैव विविधता पर संकट के बादल छाये हुए हैं, अनेक प्रजातियाँ विलुप्त हो चुकी है तथा सैकडों प्रजातियाँ विश्व स्तर पर खतरे में है। जैव विविधता के इस संकट से भारत और हमारा राज्य राजस्थान भी अछूता नहीं है।

राजस्थान भारत का सबसे बड़ा राज्य है, जहाँ अत्यधिक भौगोलिक विविधता होने के कारण जैव विविधता भी अत्यधिक है। राजस्थान में लगभग 2500 प्रजातियों के पेड़–पौधे, 450 प्रजातियों के पक्षी, 50 प्रजातियों के स्तनपायी, 20 प्रकार के सरीसृप, 14 प्रजातियों के उभयचर पाए जाते हैं। इनके अतिरिक्त सैकडों प्रकार के कीट–पतंगें, तितलियाँ, सूक्ष्म जीव व पादप पाए जाते है। यहाँ की जैव विविधता यहाँ के प्रमुख पारिस्थितिक तन्त्रों अर्थात् मरूस्थली प्रदेश अरावली पर्वत, पूर्वी मैदान और हाड़ौती के पठार में दृष्टिगत होती है।

राजस्थान के मरू प्रदेश में शुष्क पारिस्थितिक तन्त्र है। इस प्रदेश में 22 प्रकार के स्तनपायी पाये जाते है जिनमें चिंकारा, काला हिरण, मरू बिल्ली, लोमड़ी, भेडिया, खरगोश, नेवला आदि प्रमुख है। पक्षी वर्ग में भी लगभग 120 प्रजातियाँ यहाँ पाई जाती है, जिनमें गोडावण (Great Indian Bustered) प्रमुख है जो वर्तमान में संकटापन्न है। इसके अलावा यहाँ मोर, सैण्डग्राऊज, तीतर, स्पेन गोरिया, डोमोजल, क्रेन (कुरंजा) आदि पक्षी, लगभग 20 प्रकार के सरीसृप एवं विविध प्रकार की वनस्पति एवं अन्य जीव मिलते है। इनमें से अनेक पर संकट है।

अरावली पारिस्थितिक तन्त्र जैव विविधता में समृद्ध है। इस क्षेत्र में धौंक, केर, चुरैल, सालर, आम, महुआ, बांस, आदि प्रजाति के वृक्ष तथा बाघ, बघेरा, रीछ, जरख, चौसिंगा, काला हिरण, चीतल, सामर, जंगली सुअर, भेडिया, उडन गिलहरी, लोमडी आदि वन्य जीव पाये जाते है। वनों के कटाव से तथा खनन आदि के कारण इनके आवास नष्ट हो जाने से यहाँ की अनेक प्रजातियाँ संकटग्रस्त हैं।

पूर्वी मैदानी क्षेत्र में जल स्त्रोतों के कारण यहाँ प्रवासी पक्षीयों तथा जल जीवों के अतिरिक्त वनस्पति के विविध प्रकार पाये जाते हैं। केवला देव राष्ट्रीय उद्यान में ही लगभग 370 प्रकार के पक्षी तथा 130 प्रकार के पादप पाए जाते हैं। इसी समृद्ध जैव विविधता के कारण इस राष्ट्रीय उद्यान को यूनेस्को द्वारा 'विश्व प्राकृतिक धरोहर' घोषित किया गया है।

दक्षिणी–पूर्वी राजस्थान अर्थात हाड़ौती का पठार में भी पादपीय एवं जीव–जन्तुओं की विविधता है। यहाँ मगरमच्छ, घडियाल, डॉल्फिन, कछुए, विविध प्रकार की मछलियाँ केकड़े आदि के अतरिक्त अनके प्रकार के वन्य जीव एवं वनस्पतियाँ पाई जाती है।

स्पष्ट है राजस्थान जैव विविधता में समृद्ध है किन्तु यह संकट ग्रस्त है। यहाँ बाघ, रीछ, चौसिंगा, जंगली सुअर, गोडावन, चील, उल्लू आदि अनेक जीव–जन्तु और वनस्पति जैसे खेजड़ी, रोहिडा, सिरस, कीकर, पीलूजाल, हिंगोटा आदि नष्ट हो रही है। राज्य की जैव–विविधता निरन्तर नष्ट अथवा संकट ग्रस्त हो रही है। राज्य की जैव–विविधता के नष्ट होने अथवा संकट ग्रस्त होने के प्रमुख कारण हैं प्राकृतिक आवासों की कमी, जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण प्रदूषण, प्राकृतिक संसाधनों का अनियन्त्रित दोहन, नवीन प्रजातियों का प्रभाव, प्राकृतिक आपदायें, जल स्त्रोतों का सूखना, व्यापारिक उपयोग हेतु अति शोषण, शिकार, आदि।

जैव संरक्षण हेतु राज्य में समुचित प्रयत्न किये जा रहें हैं। राज्य में रणथम्भौर एवं केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान के अतिरिक्त मुकन्दरा (घोषित राष्ट्रीय उद्यान) राष्ट्रीय मरू उद्यान सहित 25 वन्य जीव अभयारण्य हैं। इसके अतिरिक्त तीन संरक्षित क्षेत्र, 6 मृगवन तथा 33 आखेट निषिद्ध क्षेत्र है। जैव विविधता संरक्षण हेतु जापान की सहायता से 'राजस्थान वानिकी एवं जैव विविधता परियोजना' भी चलाई जा रही है। इस दिशा में अनेक स्वयंसेवी संगठन भी कार्यरत है। वास्तव में जैव विविधता हमारी अमूल्य धरोहर है और इसकी रक्षा करना हम सभी का दायित्व है।

पर्यावरण प्रदूषण (Environmental Pollution)

पर्यावरण प्रदूषण आज विश्व की सर्वाधिक ज्वलंत समस्या है। यह एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या है, जिसकी चपेट में विश्व का प्रत्येक देश आता जा रहा है। भारत में यह समस्या निरन्तर गम्भीर होती जा रही है। निश्चित है कि राजस्थान में पर्यावरण प्रदूषण एक चुनौती है। औद्योगिक एवं तकनीकी प्रगति, रसायनों के उपयोग में वृद्धि, जनसंख्या वृद्धि एवं नगरीकरण आदि के कारण पर्यावरण निरन्तर दूषित होता जा रहा है। इसके फलस्वरूप मानव अनेक मानसिक एवं शारीरिक बीमारियों से ग्रसित होता जा रहा है। पर्यावरण प्रदूषण मात्र वर्तमान की समस्या ही नहीं हैं, अपितु भविष्य में इसका प्रभाव अत्यधिक हानिकारक होगा। अतः इस समस्या के वर्तमान स्वरूप को न केवल समझना पर्याप्त होगा, अपितु इसके लिए इस प्रकार के प्रयत्न करने होंगे, जिससे यह नियंत्रित रहे और भविष्य में इसके कुप्रभाव न हों।

सामान्यतया पर्यावरण प्रदूषण से तात्पर्य है कि प्राकृतिक जल, वायु, जमीन का क्रमिक रूप से दूषित होते जाना। प्रकृति प्रदत्त ये तत्व जब दूषित होने लगते हैं तो न केवल मानव अपितु सम्पूर्ण जीव–जगत के लिए संकट उत्पन्न हो जाता है। प्रदूषण का जहर कहीं सूक्ष्म एवं अप्रत्यक्ष, तो कहीं स्पष्ट रूप से हमारे चारों ओर घुलता जा रहा है। सामान्य रूप से पर्यावरण प्रदूषण के प्रमुख प्रकार निम्नांकित हैं :

(1) **जल प्रदूषण**

(2) **वायु प्रदूषण**

(3) **ध्वनि (शोर) प्रदूषण**

(4) **भूमि अथवा मृदा प्रदूषण**

राजस्थान के संदर्भ में उपर्युक्त प्रदूषण के प्रकारों का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार से हैं :

जल प्रदूषण

'जल ही जीवन है' अर्थात जल सम्पूर्ण जीव जगत का आधार है, जो न केवल मानव अपितु जीव–जन्तु, वनस्पति आदि का भी जीवन स्त्रोत हैं। शुद्ध जल जहाँ मानव को स्वस्थ रखता है, प्रदूषित जल अनेक बीमारियों का कारण बन जाता है। जल के प्रमुख स्रोत भूमिगत जल, वर्षा का एकत्र जल, नदियाँ आदि हैं। जल हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन का यौगिक (H_2O) होता है, किन्तु शुद्ध जल कहीं नहीं मिलता। इसमें वायुमण्डलीय अशुद्धियाँ जैसे धूल के कण, गैस आदि मिश्रित होते हैं अथवा अनेक रसायन एवं खनिज तत्व जैसे कैल्शियम, मेग्नीशियम, क्लोराइड, लोहा, जिंक, कैडमियम, सीसा, पारा, सल्फेट आदि मिश्रित होते हैं। इनकी सीमित या निर्धारित मात्रा हानिकारक नहीं होती है। यह अपद्रव्यता प्राकृतिक रूप से जल में होती, किन्तु इसके साथ–साथ मानव एवं उसके कृत्य जल को निरन्तर प्रदूषित करते रहते हैं, जिसके फलस्वरूप जल प्रदूषण होता है।

वर्तमान समय में जल के उपयोग में निरन्तर वृद्धि हो रही है। एक ओर घरेलू उपयोग में जल प्रयोग अधिक करने की प्रवृत्ति हो रही है तो दूसरी ओर गन्दें जल का निस्तारण किया जा

रहा है। उद्योगों से प्रदूषित जल बाहर भूमि पर, नदी के जल में, तालाबों, झीलों आदि में डाल दिया जाता है। जल प्रदूषण निम्न प्रकार से होता हैं :

(i) घरेलू गन्दगी का बहाव

(ii) वाहित मल

(iii) औद्योगिक बहिःस्त्राव

(iv) कृषि बहिःस्त्राव

(v) रेडियोधर्मी अवशिष्ट

(vi) तापीय प्रदूषण

राजस्थान राज्य का नाम आते ही यद्यपि जल की कमी और शुष्कता का आभास होता है, किन्तु यह राज्य जल प्रदूषण से मुक्त नहीं हैं। हाँ पश्चिमी राजस्थान के शुष्क प्रदेश में जल प्रदूषण की समस्या सीमित है, किन्तु इसके भी कुछ भाग विशेषकर पाली जहाँ रंगाई–छपाई उद्योग का विकास हुआ है, जल प्रदूषण से अत्यधिक ग्रसित है। लूनी नदी का जल दिन–प्रतिदिन प्रदूषित होता जा रहा है।

जल प्रदूषण की समस्या राजस्थान के नगरीय क्षेत्रों में अधिक है। जयपुर, कोटा, उदयपुर, अजमेर, जोधपुर, बीकानेर, अलवर, भरतपुर, भीलवाड़ा, श्रीगंगानगर जैसे बड़े नगरों में घरों से प्रवाहित गन्दा जल एवं वाहित मल जल प्रदूषण का प्रमुख कारण है। जलाशयों एवं नदियों में वस्त्रों का धोना, नहाना, पशुओं की सफाई करना, मल को बहा देना एक आम आदत है। डिटरजेन्ट के उपयोग में वृद्धि से भी जल प्रदूषण अधिक हो रहा है।

उद्योगों से निकले जल में अनेक विषैले पदार्थ होते हैं। यदि इसको भूमि पर भी प्रवाहित किया जाता है तो यह भूमिगत जल को विषाक्त बना देता है और नदियों या तालाब आदि में प्रवाहित करने पर सम्पूर्ण जल को प्रदूषित कर देता है। राजस्थान की वर्ष पर्यन्त प्रवाहित होने वाली एकमात्र चम्बल नदी औद्योगिक प्रदूषण की चपेट में है। लूनी नदी रंगाई छपाई से अत्यधिक प्रदूषित हो गई है। इसी प्रकार साँगानेर के रंगाई–छपाई उद्योग से इस क्षेत्र का भूजल तक प्रदूषित हो रहा है।

राज्य की अनेक झीलें एवं सरोवर जैसे राजसमंद, जयसमंद, पिछोला, फतेह सागर, आना सागर, फाई सागर, सीलीसेढ़, पुष्कर सरोवर, रामगढ़ झील ही नहीं, अपितु सैकड़ों छोटे तालाब जल प्रदूषण की चपेट में है। जल प्रदूषण के कारण मानव स्वास्थ्य पर हाँनिकारक प्रभाव हो रहा है तथा पेट एवं आँतों की बीमारियाँ तथा हैजा, टाइफाइड, डायरिया, पेचिस, पीलिया आदि का प्रकोप अधिक होता जा रहा है। राज्य के दक्षिणी भाग में 'नाहरू' रोग भी जल में उत्पन्न सूक्ष्म कीटाणुओं से फैलता है। मानव पर ही नहीं अपितु जल–जीवों पर भी प्रदूषण का प्रभाव पड़ता है। अनेक झीलों में शैवाल की वृद्धि भी प्रदूषण के कारण होती हैं।

जल प्रदूषण को रोकने हेतु जहाँ वाहित जल–मल के निस्तारण एवं शुद्धिकरण की उचित व्यवस्था आवश्यक है वहीं उद्योगों द्वारा निस्तारित जल को जल स्रोतों में छोड़ने पर रोक लगाना आवश्यक है। शुद्ध पेयजल की उचित व्यवस्था होना आवश्यक है। नगरों में जल–मल निस्तारण पर समुचित ध्यान देना आवश्यक है। इस दिशा में सरकार भी विशेष कदम उठा रही है। चम्बल शुद्धिकरण कार्यक्रम को स्वीकृति मिल चुकी है। अन्य क्षेत्रों में भी जल प्रदूषण रोकने के समुचित उपाय किये जा रहे हैं। झीलों के शुद्धिकरण हेतु पुष्कर, आनासागर, पिछोला, फतेहसागर, राजसमंद, जयसमंद, आदि के लिये योजना बना कर कार्य प्रारम्भ किया जा रहा है। सहकारी प्रयत्नों के साथ–साथ जल प्रदूषण रोकने के लिये जनभागीदारी सबसे अधिक आवश्यक है। समाजसेवी संस्थाओं द्वारा भी इस दिशा में आवश्यक कदम उठाना आवश्यक है।

वायु प्रदूषण

वायु पृथ्वी पर जीवन का आधार है, क्योंकि इसी से प्राणियों एवं जीव–जंतुओं को ऑक्सीजन एवं वनस्पति को कार्बन–डाई–ऑक्साइड मिलती हैं, जिससे उनका पोषण होता है। वायु एक विशेष तत्व नहीं, अपितु अनेक गैसों का आनुपातिक मिश्रण है, जिसमें 78 प्रतिशत नाइट्रोजन, 20.94 प्रतिशत ऑक्सीजन तथा शेष में अर्थात् मात्र एक प्रतिशत में आर्गन, कार्बन–डाई–ऑक्साइड, निओन, हीलियम, मीथेन, हाइड्रोजन, सल्फर ऑक्साइड, ओजोन, कार्बन–मोनो–ऑक्साइड, अमोनिया, जिनोन आदि होती है। उपर्युक्त संरचना में यदि परिवर्तन आता है और अनुपात में अंतर आने लगता है तो वहीं से वायु प्रदूषण होने लगता है जैसे कार्बन–डाई–ऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि होना आदि।

राजस्थान में वायु प्रदूषण मुख्यतः दो कारणों से होता है :–

1. प्राकृतिक कारण 2. मानव–जनित कारण

प्राकृतिक कारण

राजस्थान राज्य के 33 जिलों में से 12 जिलों में मरूस्थल फैला हुआ है ये जिले है, गंगानगर, हनुमानगढ़, बीकानेर, चूरू, झुंझुनू, सीकर, जोधपुर, पाली, बाड़मेर, जैसलमेर तथा जालौर। यहाँ की जलवायु शुष्क हे तथा बहुत बड़े क्षेत्र में रेतीली मृदा फैली हुई है। इस क्षेत्र में कम वर्षा के कारण प्राकृतिक वनस्पति की कमी है। इस क्षेत्र में वार्षिक औसत वर्षा 100 मिमि. से 500 मिमि. तक होती है। सर्दियों में यहाँ का तापमान जमाव बिन्दु तक पहुँच जाता है तथा गर्मी में कभी–कभी 50^0 सेन्टीग्रेड तक छूने लगता है। अप्रेल से जून महीने के बीच जब तापमान बढ़ने लगता है तब इस क्षेत्र में तेज हवाएँ चलती है जो अपने साथ रेत लिये होती है, इन्हें आँधी कहा जाता है। ये हवाऐं 50 से 150 कि.मी. की रफ्तर से चलती है। इनका न्यून्तम समय एक या आधे घंटे होता है परन्तु अधिकतम समय 10 से 15 दिनों तक रहता है। पश्चिमी भाग विशेषतर बीकानेर, जैसलमेर तथा बाड़मेर में आँधियाँ अधिकतम समय तक रहती है। इससे वायु में रेत के इतने सघन कण समाहित रहते हैं कि कभी–कभी सूर्य की रोशनी भी बाधित रहती है। इस तरह प्राकृतिक कारण से पश्चिमी राजस्थान वायु प्रदूषण से प्रभावित सबसे बड़ा क्षेत्र है।

मानव जनित कारण

वायु प्रदूषण के लिये मानव जनित कारण अधिक उत्तरदायी है। इसमें वाहनों द्वारा, उद्योगों द्वारा, खनन द्वारा सर्वाधिक वायु प्रदूषण होता है। राज्य में मानव–जनित प्रदूषण के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं :

(i) **वाहन जनित वायु प्रदूषण** – शहरों में मोटर वाहन तथा दो पहिये वाहनों की बढ़ती हुई संख्या वायु प्रदूषण का मुख्य स्रोत है। राज्य में पंजीकृत वाहनों की संख्या 29.5 लाख से अधिक है और प्रतिवर्ष लगभग 4 से 5 लाख वाहनों की वृद्धि हो रही है। इन वाहनों में सबसे अधिक वृद्धि दर दो पहिया, ऑटोरिक्शा, कार, जीप तथा बसों की है। पेट्रोल तथा डीजल आधारित वाहनों से कई प्रकार की वुाय प्रदूषित करने वाली गैसों का उत्सर्जन होता है। इसमें हाइड्रोकार्बन एवं नाइट्रोजन तथा कार्बन मोनोऑक्साइड प्रमुख हैं जिनसे वायु प्रदूषण फैलता है तथा मानव स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। यह समस्या राजस्थान के बड़े नगरों जैसे जयपुर, जोधपुर, कोटा, बीकानेर, अजमेर, भीलवाड़ा, ब्यावर, अलवर, श्रीगंगानगर, भरतपुर, आदि में अधिक हैं। राष्ट्रीय राजमार्ग के निकटवर्ती क्षेत्रों में भी वायु प्रदूषण अधिक होता है।

(ii) **उद्योगों एवं ताप विद्युत ग्रहों द्वारा** – राजस्थान में उद्योगों का विकास सीमित है, किन्तु जिन नगरों में यह हुआ है, वहाँ वायु, प्रदूषण में निरन्तर वृद्धि हो रहीं है। कोटा, जयपुर, अलवर, अजमेर, किशनगढ़, पाली, उदयपुर में स्थित औद्योगिक प्रतिष्ठान वहाँ के पर्यावरण को प्रदूषित कर रहे है। कतिपय कारखाने जैसे लाखेरी, मोड़क, निम्बोहेड़ा के सीमेन्ट संयंत्र, श्रीगंगानगर, भोपालसागर की चीनी मिल, उदयपुर, जयपुर, कोटा, अलवर के रसायन उद्योग वायु प्रदूषण में अधिक वृद्धि कर रहे हैं। तापीय विद्युतग्रहों से निकलने वाला धुआं और राख वायु प्रदूषण फेलाती है। कोटा का सुपर थर्मल प्लान्ट जो नगर के निकट स्थित है द्वारा कोटा नगर के वृहत भाग की वायु प्रदूषित रहती है। सूरतगढ़ एवं छबड़ा के ताप विद्युत गृह भी वायु प्रदूषण फेलाते है। राज्य में अनेक औद्योगिक क्षेत्र विकसित हुए हैं जहाँ वायु प्रदूषण में निरन्तर वृद्धि हो रही है।

(iii) **खनन** – राजस्थान एक खनिज प्रधान राज्य है। यहाँ देश के कई महत्वपूर्ण खनिज तांबा, सीसा, जस्ता, खड़िया पत्थर, सिलिका रेत, चूना पत्थर, जिप्सम तथा संगमरमर आदि का यहाँ खनन होता है। पर्यावरण प्रदूषण की दृष्टि से राज्य में खनन को दो भागों में बाँटा जा सकता है। पहला प्रधान खनिज खनन क्षेत्र तथा दूसरा अधात्विक खनन क्षेत्र। प्रधान खनिज में सीसा जस्ता जो कि भीलवाड़ा जिले के आगुचा क्षेत्र, दरीबा–बिथुम्नी जिला राजसमंद तथा उदयपुर जिले का जावर क्षेत्र पर्यावरण प्रदूषण की दृष्टि से अतिसंवेदनशील क्षेत्र है। खनन के दौरान सीसे का हवा में घुल जाने से मनुष्य के स्वास्थ्य पर शीघ्र ही विपरीत प्रभाव पड़ता है। खेतड़ी क्षेत्र में ताँबा का खनन भी प्रदूषण का कारक है। अखनिज प्रधान खनन क्षेत्र जिसमें सेन्डस्टोन, चूना पत्थर, ईमारती पत्थर व संगमरमर शामिल है।

मुख्य रूप से बिजौलिया (भीलवाड़ा), कोटा स्टोन (रामगंजमण्डी), झालावाड़, धौलपुर, करौली, जोधपुर सेन्डस्टोन, स्लेट स्टोन जिला अलवर, संगमरमर का मकराना क्षेत्र, राजसमंद आदि जिलों में खनन होता है। खनन का कार्य खुली खदानों में बारुद से विस्फोटों के माध्यम से किया जाता है जिससे भारी मात्रा में वायु प्रदूषित होती है। वायु में पत्थर तथा मृदा के कण श्वास द्वारा मानव तथा पशुओं के शरीर में प्रवेश करते हैं। जिससे स्वास्थ्य पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ता है तथा कई प्रकार की बीमारियाँ होती हैं जिनमें सिलिकोसिस मुख्य है।

वायु प्रदूषण मात्र शहरों में ही हो रहा है, यही नहीं है अपितु ग्रामीण क्षेत्रों में भी इसका प्रकोप है। राजस्थान के गाँवों में ईंधन के रूप में गोबर के कण्डे तथा अन्य वनस्पति को उपयोग में लिया जाता है, जिससे अत्यधिक धुआँ होता है, जो वायु–प्रदूषण का कारक है। खेतों में अवशिष्ट पदार्थों को जलाना, कुम्हार द्वारा मिट्टी के बर्तन बनाने में अलाव लगाना, ईंटों के भट्टे आदि भी वायु प्रदूषण में वृद्धि करते हैं। सिंचित प्रदेशों तथा अन्य कृषि प्रदेशों में रासायनिक उर्वरकों का तथा कीटनाशक दवाओं के उपयोग में वृद्धि से ग्रामीण अंचल के वातावरण में वायु प्रदूषण अधिक हो रही है। खनिज खनन के क्षत्रों में खानों से निकले रेत के कण भी वायु प्रदूषण को जन्म देते हैं। यहीं नहीं, अपितु पश्चिमी मरूस्थलीय भाग में तेज आँधियां नियमित रूप से आना भी वायु प्रदुषण का प्रमुख कारण है।

वायु प्रदूषण का सर्वाधिक हाँनिकारक प्रभाव मानव के श्वसन–तंत्र पर होता है तथा इससे ब्रोकाइटिस, गले का दर्द, निमोनिया, फेफड़ों का केंसर, हृदय रोग आदि हो जाते हैं। वाहनों के धुएँ में मिश्रित सल्फर डाई ऑक्साइड, नाइट्रोजन डाई ऑक्साइड और सीसा श्वास रोगों के अतिरिक्त यकृत, आहार नली, मस्तिष्क रोग, हड्डियों का गलना आदि बीमारियों का कारण होता है। मानव के अतिरिक्त पशु–पक्षियों तथा वनस्पति पर भी वायु प्रदूषण का विपरीत प्रभाव होता है। वायु प्रदूषण पर नियंत्रण हेतु अनेक कानून हैं, प्रभावशाली रूप में लागू करना आवश्यक है। उद्योगों से होने वाले वायु प्रदूषण को सरलता से नियन्त्रित किया जा सकता है, यदि उसे पर्यावरण की दृष्टि से स्थापित किया जाए। प्रमुखतः वाहनों द्वारा होने वाले वायु प्रदूषण को नियन्त्रित करने की आवश्यकता है।

ध्वनि अथवा शोर प्रदूषण

ध्वनि अथवा शोर जब असहनीय हो जाए तो वह प्रदूषण बन जाता है जैसे बिजली की कड़क, शेर की दहाड़, मोटर गाड़ियों के तेज हॉर्न, तेज वाद्य का बजना आदि। अनुभव के आधार पर ध्वनि प्रदूषण श्रेणीबद्ध करना कठिन है, क्योंकि किसी को तेज शोर भी सुखद लगता है तो दूसरे को मध्यम भी शौर लगती है। ध्वनि का मापन डेसीबल (dB) में किया जाता हैं वार्तालाप की ध्वनि 60 डेसीबल आँकी गई है, जबकि मोटर हॉर्न की 110–130 डेसीबल से अधिक ध्वनि पीड़ादायक होती है और 150 के पश्चात् असहनीय। अधिकांश देशों में 75 से 85 डेसीबल ध्वनि को सहनीय सीमा मानी गई है।

राजस्थान में ध्वनि प्रदूषण की समस्या बहुत कम है। प्रमुख नगरों में दिन के समय वाहनों का शोर अब समस्या बनता जा रहा है। इस प्रकार कारखानों में तथा मशीनों एवं खानों में विस्फोट द्वारा तोड़–फोड़ का शोर होता रहता है। राष्ट्रीय राजमार्गों एवं अन्य प्रमुख परिवहन मार्गों पर ध्वनि प्रदूषण अधिक होता है। अन्य सभी क्षेत्रों में समान रेड़ियों, टेलीविजन, लाउडस्पीकर एवं अन्य वाद्य यंत्रों का शोर अब आम होता जा रहा है। ध्वनि प्रदूषण मानवीय स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। ध्वनि प्रदूषण के प्रभाव निम्न हैं :

(i) श्रवण शक्ति का कम हो जाता।

(ii) मस्तिष्क पर ध्वनि प्रदूषण का अत्यधिक प्रभाव होता है। इससे नींद का ठीक से न आना, एकाग्रता कम होना, स्मृति कमजोर होना, तनावग्रस्त रहना, सिरदर्द का होना आदि बीमारियाँ होती है।

(iii) ध्वनि प्रदूषण से हृदय रोगियों को कठिनाई होती है तथा एकाएक तेज ध्वनि से घबराहट तथा हृदयघात होने की भी सम्भावना रहती है।

(iv) रक्तचाप में वृद्धि भी ध्वनि प्रदूषण से होती है। राज्य के प्रमुख नगरों में ध्वनि प्रदूषण में निरन्तर वृद्धि हो रही है। ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण हेतु राजस्थान कोलाहल नियंत्रण एक्ट, 1963 बना हुआ है, जिसकी विभिन्न धाराओं में रात्रि 11.00 बजे से प्रातः 5.00 बजे तक ध्वनि विस्तार यन्त्रों को प्रतिबन्धित किया हुआ है। इसी एक्ट में व्यवस्था है कि चिकित्सालयों, विद्यालयों, विश्वविद्यालयों, हॉस्टल, न्यायलयों, सरकारी कार्यालयों आदि के परिसर से 150 मीटर दूरी के अन्दर ध्वनि विस्तारक यन्त्र काम नहीं लिये जा सकते। भारतीय मोटर वाहन कानून में भी शौर नियन्त्रण के प्रावधान हैं। कानून के अतिरिक्त ध्वनि प्रदूषण रोकने में जन भागीदारी की भूमिका प्रमुख है, यदि हम में से प्रत्येक इस दिशा में सक्रीय भूमिका निभायें तो ध्वनि नियन्त्रण किया जा सकता है।

भू–प्रदूषण अथवा मृदा प्रदूषण

जब प्राकृतिक अथवा मानवीय कार्यों से भूमि का प्राकृतिक स्वरूप नष्ट होने लगता है, तब वहीं से भू–प्रदूषण प्रारम्भ होता है। भू–प्रदूषण से तात्पर्य है– ''भूमि के भौतिक, रासायनिक या जैविक गुणों में ऐसा कोई अवांछित परिवर्तन, जिसका प्रभाव मनुष्य एवं अन्य जीवों पर पड़े या भूमि की प्राकृतिक गुणवत्ता नष्ट हो, तो वह भू–प्रदूषण कहलाता है।'' प्राकृतिक रूप से मृदा का कटाव, नदियों के किनारों पर बीहड़ों का विस्तृत होना, भू–स्खलन, भूमि में अम्लता एवं क्षारीयता उत्पन्न होना आदि भी भू–प्रदूषण के अन्तर्गत आते हैं, किन्तु वर्तमान समय में भू–प्रदूषण से सम्बन्धित मूल समस्या ठोस, अपशिष्ट अथवा कूड़ा–करकट द्वारा भू–प्रदूषण है।

जनसंख्या में वृद्धि, नगरीकरण, औद्योगीकरण, मानव आवश्यकताओं में अत्यधिक वृद्धि, जीवन स्तर में वृद्धि आदि के कारण अनुपयुक्त पदार्थों के बाहर फेंक दिया जाता है। इसमें घरेलू उपयोग की वस्तुएँ, जैसे कपड़े, प्लास्टिक के थैले एवं अन्य सामान, काँच, कागज, गन्ना, तार, उद्योगों से निकले अपशिष्ट, खदानों से निकला, मलबा, कृषि अवशिष्ट आदि प्रमुख हैं। इन्हें निम्न प्रकार चार श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है–

(i)	घरेलू अपशिष्ट (Domestic Wastes)	(ii)	औद्योगिक एवं खनन अपशिष्ट
(iii)	नगरपालिका अपशिष्ट	(iv)	कृषि अपशिष्ट

घरेलू अपशिष्टों में निरन्तर वृद्धि भू–प्रदूषण का एक ऐसा कारण है, जिससे राजस्थान के नगर ही नहीं, अपितु कस्बे भी प्रभावित हो जा रहे हैं। घरों से प्रतिदिन सफाई कर धूल–मिट्टी, कागज, प्लास्टिक, धातु, काँच के टुकड़े, सब्जी–फल के छिलके, अप्रयुक्त रसायन आदि को घरों से बाहर अथवा सड़कों पर डाल दिया जाता है। इनका उचित निस्तारण न होने से भूमि प्रदूषित होती है। प्लास्टिक की थैलियों के प्रयोग ने इस समस्या को और अधिक गम्भीर बना दिया है।

औद्योगिक अपशिष्टों द्वारा भू–प्रदूषण राजस्थान में अपेक्षाकृत कम है, फिर भी जयपुर, कोटा, उदयपुर, अलवर, भीलवाड़ा, श्रीगंगानगर, अजमेर, किशनगढ़ आदि में उद्योगों के अवशिष्ट पदार्थों का उचित निस्तारण न होने से ये भूमि प्रदूषण फैलाते हैं। यह समस्या मात्र वृहद् उद्योगों की ही नहीं, अपितु अनेक छोटे उद्योग भी इसमें वृद्धि करते हैं।

राज्य में अनेक वृहत् तथा लघु सीमेंट इकाईयों से वायु द्वारा फैलने वाली सीमेंट आसपास के क्षेत्र में जमा हो जाती है जिससे मृदा की उर्वरक क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। ये सीमेंट इकाईयाँ मुख्यतः चित्तौड़गढ़, जोधपुर, नागौर, अलवर, चूरू तथा सिरोही जिलों में है। इसी तरह से ईमारती पत्थर, संगमरमर तथा ग्रेनाइट के काटने तथा इनकी पॉलिशिंग के लिए स्थापित इकाईयों में से निकलने वाले तरल मलबे का जमाव भी अजमेर, राजसमंद, उदयपुर तथा सिरोही जिलों में फैला हुआ देखा जा सकता है। इस मलबे के फैलने के कारण भी मृदा की उर्वरता समाप्त हो जाती है। कोटा तथा सूरतगढ़ स्थित ताप विद्युत गृह से निकलने वाली राख औद्योगिक इकाईयों के चारों और 1 से 2 किलोमीटर की दूरी में फैल जाती है जिससे खेती की जमीन प्रदूषित होती है। इसके अलावा बाड़मेर, पाली, जोधपुर तथा भीलवाड़ा में स्थिति कपड़ा मिल तथा रंगाई–छपाई के कारखाने से निकलने वाले प्रदूषित जल के वाष्पीकृत होने के पश्चात् बचा हुआ ठोस अपशिष्ट अत्यन्त ही खतरनाक व जहरीला होता है। उसके निस्तारण की पुख्ता व्यवस्था होना अति आवश्यक है।

नगरपालिका अपशिष्ट से तात्पर्य है नगरों में एकत्रित गन्दगी का कतिपय स्थानों पर ढेर लग जाता। यह सभी नगरों की मूल समस्या है। वृहद् नगरों में इसका विस्तार वृहद् होता है तो छोटों में कम। शहरों तथा कस्बों से निकलने वाले ठोस अपशिष्ट को एकत्रित कर उनकी सही ढंग से निस्तारण करने की जिम्मेदारी नगर निकायों की है। राजस्थान के शहरों से प्रतिदिन लगभग 6600 मेट्रिक टन कचरा निकलता है। इसमें से अधिकांश कचरा या तो धरातल के समतल बनाने के काम में लिया जाता है या फिर शहर के आसपास गढ्ढों में फैंक दिया जाता है। जयपुर शहर में ठोस अपशिष्ट प्रबंधन पर करवाये गये शोध के अनुसार यहाँ प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति 0.75 किलोग्राम कचरा बनता है जिसके अनुसार पूरे शहर में 1750 मेट्रिक टन कचरा सृजित होता है। इस सम्पूर्ण व्यवस्था का निस्तारण की उचित व्यवस्था नहीं है। इसी प्रकार की स्थिति राज्य के सभी बड़े नगरों की है। उचित निस्तारण न होने के कारण इससे भूमि प्रदूषण होता है जो अनेक बीमारियों का कारण है।

भू–प्रदूषण से भूमि की प्रकृति तो परिवर्तित होती ही है, इससे जल एवं वायु प्रदूषण में भी वृद्धि होती है। इससे भूमि की उर्वरता नष्ट होती है तथा बंजर भूमि का विस्तार होता है।

भू–प्रदूषण अनेक बीमारियों का कारण होता है, जिसमें टी.बी., पेचिश, मलेरिया, आँखों के रोग, आन्त्रशोध आदि प्रमुख है। इस समस्या के निराकरण हेतु प्रमुख आवश्यकता है नगरीय स्तर पर अपशिष्ट पदार्थों का निस्तारण अर्थात् भस्मीकरण, रसायन क्रिया द्वारा समाप्त करना अथवा कम्पोस्ट आदि द्वारा उसे पुनः उपयोग योग्य बनाना। इसी प्रकार उद्योगों के अपशिष्ट समाप्त करने हेतु उचित व्यवस्था करने को बाध्य करना और खानों से निकले मलबे का उचित उपयोग करने की व्यवस्था द्वारा इस समस्या को सीमित किया जा सकता है।

अन्य चुनौतियाँ

राजस्थान में उपर्युक्त वर्णित पर्यावरणीय चुनौतियों के अतिरिक्त अन्य चुनौतियाँ निम्नांकित हैं :

भूजल स्तर गिरना

राजस्थान में वर्षा की कमी तथा अत्यधिक दोहन से भूजल स्तर निरन्तर गिर रहा है। यह यहाँ के पारिस्थितिकी तंत्र के लिये खतरा है। राज्य में 180 ब्लाक 'डार्क जोन' की श्रेणी हैं, जहाँ भूजल स्तर की भयावह स्थिति है। इसके लिये ट्यूबवेल द्वारा जल दोहन सर्वाधिक उत्तरदायी है। भूजल पुर्नभरण हेतु समुचित उपाय अति आवश्यक है अन्यथा राज्य में भयंकर पारिस्थितिक संकट की स्थिति उत्पन्न हो जायेगी।

जलाभरण अथवा सेम (Water Logging)

यह समस्या मूलतः सिंचित क्षेत्रों में उत्पन्न हुई है वो भी कतिपय विशिष्ट क्षेत्रों में। जलाभरण से तात्पर्य है किसी क्षेत्र में पानी का भरा रहना। इस पानी के भरने से उसके समीपवर्ती क्षेत्र में नमी अधिक हो जाती है जिसे स्थानीय भाषा में 'सेम' कहते हैं। राजस्थान के इंदिरा नहर द्वारा सिंचित क्षेत्र में जब पानी दिया जाता है तो निरन्तर पानी देने या अधिक पानी देने से वह पानी जमीन द्वारा सोखा नहीं जाता और भरा रह जाता है। इसका दूसरा कारण भूमिगत जल का कतिपय क्षेत्रों में ऊपर आ जाना भी है। इसके अतिरिक्त भूमि के नीचे यदि अप्रवेश्य चट्टान हो तो भी पानी भरा रहता है। इस प्रकार के जलाभरण अथवा सेम की समस्या राजस्थान के गंगानगर–हनुमानगढ़ जिलों में, सूरतगढ़, बढ़ोपल, रावतसर और बीकानेर के लूनकरणसर क्षेत्र में देखने को मिलती है। यहाँ सैकड़ों हैक्टेयर भूमि पर जलाभरण होने से वह कृषि के लिये उपयुक्त नहीं रही है और वहाँ का पर्यावरण भी प्रदूषित हो रहा है। इसके लिये सरकार ने नालियाँ बनाकर पानी की निकासी का प्रबन्ध किया है।

जल में फ्लोराइड के कारण फ्लोरोसिस होना

राजस्थान में भूमिगत जल में प्राप्त पी.पी.एम. की मात्रा एवं फ्लोराइड की मात्रा तथा फ्लोरिसिस की समस्या से अनेक जिले ग्रसित है। राज्य के समस्त जिलों के भूजल में फ्लोराइड की मात्रा सुरक्षित स्तर (1.5 पी.पी.एम.) को पार कर गई है। राज्य के 6449 गाँवों में 1.5 से 5 पी.पी.एम.। 698 गाँवों में 5.1 से 10 पी.पी.एम., 1452 गाँवों में 10 पी.पी.एम. से भी अधिक है। इसमें सर्वाधिक प्रभावित जिले जालौर, बाँसवाड़ा, बाड़मेर, जैसलमेर, नागौर एवं सिरोही है। अजमेर, अलवर, भीलवाड़ा, बीकानेर, चूरू, झुंझुनू, पाली, सीकर, उदयपुर भी इसकी चपेट में हैं। इसके कारण फ्लोरोसिस की समस्या अधिक होती जा रही है। इससे कुबड़पन, दाँतों की सड़न

तथा हड्डियों की बीमारी का प्रकोप होता है। इसका निराकरण पानी का शुद्धिकरण हैं, जिसका उचित प्रबन्ध आवश्यक है।

महत्वपूर्ण सुझाव

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि राजस्थान में अनेक पर्यावरणीय चुनौतियाँ है। केन्द्रीय पर्यावरण मंत्रालय एवं राज्य सरकार का पर्यावरण विभाग इस दिशा में अनेक प्रयत्न कर रहा है। विशेष अधिनियमों एवं प्रावधानों द्वारा पर्यावरण हानिकारक उद्योगों की स्थापना पर रोक, खनन कार्य नियंत्रण, वनोन्मूलन पर रोक, वाहनों द्वारा होने वाले प्रदूषण, जल प्रदूषण आदि पर रोक लगाने की व्यवस्था कर रही है। साथ ही ये वृक्षारोपण कार्यक्रम को वृहद पैमाने पर चला रहे हैं तथा मरूस्थलीय क्षेत्र के विकास हेतु अनेक परियोजनाएँ चला रहें हैं, किन्तु इस दिशा में अभी बहुत कुछ करना बाकी है। विशेष रूप से सामान्य जनों को पारिस्थितिकीय संकट एवं पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागरूक करना आवश्यक है। यह कार्य मात्र सरकार ही नहीं कर सकती, इसके लिये स्वयंसेवी एवं सामाजिक संस्थाओं की भूमिका महत्वपूर्ण है। यद्यपि विशेषज्ञों द्वारा इस सम्बन्ध में समुचित योजना तैयार की जाती है, किन्तु प्रमुख आवश्यकता राज्य में पर्यावरण सुधार हेतु एक 'मास्टर प्लान' तैयार करने की है। इसमें तात्कालिक उपायों के अतिरिक्त दीर्घकालिक योजनाओं को सम्मिलित करना आवश्यक है।

राजस्थान में पर्यावरणीय चुनौतियों के सम्बन्ध में निम्नांकित सुझाव उल्लेखनीय हैं :

(1) वृक्षारोपण कार्यक्रम को विस्तृत एवं विशिष्ट क्षेत्रों में चलाया जाए। इसके अन्तर्गत –

- (i) बंजर पहाड़ियों पर वृक्षारोपण हो।
- (ii) वृक्षों का संरक्षण किया जाए।
- (iii) शुष्क प्रदेशों में विशिष्ट वृक्षों को लगाया जाए।
- (iv) सामाजिक वानिकी योजना पंचायत स्तर पर लागू की जाए।
- (v) कृषि वानिकी को लागू किया जाए।
- (vi) स्थानीय पर्यावरण के अनुरूप वनस्पति को लगाया जाए।

(2) जल संरक्षण कार्यक्रम चलाया जाए, इसके अन्तर्गत –

- (i) वर्षा के जल का उपयोग
- (ii) उपलब्ध जल का अधिकतम उपयोग
- (iii) नवीन जल स्रोतों की खोज

(3) घास के मैदानों का एवं पशुपालन का विकास।

(4) अभयारण्य एवं वन क्षेत्रों का विकास पर्यटन स्थलों के रूप में हो।

(5) खनिज खनन में वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग एवं खदान से निकले मलबे के उचित उपयोग की व्यवस्था।

(6) मरूस्थलीय प्रदेश में टीले स्थाईकरण योजना (Sand-dune-Stabilisation) का कार्यक्रम चलाया जाए।

(7) जीव–जंतुओं को विलुप्त होने से बचाया जाना चाहिए।

(8) बंजर भूमि को कृषि योग्य बनाया जाए।

(9) चम्बल की बीहड़ों के विस्तार पर रोक।

(10) पर्यावरण प्रदूषण रोकने हेतु जल, वायु, ध्वनि एवं भूमि प्रदूषण को नियंत्रित करने के न केवल कार्यक्रम चलाया जाए, अपितु उनका नियमित मूल्यांकन किया जाए।

(11) उद्योगों की स्थापना के पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों पर ध्यान देना आवश्यक हैं।

(12) जल स्रोतों को प्रदूषित होने से बचाना।

(13) नगरों में पर्यावरण प्रदूषण अधिक होने से प्रत्येक नगर में इसके नियंत्रण हेतु उपाय किए जाने चाहिए।

(14) सिंचित प्रदेशों में जल एकत्र होने, लवणता एवं क्षारीयता पर नियंत्रण किया जाए।

(15) पर्यावरण शिक्षा प्राथमिक से स्नातक स्तर पर दी जाए।

(16) पर्यावरण चेतना को एक जन आंदोलन का एक स्वरूप देना आवश्यक है।

वास्तव में राजस्थान में पर्यावरणीय चुनौतियाँ गम्भीर हैं जिनको समय रहते सुधारना आवश्यक है। राजस्थान की विशिष्ट भौगोलिक संरचना होने के कारण पर्यावरणीय समस्याओं में भिन्नता है। अतः राज्य की सम्पूर्ण पर्यावरणीय दशाओं के अतिरिक्त क्षेत्रीय स्तर पर भी इनका निराकरण आवश्यक है। इसके लिये सरकारी स्तर पर प्रयत्न किये जा रहे हैं, आवश्यकता है जनजागृति एवं जन सहयोग की। पर्यावरण को स्वच्छ रखना तथा जीवन की गुणवत्ता को बनाये रखना प्रत्येक नागरिक का दायित्व है, जिसका निर्वहन ही इसका निदान है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राजस्थान में मरूस्थलीकरण का कारण हैं :–

(अ) वनोन्मूलन (ब) अनियंत्रित पशुचारण

(स) वर्षा की कमी (द) उपर्युक्त सभी

2. पाली में रंगाई–छपाई उद्योग से कौन सा प्रदूषण होता है?

(अ) वायु (ब) जल

(स) ध्वनि (द) उपर्युक्त सभी

3. चम्बल नदी सबसे अधिक कहाँ प्रदूषित है?

(अ) गाँधी सागर बाँध पर (ब) धौलपुर क्षेत्र में

(स) कोटा के निकट (द) जवाहर सागर पर

4. जल में फ्लोराइड की अधिक मात्रा से कौन सा रोग होता है?
   (अ) फ्लू (ब) उल्टी–दस्त
   (स) फेफड़ों के रोग (द) फ्लोरोसिस
5. 'डार्क जोन' किसे कहते हैं?
   (अ) जल विहीन क्षेत्र को (ब) भू–जल की संकट की स्थिति को
   (स) झीलों के सूखने को (द) नदी के सूखने को
6. 'सेम' की समस्या का सम्बन्ध किस प्रदेश से हैं?
   (अ) सिंचित क्षेत्र से (ब) कृषि क्षेत्र से
   (स) औद्योगिक क्षेत्र से (द) वनों से
7. 'हरित राजस्थान' कार्यक्रम का सम्बन्ध हैं?
   (अ) कृषि से (ब) वृक्षारोपण से
   (स) जल संरक्षण से (द) पशुपालन से

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. वनोन्मूलन किसे कहते हैं?
2. प्रदूषण कितने प्रकार के होते हैं?
3. तापीय गृहों से कौन सा प्रदूषण होता है?
4. वायु प्रदूषण किन क्षेत्रों मे अधिक होता है?
5. ध्वनि प्रदूषण मापन की इकाई क्या हैं?
6. जलाभरण की समस्या किस क्षेत्र में होती हैं?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. मरूस्थलीकरण किसे कहते हैं?
2. वनोन्मूलन के क्या कारण हैं?
3. वायु प्रदूषण के स्त्रोत क्या हैं?
4. भूमि प्रदूषण क्यों होता हैं?
5. ध्वनि प्रदूषण पर नियंत्रण कैसे किया जा सकता हैं?

निबन्धात्मक प्रश्न –

1. राजस्थान में मरूस्थलीकरण की समस्या, इसके प्रभाव और नियंत्रण के उपाय लिखिये।
2. राजस्थान में जल प्रदूषण के कारण, स्वरूप एवं नियंत्रण के उपायों का वर्णन कीजिए।
3. राजस्थान में वायु प्रदूषण की विस्तार से विवेचना कीजिए।

4. राजस्थान में मृदा प्रदूषण का विवेचन कीजिए।
5. राजस्थान में पर्यावरण की चुनौतियों को हल करने के उपायों का विवेचन कीजिए।

1. NDA age: 16 ½ - 19 Qualification: 10 +2 or Equivalent for Army and with Physics and Maths for AirForce &Navy. After selection training at NDA Khadakwasla Pune. Duration : 3 yrs at NDA & 1 yr at IMA.

2. 10 +2 Tech Entry Scheme (TES) age:16½ -19½ Qualification:10+2 Physicis, Chemistry and Maths (Aggregate 70% and above) After selection training at IMA Dehradun Duration : 5 yrs (1 yr IMA & 4 Yrs Engg Degree Permanent Commission after 4 yrs).

3. NCC (Spl) Entry for Men & Women age: 19 – 25 Qualification: Graduation with 50% aggregate marks 2 yrs service in NCC Sr Div. Army with minimum 'B' grade in 'C' certificate exam. After selection training at OTA Chennai Duration : 49 weeks.

अध्याय–7

सूचना का अधिकार, मानवाधिकार एवं बाल अधिकार संरक्षण

सूचना का अधिकार अधिनियम 2005, 15 जून, 2005 से कानून का रूप ले चुका है। इसके कुछ प्रावधान उसी तिथि से प्रभाव में आ गये हैं। 12 अक्टूबर, 2005 से जम्मू एवं कश्मीर राज्य को छोड़कर यह कानून पूरे देश में लागू हो गया हैं इसके साथ ही सूचना की स्वतंत्रता अधिनियम 2002 निरस्त हो गया है। केन्द्रीय अधिनियम के प्रभावी हो जाने पर राजस्थान सरकार द्वारा 'राजस्थान सूचना का अधिकार अधिनियम 2000' को निरस्त कर दिया गया है। सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 के अनुसार भारत के सभी नागरिकों को सूचना प्राप्त करने का अधिकार दिया गया है। सरकारी गोपनीयता अधिनियम 1923 और अन्य कानून के प्रावधानों के बावजूद इस अधिनियम के प्रावधान प्रभावी हैं।

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005, धारा 4 की उपधारा 1, धारा 5 की उपधारा 1 और 2, धारा 12, 13, धारा 15, 16, धारा 24, 27 और 28 के उपबन्ध तुरन्त प्रभावी होंगे। इस अधिनियम के शेष उपबन्ध इस अधिनियम के 120वें दिन को लागू होंगे। इस अधिनियम में प्रत्येक लोक प्राधिकारी के कार्यकरण में पारदर्शिता और उत्तरदायित्व के संवर्धन के लिए, लोक प्राधिकारियों के नियन्त्रण में होने वाले कार्यों की सूचना तक पहुँच सुनिश्चित करने के लिए नागरिकों के सूचना के अधिकार की व्यवहारिक पद्धति स्थापित करने हेतु एक केन्द्रीय सूचना आयोग और राज्य सूचना आयोग गठन करने की व्यवस्था है। लोकतंत्र, शिक्षित नागरिक वर्ग तथा ऐसी सूचना की पारदर्शिता की अपेक्षा करता है, जो उसके कार्यकरण तथा भ्रष्टाचार को रोकने के लिए सरकारों और उनके उपकरणों (परिकरणों instrumentalities) को शासन के प्रति उत्तरदायी बनाने के लिए अनिवार्य है।

सूचना का अधिकार : अर्थ और उपयोगिता

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा स्वतंत्र एवं सम्प्रभु राष्ट्रों के रूप में मान्यता प्राप्त 190 में से लगभग 70 देशों ने अपने नागरिकों को सूचना का अधिकार विधिवत् प्रदान किया हैं सूचना के अधिकार से निष्क्रिय एवं सुस्त हुए तन्त्र में नवशक्ति का संचार होगा, काम करने की प्रक्रिया में सुधार होगा, सरकारी तंत्र में पारदर्शिता तथा जवाबदेही को सुनिश्चित किया जा सकेगा और कामकाज में होने वाली अनियमितताओं को पकड़ा जा सकेगा।

अर्थ :–

सूचना के अर्थ के संदर्भ में सूचना के अधिकार को जाना जा सकता है। 1996 में गठित एच. डी. शौरी आयोग के अनुसार सूचना की स्वतंत्रता का तात्पर्य है–सूचना प्राप्त करने की स्वतंत्रता, जिसमें निरीक्षण, टिप्पणियाँ–उद्धरण लेना, कागजात की प्रमाणिक प्रतियाँ, लोक अधिकारी का रिकार्ड

लेना, कम्प्यूटरों का अन्य किसी इलेक्ट्रामैगनेटिक यन्त्र में रखी सामग्री–दस्तावेज प्राप्त करना, टर्मिनल के माध्यम से सूचना प्राप्त करने की सुविधा लेना आदि अंतर्निहित हैं। इसमें लोक अधिकारी के निर्णय, कार्य से सम्बन्धित कागज या रिकार्ड आदि शामिल हैं।

राजस्थान विधानसभा द्वारा पारित एवं जनवरी, 2001 से लागू राजस्थान सूचना का अधिकार अधिनियम, 2000 की धारा 2(अ) के अनुसार सूचना से तात्पर्य राज्य या किसी लोकनिकाय के कार्य–कलापों से सम्बन्धित कोई भी सामग्री या सूचना से है।

जनता के लिए, जनता के द्वारा चुनी गयी सरकारों को संचालित एवं नियन्त्रित करने के लिए एक न्यूनतम शर्त है–जानने का अधिकार। भारत में इस अधिकार को लेकर पिछले कई वर्षों से बहस चल रही थी जो अब यह अन्तराल के बाद संवैधानिक अधिकार के रूप में है।

उपयोगिता :–

सूचना के अधिकार की उपयोगिता एवं औचित्य को स्पष्ट करने हेतु इसे व्यापक संदर्भ में देखना होगा। लोकतंत्र तथा प्रशासनिक व्यवस्था के संचालन में यह अधिकार अपने औचित्य व उपयोगिता को सिद्ध करता है। सूचना के अधिकार की उपयोगिता का परीक्षण निम्नांकित विविध आयामों से स्पष्ट किया जा सकता है :–

(1) लोकतंत्र का आधार :–

सूचना का अधिकार किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था को समृद्ध व संरक्षित बनाने के लिए महत्त्वपूर्ण स्तम्भ माना जाता है। पारदर्शी लोकतंत्र एवं जवाबदेह लोकतंत्र की अनिवार्यताओं पर लोकतंत्र की सफलता निर्भर करती है। इसी कारण विश्व के जिन देशों ने सूचना के अधिकार को मान्यता दी है, उनमें अधिकांशतः लोकतांत्रिक राष्ट्र ही हैं। लोकतंत्र की सफलता के लिए सबसे बड़ा पैमाना उस देश, राज्य या क्षेत्र की जनता की जागरूकता है। इसको बनाये रखने के लिए सूचना का प्रवाह आवश्यक है।

(2) मानवाधिकार :–

मानव अधिकारों के विविध ऐतिहासिक दस्तावेजों में सूचना के अधिकार को मौलिक मानव अधिकारों के रूप में स्वीकृत किया गया हैं यदि मानव अधिकारों के परिप्रेक्ष्य में सूचना के अधिकार की स्थिति का आकलन किया जाये तो सूचना के अधिकार की कानूनी हैसियत मूलभूत मानव अधिकार की है, क्योंकि इसका व्यक्ति के जीवन से सीधा सम्बन्ध रहा है। नागरिकों के अस्तित्व से यह मुद्दा परोक्ष रूप से जुड़ा है। रोजगार, चिकित्सा, सिंचाई, पेयजल, विद्युत एवं सुरक्षा आदि मूलभूत आवश्यकताओं से जुड़ा प्रश्न है। जिन्दा रहने के लिए जानना जरूरी है। दिनभर काम करने वाला मजदूर जान पाये कि उसकी मजदूरी क्यों नहीं मिल रही है।

(3) सुशासन :–

सुशासन को परिभाषित चाहे भिन्न–भिन्न रूपों में किया गया हो, किन्तु उसका मूल मन्तव्य एक ऐसे सुशासन से है जो सहभागी, पारदर्शी एवं जवाबदेह हो। यह विधि के शासन की स्थापना

करता है तथा सामाजिक और आर्थिक रूप से अन्तिम पायदान पर खड़े व्यक्ति को लाभ पहुँचाता है। सुशासन एक ऐसी व्यवस्था है, जो समाज के आधारभूत मूल्यों को पहचानती है। ये आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं मानवाधिकार मूल्य हैं, जो ईमानदार प्रशासन तथा जवाबदेह प्रशासन की स्थापना करती है। इस आधार पर सूचना के अधिकार का प्रत्यक्ष सम्बन्ध जवाबदेहिता, पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और सहभागिता की अवधारणा से सम्बन्धित है। सुशासन की स्थापना तभी हो सकती है जब किसी देश के नागरिकों को जानने का हक प्राप्त हो।

(4) सूचना के अधिकार से भ्रष्टाचार में कमी :—

सूचना के प्रवाह से अनियमितताएँ एवं भ्रष्टाचार में कमी आती है। समय—समय पर जो आंकड़े जारी किये जाते हैं, उनसे ज्ञात होता है कि भारत के विकास को अवरुद्ध करने वाला प्रमुख तत्त्व भ्रष्टाचार ही है। ट्रांसपरेन्सी इन्टरनेशनल द्वारा वर्ष 2000 के 90 भ्रष्ट देशों की सूची में भारत का 69वाँ स्थान था। ईमानदारी के लिए नियत 10 अंकों में से भारत को मात्र 2.8 अंक ही प्राप्त हुए हैं। भ्रष्टाचार के दैत्य से मुक्ति हेतु सूचना का अधिकार सशक्त अस्त्र का कार्य कर सकता है। भ्रष्टाचार करने वालों के लिए सूचना का अधिकार भय का काम करेगा। इससे भ्रष्टाचार पर नियंत्रण लगेगा और सम्बन्धित अधिकारी पर अंकुश लगाया जा सकता है।

(5) सक्षम पंचायती राज की स्थापना :—

पंचायती राज का सूत्रपात 2 अक्टूबर, 1959 को राजस्थान के नागौर जिले में हुआ था। संविधान के 73वें संशोधन द्वारा पंचायती राज को वैधानिक स्वरूप प्राप्त हुआ। पंचायती राज की सफलता बहुत कुछ सूचना के अधिकार पर निर्भर करती है। स्थानीय स्वशासन को सूचना के अधिकार के माध्यम से ही फलित किया जा सकता है।

राजस्थान पंचायती राज अधिनियम के द्वारा प्रदत्त अधिकार के अनुसार कोई भी व्यक्ति निर्धारित शुल्क देकर पंचायती राज के किसी भी स्तर की संस्था में ग्रामीण विकास से सम्बन्धित पत्रावली का अवलोकन कर सकता है, पत्रावली की फोटोकॉपी प्राप्त कर सकता है। महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना (मनरेगा) में भी पारदर्शिता को सुनिश्चित करने हेतु सूचना के अधिकार के माध्यम से विभिन्न प्रावधान किये गये हैं।

सूचना के अधिकार से निस्सन्देह गाँव के विकास में बदलाव आयेगा और पंचायती राज संस्थाओं के कार्य संचालन में गति आयेगी।

सूचना प्रौद्योगिकी ने राष्ट्र की जीवन शैली में महत्त्वपूर्ण बदलाव किये हैं। ई—शासन की बुनियादी अवधारणा का सीधा सा अर्थ यह है कि शासन से सम्बन्धित कामकाज में सूचना तकनीक का इस्तेमाल आई. सी. टी. (इन्फार्मेटिक कम्यूनिकेशन टेक्नालॉजी) के माध्यम से नियमानुसार चल सके।

ई—शासन सूचना के अधिकार को सुगम बनाता है। ई—शासन पारदर्शी शासन के सिद्धान्त पर आधारित है। अतः नागरिकों को सूचनाएँ सहज रूप में इंटरनेट पर उपलब्ध होंगी तथा लोगों

को आर्थिक व सामाजिक जीवन से सम्बन्धित सूचनाएँ निर्बाध रूप से उपलब्ध कराई जाती रहेंगी। सूचना का अधिकार ई–शासन की अवधारणा को बल देता है। अतः सूचना के अधिकार की महत्ता स्पष्ट हो जाती है।

सूचना के अधिकार की प्राप्ति, उसके प्रभावी परिणाम तथा क्रियान्विति का मार्ग लम्बा जरूर है किन्तु इसकी सफलता संदिग्ध नहीं है।

सूचना का अधिकार अधिनियम :–

सूचना का अधिकार अधिनियम एक ऐसा अधिनियम है जो प्रजातांत्रिक तरीके से सरकार को जनता से और जनता को सरकार से जोड़ता है। इसको सही ढंग से समझने के लिए प्रश्न–उत्तर प्रणाली अपनाने का प्रयास करेंगे। प्रश्नों के माध्यम से कुछ मुद्दे उठाकर उनका उत्तर दिया गया है।

(1) सूचना का अधिकार क्या है?

नागरिक को अपने जीवन को प्रभावित करने वाली नीति, निर्णय या कार्यक्रम के बारे में जानकारी प्राप्त करने का हक (अधिकार) सूचना का अधिकार है। इसमें केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, जिला, ब्लॉक, पंचायत स्तर की जानकारी पूर्णतः या आंशिक सहायता प्राप्त करने वाले निजी संस्थानों तथा गैर सरकारी उपक्रमों से जानकारी अथवा सूचना प्राप्त की जा सकती है।

(2) सूचना का अधिकार क्यों?

लोकतंत्र में प्रमुख मुद्दा है कि जब तक हमारे पास सही जानकारी नहीं होगी तब तक हम नीतियों में सार्थक भागीदारी नहीं निभा सकेंगे।

(3) सूचना के अधिकार से क्या मदद मिलती है?

सही जानकारी या सूचना से निष्क्रियता और अव्यवस्था को रोका जा सकता हैं यह कानून लोक प्राधिकरण/संस्थाओं की जवाबदेही सुनिश्चित करता है, पारदर्शी बनाता है। इससे भ्रष्टाचार के स्तर में भी कमी आती है।

(4) सूचना का अधिकार 2005 और इसका क्षेत्र :–

सूचना का अधिकार अधिनियम 2005, 12 अक्टूबर 2005 से जम्मू कश्मीर को छोड़कर पूरे देश में लागू हुआ। कोई भी नागरिक लोक प्राधिकरणों से समस्या से जुड़ी सूचनाएँ पाने का हकदार है।

(5) कौन मांग सकता है सूचना :–

सूचना के अधिकार अधिनियम 2005 के तहत भारत के सभी नागरिकों को सूचना प्राप्त करने का अधिकार दिया गया है। सूचना कौन प्राप्त कर रहा है? अथवा उसका उद्देश्य क्या है? यह नहीं पूछा जायेगा। सूचना प्राप्त करने वाला कोई भी हो सकता है। सूचना का अधिकार कानून की धारा 3 के अनुसार सभी नागरिकों को सूचना का अधिकार होगा।

(6) सूचनाएँ किससे मांगी जा सकती हैं?

कानून में परिभाषित लोक प्राधिकरणों से मांगी जा सकती है।

(7) सूचना के अधिकार से क्या तात्पर्य है?

सूचना किसी भी प्रकार की कोई भी सामग्री हो सकती है, जिसमें अभिलेख, दस्तावेज, मीमो, ई—मेल, प्रेस रिलीज, परिपत्र, आदेश, लॉगबुक, संविदा, राजकीय पत्रावली, प्रतिवेदन, कागजात, बानगी, नमूने, इलैक्ट्रिक सांख्यिकी सामग्री आदि शामिल हैं।

(8) अभिलेख से अभिप्राय :—

अभिलेख में शामिल हैं :—

- कोई भी दस्तावेज, पाण्डुलिपि एवं पत्रावली;
- दस्तावेज की माइक्रोफिल्म एवं प्रतिलिपि;
- कम्प्यूटर या अन्य विधि से तैयार की गई सामग्री;
- ऐसी माइक्रोफिल्म में साकारित चित्र का पुनरूत्पादन।

(9) लोक प्राधिकरण का दायरा :—

लोक प्राधिकरण का दायरा व्यापक रखा गया हैं इसमें जिला परिषदों, समितियों, मण्डल, जनपद, पंचायतों, ग्राम पंचायतों, नगर पालिकाओं, नगर निगमों, ब्लॉक विकास अधिकारियों, उपखण्ड अधिकारियों, आयुक्त कार्यालयों, सचिवालय स्तर के विभागों, सशस्त्र बलों, सरकार द्वारा संचालित, स्थापित, वित्त पोषित सभी स्कूलों, कॉलेजों, विश्वविद्यालयों, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों, सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों तथा अस्पतालों आदि से सूचना मांग सकते हैं।

लोक सूचना अधिकारी के कर्त्तव्य :—

- प्रत्येक लोक सूचना अधिकारी सूचना आवेदकों का निपटारा करेगा।
- लोक सूचना अधिकारी आवेदक की यथासम्भव मदद करेगा।
- लोक सूचना अधिकारी असमर्थ, निशक्तजन, नेत्रहीन, विकलांग आदि व्यक्तियों को आवेदन लिखने में सहायता करेगा।
- लोक सूचना अधिकारी का यह दायित्व है कि आवेदक द्वारा जिस प्रारूप में सूचना चाही गयी है, उसी प्रारूप में सूचना उपलबध करवाई जायेगी।
- यदि आवेदित सूचना या विषय—वस्तु किसी अन्य लोक प्राधिकरण के कृत्यों से सम्बन्धित है तो लोक सूचना अधिकारी उसे या उसका उचित अंश आवेदन प्राप्ति से अधिकतम 5 दिन में सम्बन्धित कार्यालय को हस्तान्तरित करेगा और आवेदक को अविलम्ब सूचित करेगा।

आवेदन शुल्क :—

आवेदक को अपने आवेदन—पत्र के साथ 10 रुपये का शुल्क देना होगा, जो नकद अथवा चैक/ड्राफ्ट द्वारा दिया जा सकता है।

सूचना शुल्क :—

किसी दस्तावेज की छायाप्रति प्राप्त करने के लिए सामान्यतः दो रुपये प्रति पृष्ठ शुल्क लिया जायेगा। फ्लॉपी या सीडी में सूचना लेने वालों से पचास रुपया आवेदन शुल्क लिया जायेगा।

बी.पी.एल. परिवार के व्यक्ति के लिए ये सभी सुविधाएँ निःशुल्क हैं।

सूचना प्राप्त करने की समय सीमा :–

लोक सूचना अधिकारी के पास आवेदन करने पर आवेदन के 30 दिनों के अन्दर तथा सहायक लोक सूचना अधिकारी के पास आवेदन करने पर 35 दिनों के अन्दर सूचना प्राप्त कर सकते हैं। किसी व्यक्तिगत जीवन और स्वतंत्रता के बारे में सूचना 48 घण्टे में देय होगी। जब सूचना तीसरे व्यक्ति से सम्बन्धित हो और पक्षकार को नोटिस देना पड़े तो समय सीमा 40 दिन होगी।

शुल्क की सूचना :–

यदि लोक सूचना अधिकारी सूचना देने का निर्णय लेता है तो उसका दायित्व है कि वह सूचना मांगने वाले को मांगी गई सूचना के लिए चुकाए जाने वाले शुल्क के बारे में सूचित करेगा। यदि अधिकारी सूचना उपलब्ध करवाने में निर्धारित अवधि को पार कर लेता है तो सूचना निःशुल्क उपलब्ध करवाई जायेगी।

आवेदन का तरीका :–

आवेदन व्यक्तिगत रूप से लोक सूचना अधिकारी अथवा सहायक लोक सूचना अधिकारी के पास जमा करवाया जा सकता हैं उसे डाक, फैक्स या ई–मेल द्वारा भी भेजा जा सकता है। डाक से भेजने पर पंजीकृत डाक से भेजना होगा। व्यक्तिगत आवेदन जमा कराने पर उसकी पावती प्राप्त होगी। पावती पर आवेदन को प्राप्त करने का समय, तिथि, स्थान और प्राप्त करने वाले के नाम का उल्लेख होना चाहिए।

कौनसी सूचनाएँ अदेय हैं?

निम्नलिखित सूचनाएँ अदेय होंगी–

(1) ऐसी सूचना जिससे देश की एकता–अखण्डता प्रभावित हो।
(2) ऐसी सूचना, जिससे अपराध को बढ़ावा मिले।
(3) देश या राज्य की सुरक्षा, रणनीति, विज्ञान तथा आर्थिक मामलों से सम्बन्धित गोपनीय जानकारी।
(4) ऐसी सूचनाएँ, जिससे दूसरे राष्ट्र से सम्बन्ध प्रभावित हों।
(5) विदेशों से प्राप्त गोपनीय सूचनाएँ।
(6) मंत्रिमण्डल से सम्बन्धित दस्तावेज।
(7) ऐसी सूचना, जिससे न्यायालय या ट्रिब्यूनल की अवमानना होती हो।
(8) जिससे संसद या विधानसभा के विशेषाधिकारों का हनन होता हो।
(9) ऐसी सूचना, जिससे व्यक्ति को लाभ होता हो।
(10) ऐसी सूचना, जिससे व्यक्ति के जीवन या शारीरिक सुरक्षा को खतरा पहुँचता हो।
(11) ऐसी सूचना, जो अन्वेषण में बाधक हो।
(12) ऐसी सूचना, जो किसी व्यक्ति की एकांतता में अनुचित हस्तक्षेप करे।
(13) ऐसी सूचना, जो सरकार, व्यक्ति या संस्था के कॉपीराइट का उल्लंघन करती हो, नहीं दी जायेंगी।

तृतीय पक्ष की सूचना से तात्पर्य :–

यदि मांगी गई सूचना किसी तृतीय पक्ष अर्थात् जो आवेदक व सूचना प्रदाता से भिन्न हो और यदि यह सूचना उसकी व्यक्तिगत व गोपनीयता से सम्बन्धित हो, तो ऐसी स्थिति में लोक सूचना अधिकारी तृतीय पक्ष को नोटिस देकर यह पूछेगा कि वह यह जानकारी प्रकट करे अथवा नहीं। यह नोटिस पाँच दिन के भीतर भेजेगा। तीसरा पक्ष सूचना नहीं प्रदान करने का मत व्यक्त करता हो, किन्तु लोक सूचना अधिकारी प्रकट करना लोकहित में उचित मानता हो तो वह सूचना दे सकता है।

प्रथम अपील क्या है?

सूचना मांगने वाला आवेदक सूचना अधिकारी के किसी निर्णय से क्षुब्ध हो या निर्धारित अवधि में सूचना प्राप्त नहीं हो, तो वह लोक सूचना अधिकारी से वरिष्ठ अधिकारी के यहाँ अपील दायर कर सकता है, यह प्रथम अपील होगी।

दूसरी अपील क्या है?

प्रथम अपील के बाद भी सन्तुष्ट नहीं होने पर दूसरी अपील का विकल्प है। यह सूचना आयोग में दायर होगी। केन्द्र सरकार से सम्बन्धित मामलों में केन्द्रीय सूचना आयोग तथा राज्य सरकारों से सम्बन्धित मामलों में राज्य सूचना आयोग गठित हैं। किसी भी अपील के लिए अलग से शुल्क की व्यवस्था नहीं हैं सादे कागज पर या निर्धारित फार्म में अपील कर सकते हैं। प्रथम अपील सूचना प्राप्ति के बाद 30 दिन के अन्दर तथा द्वितीय अपील निर्णय की तिथि से 90 दिन के भीतर अपील की जा सकती है।

राज्य सूचना आयोग की शक्तियाँ :–

राज्य सूचना आयोग में युक्तियुक्त कारणों की स्थिति में जाँच दिये जाने की शक्तियाँ निहित हैं। आयोग को निम्न दीवानी न्यायालय की शक्तियाँ प्राप्त हैं :–

- किसी व्यक्ति को बुलाना, उपस्थित होने के लिए बाध्य करना, मौखिक या लिखित सशपथ साक्ष्य देना और दस्तावेज प्राप्त करने के लिए विवश करना।
- किसी भी दस्तावेज की तलाशी और निरीक्षण करना।
- शपथ–पत्र पर साक्ष्य लेना।
- किसी न्यायालय या कार्यालय से सार्वजनिक अभिलेख या प्रतिलिपियाँ मंगवाना।
- साक्ष्यों या दस्तावेजों के परीक्षण के लिए सम्मन जारी करना।
- लोक प्राधिकरण से परिवादी को हुई हानि या अन्य क्षति की पूर्ति करवाने की शक्ति है।
- राज्य सूचना आयोग को आवेदन निरस्त करने का अधिकार है।

सूचना आयोग का निर्णय समस्त सहायक लोक सूचना अधिकारियों, लोक सूचना अधिकारियों, समस्त कार्यालयों, अधिकारियों तथा कार्मिकों के लिए मान्य व बाध्यकारी है।

दण्ड का प्रावधान :–

यदि सम्बन्धित लोक सूचना अधिकारी निर्धारित समय में प्रार्थना–पत्र प्राप्त नहीं करता है या सूचना उपलब्ध नहीं कराता है, तो उस पर समय सीमा पश्चात् विलम्ब के लिए प्रतिदिन 250/– रुपये का अर्थदण्ड, जो अधिकतम 2500/– रुपये होगा, सूचना आयोग आरोपित कर सकता है।

सूचना आयोग के आदेशों को चुनौती

आयोग द्वारा पारित किए गए किसी आदेश को किसी भी न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकेगी। उच्च न्यायालय एवं सर्वोच्च न्यायालय का मौलिक क्षेत्राधिकार होता है, अतः वहाँ जाया जा सकता है।

कानून की धारा 27 के अनुसार नियम बनाने की शक्ति समुचित सरकार के पास है। बनाये गये नियम अधिसूचित किये जाने के पश्चात् संसद अथवा राज्य विधानसभा के सदन में रखे जायेंगे।

सूचना का अधिकार : रिकार्ड (Record) प्रबन्धन

सूचना का अधिकार अधिनियम की धारा4 अपेक्षा करती है कि सभी लोक अधिकारी अपने संगठनों में रिकार्ड व्यवस्था को सुव्यवस्थित करेंगे। वे उसे उचित रूप से इण्डेक्सिंग एवं केटेलॉगिंग करेंगे। रिकार्ड के कम्प्यूटरीकरण तथा उसकी कनेक्टिविटी को सुनिश्चित करने का प्रयास करेंगे। इसके पीछे अधिनियम की मंशा यह है कि सूचना तक पहुँच बनाते समय किसी को उसे खोजने में परेशानी नहीं हो, बल्कि वह सहज ढंग से सुलभ हो सके। इसके अलावा प्रत्येक कार्यालय को विभिन्न सूचनाएँ प्रकाशित करनी होगी। प्रत्येक कार्यालय द्वारा नीति निर्धारण या जनता को प्रभावित करने वाले निर्णयों से सम्बन्धित समस्त तथ्यों को प्रकाशित किया जायेगा।

सरकारें बड़ी संख्या में रिकार्ड का सृजन करती हैं, यदि उसका उचित प्रबन्धन नहीं किया जायेगा तो वह गुम या समाप्त हो सकता है। लोगों को रिकार्ड के अभाव में उचित न्याय नहीं मिले। अतः जरूरी है, पत्रावलियों को उचित रूप से मेन्टेन रखें। सूचना का उचित प्रवाह बनाये रखने के लिए उचित रिकार्ड प्रबन्धन आवश्यक है। बिना रिकार्ड के सूचना उपलब्ध कराना असंभव है। इसीलिये हमारे लोक सूचना अधिकारी सूचना उपलब्ध कराने में संकोच करते हैं। वैसे केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारों ने रिकार्ड प्रबन्धन के लिए अधिनियम, नियम पारित कर रखे हैं। केन्द्र सरकार ने पब्लिक रिकार्ड अधिनियम 1993 विभागों में रिकार्ड के प्रबन्धन प्रशासन एवं संरक्षण हेतु पारित कर रखा है।

राजस्थान में इसी प्रकार का अधिनियम बनाने हेतु ड्राफ्ट बिल लम्बे अर्से से सरकार के पास विचाराधीन है।

सूचना का अधिकार : चुनौतियाँ एवं समाधान :–

भारत में सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 को लागू करने के बाद जिन व्यवहारिक और अन्तर्विरोधी प्रवृत्तियों की सम्भावनाओं को महसूस किया जा रहा है, उसने अनेक ऐसे मुद्दों को जन्म दिया है जिस पर व्यापक विचार किया जाना आवश्यक है। सूचना के अधिकार के प्रभावी

क्रियान्वयन के मार्ग में अवरोध को हटाने के विकल्पों की खोज से कानून को सशक्त बनाने की दिशा में कारगर उपाय किये जा सकते हैं।

वस्तुतः आज कानून की सफलता के मार्ग में आ रही चुनौतियों एवं उनके समाधान के लिए उपायों का विश्लेषण करने पर निम्न स्थिति स्पष्ट होती है :–

- ❖ सूचना क्या है? सरकारी विभागों में इस संदर्भ में भ्रान्तियाँ हैं। डीम्ड लोक सूचना अधिकारी की स्पष्ट स्थिति व जवाबदेही, तृतीय पक्षकार, कानून की धारा 7(5) तथा धारा 7(3) में उल्लेखित शुल्क की स्थिति, बी.पी.एल. की वैधता, अपील अधिकारी की प्रस्थिति, शिकायत और अपील में अन्तर तथा अवधि की गणना आदि स्पष्ट किये जाने की आवश्यकता है।
- ❖ सूचना के अधिकार कानून का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पहलू धारा 4(1)(क) के तहत 17 श्रेणियों की सूचना बिना नागरिकों की मांग के स्वतः प्रकाशित करना हैं यह अपेक्षा औपचारिक इच्छा मात्र रह गयी है। 17 श्रेणियों की सूचनाएँ प्रकाशित करने के दायित्व को सार्वजनिक संस्थाओं ने ऐच्छिक दायित्व मानकर प्रकाशन को इच्छा पर निर्भर मान लिया है जबकि अधिनियम 4 के तहत सूचनाओं का प्रकटीकरण अनिवार्य है।
- ❖ नागरिकों में जागरूकता एवं जानकारी का अभाव है। अतः इसके लिए वृत्तचित्र, गाइडबुक का वितरण, नुक्कड़ नाटक, रेडियो कार्यक्रम, सूचना मेले, विज्ञापन आदि को अपनाकर लोगों में चेतना लाई जा सकती है।
- ❖ लोक प्राधिकरण का विकेन्द्रीकरण नीचे के स्तर तक लोक प्राधिकरण नियत किये जाने चाहिए ताकि नागरिक अपने अधिकार का प्रयोग कर सके। अधिकांश राज्यों में सूचना आयोग केवल राज्य की राजधानियों में ही स्थित है।
- ❖ कानून की धारा 6(1) में आवेदन शुल्क की बात कही गयी है। यह राशि कितनी होनी चाहिए, स्पष्ट नहीं है। राजस्थान में यह 10 रुपये निर्धारित है, लेकिन कुछ राज्यों में यह राशि 50 रुपये या 100 रुपये तक भी है। यही स्थिति बी.पी.एल. आवेदकों के साथ है। वैसे उनसे फीस लेना मनाही है लेकिन फरदर फीस के संदर्भ में स्थिति स्पष्ट नहीं है।
- ❖ कानून की धारा 6(1) एवं धारा 7(5) में इलैक्ट्रानिक युक्ति के माध्यम से आवेदन का उल्लेख है किन्तु ऐसे आवेदन देने के लिए शुल्क की क्या व्यवस्था होगी और यह व्यवस्था कौन करेगा, यह निर्धारित नहीं है। अतः इस संदर्भ में उचित नियम बनाये जायें।

सूचना का अधिकार को जीवन्त बनाने हेतु समाज, सरकार, संस्थाओं की क्षमताओं का निर्माण करना होगा। नागरिकों को आगे लाना होगा। सर्वहित के लिए सार्थक प्रयास करने होंगे। सूचना के अधिकार कानून की सफलता के लिए सर्वप्रथम आवश्यक है कि इसे शासन व्यवस्था के एक सामान्य आवश्यक सिद्धान्त के रूप में स्वीकार किया जाये।

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 का सूचना के अधिकार के लिए निर्धारित प्रपत्र 1 का प्रारूप :–

1. लोक प्राधिकरण का नाम :–
   (क) पद नाम :...
   (ख) पता :...
   (ग) दूरभाष :...
2. लोक सूचना अधिकारी का नाम :–
   (क) पद नाम :...
   (ख) पता :...
   (ग) दूरभाष :...
3. आवेदन शुल्क प्रार्थना–पत्र के साथ : रू. 10
4. अभिलेखों के निरक्षण हेतु– : प्रथम घण्टे–कोई फीस नहीं।
   15 मिनट या उसके भाग के लिए T 5
5. प्रतिलिपि– : वास्तविक भार या लागत मूल्य
6. सैम्पल या मॉडल के लिए– : वास्तविक लागत मूल्य।
7. प्रतिलिपि– : रू. 2 प्रति पृष्ठ
   (ए–4 या ए–3 आकार में)
8. डिस्क या फ्लॉपी : रू. 50 प्रति फ्लॉपी या डिस्क
9. मुद्रित सूचना के लिए– : नियत मूल्य या प्रकाशन के उद्धरणों की

प्रति पृष्ठ फोटो के लिए रू. 2 शुल्क राशि नकद/बैंक ड्राफ्ट/बैंकर चैक अथवा भारतीय पोस्टल आर्डर के रूप में जमा करायी जा सकती है।

मानव अधिकार संरक्षण

मानव अधिकार :– मानव अधिकार वे अधिकार है जो किसी व्यक्ति के मनुष्य के रूप में जीवन जीने के लिये आवश्यक है, इसके अन्तर्गत सामाजिक आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक अधिकार आते है। वस्तुतः इन अधिकारों का मूल उद्देश्य व्यक्ति को सम्मानपूर्ण जीवन व्यतीत करने हेतु उपयुक्त परिस्थितियाँ प्रदान करना होता है।

इतिहास :– मानव अधिकार की अवधारणा उतनी ही पुरानी है जितनी मानव जाति एवं मानव समाज। मनुष्य समाज मे जन्म लेता है तथा गरिमा एवं सम्मान में समान होता है। वह समाज का अंग होता है, समाज में रहने के कारण उसे कुछ अधिकार समाज की ओर से प्राप्त होते है, साथ ही उसके

कुछ कर्त्तव्य भी निर्धारित हो जाता है। इस क्रम में किसी व्यक्ति को समाज की ओर से प्रदान किये गये अधिकार अन्य व्यक्तियों के कर्त्तव्यों में बदल जाते है।

भारत के समस्त प्राचीन साहित्य में मानव अधिकार को आवश्यक भाग के रूप में सम्मिलित किया गया तथा इसे 'सहअस्तित्व की भावना' के रूप में व्यक्त किया गया।

द्वितीय विश्व युद्ध में मानव अधिकारों का बड़े पैमाने पर उल्लंघन हुआ, विश्व के सभी देशों को जन धन की हानि उठानी पड़ी। ऐसे में युद्ध समाप्ति के बाद संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना हुई, संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रयासों के परिणाम स्वरूप 10 दिसम्बर 1948 को मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा की गयी। इसी समय भारत में भी संविधान निर्माता भारत के नागरिकों के लिए ऐसे अधिकारों को संरक्षित करने पर चर्चा कर रहे थे। परिणाम स्वरूप इन्हें मौलिक अधिकारों में सम्मिलित किया गया एवं इस की रक्षा का दायित्व न्यायपालिका को सौंप कर इन्हें सुरक्षित किया गया।

मानव अधिकार एवं भारतीय संविधान :— मूल अधिकार अत्यावश्यक तथा अपरिहार्य होने के कारण उनका मूल संविधान में ही उल्लेख किया गया है तथा इन्हें कानूनी संरक्षण भी प्रदान किया जाता है। इसके अन्तर्गत जीवन जीने की स्वतंत्रता, समानता, आर्थिक तथा राजनैतिक अधिकार आते है।

मानवाधिकारों की रक्षा हेतु भारतीय संविधान के भाग 3 में व्यक्ति के निम्न मौलिक अधिकारों का उल्लेख है।

अनुच्छेद — 14 भारत के सभी नागरिक कानून की दृष्टि में समान है। सभी को समान कानूनी संरक्षण प्राप्त है।

अनुच्छेद — 15 जाति, लिंग, धर्म, जन्मस्थान, वर्ण अथवा वंश के आधार पर राज्य नागरिकों में भेदभाव नहीं करेगा, सभी नागरिकों को समान अधिकार प्राप्त है।

अनुच्छेद — 16 लोक नियोजन में अवसर की समानता

अनुच्छेद — 17 अस्पृश्यता का निषेध

अनुच्छेद — 18 विशेष वर्गों को प्रदत्त राजकीय उपाधियों की समाप्ति। केवल शिक्षा, सेना व जन सेवा हेतु सीमित राजकीय सम्मान दिये जा सकेंगे।

अनुच्छेद — 19 स्वतंत्रता का अधिकार जिसमें विचार अभिव्यक्ति, शान्तिपूर्ण सम्मेलन, अबाध विचरण, संगठन निर्माण, व्यापार एवं निवास संबंधी की स्वतंत्रता।

अनुच्छेद — 21 जीवन एवं दैहिक स्वतंत्रता।

अनुच्छेद — 23 मानव के अवैध व्यापार, बल पूर्वक श्रम एवं शोषण का प्रतिषेध।

अनुच्छेद – 24 कारखानों में बालकों के नियोजन पर प्रतिबन्ध

अनुच्छेद – 25– 28 धार्मिक स्वतंत्रता।

अनुच्छेद – 29–30 अल्पसंख्यकों को अपने धर्म, भाषा लिपि के संरक्षण का अधिकार।

अनुच्छेद – 32 संवैधानिक उपचारों का अधिकार।

संविधान प्रदत्त अधिकारों की सुनिश्चित क्रियान्विति तथा वंचित वर्गो के लिए विशेष प्रावधानों की सुरक्षा के उद्देश्य से भारत सरकार ने 1993 में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की स्थापना की। इसी अनुसरण में राज्य में भी राज्य मानव अधिकार आयोग की स्थापना की गई।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग द्वारा सशस्त्र बलों, जेल अधिकारियों तथा विधि अधिकारियों को मानवाधिकारों के प्रति संवेदनशील बनाने हेतु प्रशिक्षण तथा निर्देश प्रदान किए जाते है।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग

संसद द्वारा 1993 में पारित मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम के द्वारा इसकी स्थापना की गयी। यह बहुसदस्यीय आयोग है। इसमें एक अध्यक्ष व अन्य सदस्य होते है। आयोग के अध्यक्ष भारत के सेवानिवृत मुख्य न्यायाधीश होते है। जिनका कार्यकाल 5 वर्ष या 70 वर्ष की आयु तक होता है। राष्ट्रीय महिला आयोग के अध्यक्ष, एस.सी.–एस.टी. आयोग के अध्यक्ष, अल्पसंख्यक आयोग के अध्यक्ष, सेवानिवृत न्यायाधीश एवं मानवाधिकार विशेषज्ञ आयोग के सदस्य होते है। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का मुख्य कार्य मानवाधिकारों के उल्लघंन की जांच करना, उनकी रक्षा के लिये बनाये गये कानूनों की समीक्षा करना तथा उन कानूनों के प्रभावी क्रियान्वयन के उपायों की सिफारिश करना है।

द प्रोटेक्शन ऑफ ह्ययूमन राइटस एक्ट 1993 की धारा 21(1) में प्रदत्त शक्तियों के अनुसरण में राजस्थान राज्य में 18 जनवरी 1998 को आयोग का गठन हुआ। आयोग में एक पूर्णकालिक अध्यक्ष व 4 पूर्णकालिक सदस्य होते है। मार्च 2000 में अध्यक्ष एवं सदस्यों की नियुक्ति हुई। व्यक्तिशः शिकायत के अलावा राज्य मानवाधिकार आयोग अखबार की खबर के आधार पर भी प्रसंज्ञान लेता है, साथ ही मानव हित के लिए कार्यरत निजी स्वयंसेवी संस्थाओं के साथ मिलकर नागरिकों के कर्त्तव्यों व अधिकारों की रक्षा के साथ–साथ सामाजिक बुराई व कुरीतियों को दूर करने तथा समाज को सकारात्मक सोच देने का भी प्रयास कर रहा है।

मानवाधिकार आयोग किसी पुलिस, कोर्ट या व्यक्ति विशेष के दायरे मे सिमटा हुआ नहीं हैं। यहां जिस व्यक्ति के अधिकारों का हनन हो रहा है, उसके मामले मे वस्तुस्थिति जानकर एवं सुनकर दिशा निर्देश दिये जाते है। आयोग मामले की जांच के बाद रिपोर्ट सरकार के पास सुझावों सहित प्रेषित करता है। जिन आदेशों की पालना नहीं होती उनके बारे मे सरकार को विधान सभा में कारण बताने होते है।

राज्य मानवाधिकार आयोग ने राजस्थान में विद्यालयों से मोबाइल टावर हटाने की नीति बनाने, आपातकालीन चिकित्सा के अधिकार एवं प्रदूषण नियन्त्रण नीति लागू करने जैसे सुझाव राज्य सरकार को दिये।

मानव अधिकारों को अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय की मान्यता मिल चुकी है, भारत में इस दिशा में पर्याप्त कार्य किये जा रहे हैं।

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना, शिक्षा का अधिकार अधिनियम, लोक सेवा गांरटी काननू, सुनवाई का अधिकार 2012, मुख्यमंत्री अन्न सुरक्षा योजना आदि इस दिषा में उठाये गये प्रभावी कदम है। इन सबके द्वारा उन मानव अधिकारों को मान्यता दी गयी जिन्हें संविधान में स्थान नहीं मिल सका।

कार्य स्थल पर यौन उत्पीड़न रोकथाम अधिनियम, ऐण्टी रेगिंग अधिनियम द्वारा कार्यस्थलों पर मानव अधिकारों के उल्लंघन को रोकने के प्रभावी उपाय किये गये है।

बाल अधिकार संरक्षण

किसी भी राष्ट्र का भविष्य उसके बालकों पर निर्भर है। बच्चों की वृद्धि और विकास पर ही राष्ट्र का विकास निर्भर होता है। बालकों को मानव के रूप में विकसित होने का पूर्ण अधिकार है बालक बालिकाओं को जीवन की सुरक्षा का, माता–पिता से देखभाल प्राप्त करने का, पोषण युक्त भोजन, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, सामाजिक सुरक्षा और अन्य सुविधाएं जिनका संबंध उनकी खुशी से है, प्राप्त करने का अधिकार है। इनके द्वारा उसका शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं चारित्रिक विकास होता है किन्तु बालक बालिकाएं समाज का सबसे नाजुक अंग होते है इस कारण उनके अधिकारों का हनन आसान है तथा इनके अधिकारों का सबसे अधिक हनन होता है।

बाल अधिकारों के संरक्षण में बाधाएँ :– बच्चों के अधिकारों को लागू करने एवं उसके संरक्षण में अनेक समस्याएं बाधक है जिनमें से निम्न प्रमुख है,

(1) शिक्षा, (2) बालश्रम,

(3) कुपोषण, (4) बाल तस्करी

शिक्षा :– आजादी के कई वर्षो के बाद भी आज बडी संख्या में बच्चे गुणवत्तापूर्ण एवं प्रभावी शिक्षा से वंचित है। उचित शिक्षा के अभाव में ये बच्चे आगे चलकर जीवन भर शोषण एवं अत्याचार के शिकार होते है।

बाल अधिकार संरक्षण की दिशा में प्रयास करते हुए संसद ने 86 वें संविधान संशोधन वर्ष 2002 द्वारा 6–14 वर्ष के बच्चों के शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता प्रदान की।

निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 संसद ने पारित किया और अप्रैल 2010 से लागू कर दिया गया। इस अधिनियम में इस बात की भरसक कोशिश की गई कि 6–14 आयु वर्ग के बच्चे शिक्षा से वंचित नहीं रहे। अधिनियम के तहत जो व्यवस्थाएं दी गई है, उनके अन्तर्गत 6–14 वर्ग तक के बच्चों को शिक्षित करने का दायित्व सरकार का होगा। केन्द्र व राज्य सरकारें मिल जुल कर इस दिशा में प्रयास करेंगी। आठवीं कक्षा तक निःशुल्क पढ़ाई की व्यवस्था का भार अब सरकार पर होगा। नई व्यवस्था के अन्तर्गत बच्चें को निकट के स्कूल में प्रवेश का अधिकार होगा। छात्र को विद्यालय में प्रवेश देने से इन्कार नहीं किया जा सकेगा। 40 छात्रों पर एक शिक्षक की व्यवस्था होगी। बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिल सके तथा उनका सर्वांगीण विकास हो सके, इसके लिए विद्यालयों का यह दायित्व निर्धारित किया गया है, कि वे पांच वर्ष के भीतर शिक्षकों को प्रशिक्षित करे तथा 3 वर्षो के मध्य भौतिक सुविधाएं जैसे कक्षा कक्ष, खेल मैदान, विज्ञान प्रयोगषाला, शौचालय, पेयजल आदि की व्यवस्था करे। निजी विद्यालयों के लिए बाध्यकारी है कि वे अपने विद्यालय की निचली कक्षा में 25 प्रतिशत स्थान गरीब व पिछड़े वर्ग के बच्चों के लिए आरक्षित रखें तथा उन्हें निःशुल्क प्रवेश दे। बच्चों को विद्यालय में प्रवेश हेतु किसी प्रकार की प्रवेश परीक्षा नहीं देनी होगी और न ही उन्हें पढ़ाई के दौरान दण्डित किया जा सकेगा।

संविधान के अनुच्छेद (51ए) : मौलिक कर्त्तव्यों में बच्चों को शिक्षा उपलब्ध कराने को माता–पिता एवं अभिभावक का मौलिक कर्त्तव्य माना गया।

बालश्रम :– बालश्रम सभी विकासशील समाज की समस्या है भारत की विशिष्ट परिस्थितियों में खेती से लेकर कारखानों तक उत्पादन लागत कम करने के लिये बाल श्रमिकों को नियोजित किया जाता है तथा इन स्थलों पर उनका शोषण भी किया जाता है। बाल श्रमिक आर्थिक रूप से कमजोर तबके से आते है, अपने अधिकारों से अपरिचित होने तथा असंगठित होने के कारण भूस्वामियों एवं फैक्ट्री मालिकों के लिए अत्यधिक लाभकारी होते है। राजस्थान में गोटा, गलीचा, दियासलाई, कांच, एस्बेस्टास, पटाखा उद्योग, बीड़ी श्रमिक, ईंट उद्योग, मार्बल खानों, रंगाई छपाई की इकाईयों, घरेलू कार्यों, होटल एवं ढाबों में, उद्योगों तथा खेतों में भारी मात्रा में बाल श्रमिकों को काम पर रखा जाता है।

बालश्रम पर रोक लगाने के लिये सरकार ने बालश्रम नियन्त्रण एवं प्रतिषेध अधिनियम 1986 पारित कर बालश्रम पर प्रभावी नियन्त्रण का प्रयास किया। इस हेतु राष्ट्रीय बालश्रम नीति की घोषणा की जिसमें जोखिम वाले कार्यस्थलों पर बालकों को नियोजित करने पर प्रतिबंध एवं ऐसे क्षेत्रों में कार्य कर रहे बालकों के पुनर्वास हेतु उचित वातावरण उपलब्ध कराने हेतु कल्याणकारी परियोजनाएं चलाने का निश्चय किया गया।

संविधान का अनु. 39 बालकों को स्वतंत्र एवं गरिमामय वातावरण उपलब्ध कराने तथा विकास का अवसर देने हेतु राज्य को निर्देशित करता है, इस क्रम में राज्य ने विभिन्न अधिनियमों द्वारा 14 वर्ष

से कम आयु के बालको को किसी फैक्ट्री, कारखाने, वाहन तम्बाखू उत्पाद उत्पादन केन्द्रों पर नियोजित करने पर प्रतिबंध लगाया है, ताकि बालकों के नैसर्गिक अधिकारों का संरक्षण हो। राज्य उनके नैतिक विकास के अवसर उपलब्ध करायेगा एवं आर्थिक परित्याग से रक्षा करेगा।

कुपोषण :– भारत में बच्चों में कुपोषण एक बडी समस्या है। बाल मृत्यु दर के मामले में भारत की स्थिति अच्छी नहीं है। भारत की अच्छी विकास दर के बावजूद बच्चों की अधिक मृत्यु दर एवं कुपोषण एक बड़ा विरोधाभास है। भारत में 46 प्रतिशत बच्चें कुपोषण का शिकार है। बच्चों के अधिकारों के क्रियान्वयन की दिशा में कुपोषण एक बड़ी चुनौती है, कुपोषण के कारण ही बच्चों की मृत्यु दर मे वृद्धि होती है तथा वे जिन्दा रहने पर कई तरह की बिमारियों एवं विकलांगता के शिकार होते है। कुपोषण के कारण बच्चों का शारीरिक व मानसिक विकास धीमा हो जाता है।

केन्द्र सरकार द्वारा कुपोषण से मुक्ति हेतु समन्वित बाल विकास परियोजना शुरू की गयी है। न्यूनतम मूल्य पर खाद्यान्न उपलब्ध कराया जा रहा है। पढाई को बीच में छोडने वाले बच्चों की संख्या में कमी करने हेतु मध्यान्ह भोजन योजना, निःशुल्क पाठ्य पुस्तक योजना, डिवर्मिंग कार्यक्रम, संबल योजना लागू की गयी। इन विशेष प्रयासों की बदौलत कुपोषण के स्तर में सुधार हुआ है तथा विद्यालय छोड़ने वाले बच्चों की संख्या में भी कमी आयी।

बाल तस्करी :– शोषण के उद्देश्य से बच्चों को नौकरी देना, अन्य स्थानो पर ले जाना, भले ही इसके लिए बच्चों और उनके अभिभावकों की सहमति ली गयी है। बाल तस्करी की श्रेणी में आते है।

संविधान में अनेक ऐसे अनुच्छेद है जिनमें मानव तस्करी को दंडनीय घोषित किया है अनुच्छेद 21, 22 व 23 मानव की प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता से संबंधित है। इसी प्रकार भारतीय दण्ड संहिता मानव तस्करी के लिए दण्ड की व्यवस्था करती है। बालकों का अपहरण, बलात्कार, बालश्रम के लिए बालकों की खरीद फरोख्त, अल्पवयस्क लड़की से विवाह जैसे अपराधों में दण्ड की व्यवस्था करते है।

यौन अपराध अधिनियम 2012

बच्चों की संरक्षा के लिये हाल ही में पारित यह अधिनियम 18 वर्ष से कम उम्र के व्यक्ति का यौन उत्पीडन, यौनाचार आदि अश्लील से सुरक्षा प्रदान करता है। इससे आजीवन कारावास से लेकर 3 वर्ष तक कठोर दंड का प्रावधान है। इसमें अपराध अधिक गम्भीर माना जायेगा यदि वह किसी विश्वस्त व्यक्ति बच्चों के प्राधिकारी जैसे पुलिस, शिक्षक, सरकारी कर्मचारी द्वारा किया गया है। इस कानून में बच्चों की तस्करी और अश्लील वीडियो बनाने को भी अपराध श्रेणी में रखा है।

कन्या भ्रूण हत्या :– समाज में सदियों से व्याप्त पितृ सत्तात्मक व्सवस्था के कारण भारत में परिवारों में पुत्र प्राप्ति की लालसा सदैव से बलवती है। संवैधानिक रूप से संवेदनशील व्यवस्था अपनाने के बाद भी भारत में महिलाओं के प्रति सामाजिक संरचना में अनुकूल बदलाव अभी नहीं हो पाये है।

अशिक्षा, महिलाओं के विरूद्व हिंसा, राजनीतिक जागरूकता के अभाव ने संवैधानिक प्रावधानों की प्रभावशीलता को कमजोर किया है। स्वतंत्रता के बाद सामाजिक, राजनीतिक, प्रशासनिक, व्यावसायिक क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी, वही जनसंख्या में महिलाओं का अनुपात कम हुआ है। शहरी शिक्षित एवं सभ्य कहे जाने वाले मध्यम वर्ग में औद्योगिकीकरण एवं बाजारीकरण के कारण पुत्र प्राप्ति इच्छा अधिक है। कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए सरकार ने 1994 में पी.एन.डी.टी. एक्ट बनाया। इसके द्वारा अल्ट्रासाउण्ड सोनाग्राफी द्वारा भ्रूण के लिंग परीक्षण को रोका गया है तथा इसे अपराध घोषित किया गया है।

बालिकाओं के कल्याण एवं विकास के लिए बालिका समृद्धि योजना, आपकी बेटी योजना, कन्या विवाह अनुदान योजना जैसी अनेक योजनाएँ राज्य सरकार द्वारा चलाई जा रही है। इनके समुचित क्रियान्वयन पर ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए।

बालिकाओं और महिलाओं के प्रति होने वाली हिंसा, अत्याचार, दहेज प्रथा, बाल विवाह जैसी सामाजिक कुरीतियों, अशिक्षा को दूर किया जाना चाहिए। भ्रूण परीक्षण की तकनीकी का प्रयोग करने वाली संस्थाओं के आकस्मिक निरीक्षण की विस्तृत एवं प्रभावी व्यवस्था सुनिश्चित की जाए।

राष्ट्रीय बाल नीति 1974 के प्रस्तावों के अनुसरण में राज्य के बच्चों एवं महिलाओं को बेहतर जीवन की सुविधाएं उपलब्ध कराने के उद्देश्य से राजस्थान में 2 अक्टूबर, 1975 से समेकित बाल विकास परियोजना प्रारम्भ की गई। इसके अन्तर्गत पूरक पोषाहार कार्यक्रम, प्रतिरक्षण टीकाकरण, स्वास्थ्य जाँच, पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा, शालापूर्व शिक्षा, परामर्श सेवा जैसे कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये।

राज्य बाल नीति सितम्बर 2008 में जारी की गई इस नीति में बाल अधिकारों के संरक्षण के साथ साथ राज्य के बच्चों के सर्वांगीण विकास तथा समाज की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए विभिन्न विभागों के कार्यों में समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया गया है। इस हेतु राजस्थान राज्य बाल अधिकार संरक्षण आयोग का गठन फरवरी 2010 में किया गया। आयोग बाल अधिकार एवं उनकी सुरक्षा हेतु अनुशंसा करता है। इस मार्ग में आने वाली रूकावटों हेतु उपचार सुझाता है एवं बाल अधिकार उल्लंघन की शिकायतें सुनता है।

आयोग को बाल अधिकारों के उल्लंघन की प्राप्त शिकायतों में अधिकांश शिकायतें शिक्षा अधिकार अधिनियम से संबंधित है।

राजस्थान निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार नियम 2011 के भाग–9 के अनुसार राज्य सरकार राज्य बाल अधिकार संरक्षण आयोग को अधिनियम के अधीन उसके कृत्यों के निर्वहन में सहायता करने के लिए एक प्रकोष्ठ गठित कर सकेगी।

राजस्थान राज्य बाल अधिकार संरक्षण आयोग द्वारा, अधिनियम के अधीन बाल अधिकारों के

अतिक्रमण के संबंध में प्राप्त शिकायतों को दर्ज करने के लिए चाइल्ड हेल्प लाइन स्थापित की गई है।

किशोर न्याय बोर्ड :– किशोर न्याय अधिनियम (देखभाल एवं संरक्षा) 2000 के अनुसार 18 वर्ष की आयु तक के बालकों के साथ अपराधियों के समान व्यवहार नहीं किया जा सकता इनके द्वारा कोई अपचार करने पर उन्हें पुलिस संरक्षा के बजाय बाल सुधार गृह में रखा जायेगा।

बालकों के अधिकार –

1. अच्छे जीवन का अधिकार
2. अच्छे स्वास्थ्य का अधिकार
3. शुद्ध पानी एवं पोषणयुक्त भोजन का अधिकार
4. माता–पिता की देखरेख में सुरक्षा पाने का अधिकार
5. सम्मानपूर्वक पुकारे जाने का अधिकार
6. निःशुल्क गुणात्मक शिक्षा का अधिकार
7. प्यार व स्नेह पाने का अधिकार
8. अभिव्यक्ति का अधिकार
9. सामाजिक सुरक्षा प्राप्ति का अधिकार
10. आराम, खेलने का अधिकार
11. सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेने का अधिकार
12. आर्थिक शोषण न किये जाने का अधिकार
13. मनुष्य की भांति व्यवहार किये जाने का अधिकार
14. सम्मान, प्रशंसा का अधिकार
15. घरेलू एवं बाह्य हिंसा से मुक्त रहने का अधिकार

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 पूरे देश में कब से लागू हुआ?
   (अ) 15 जून, 2006 (ब) 15 जून, 2005
   (स) 12 अक्टूबर, 2005 (द) 12 अक्टूबर, 2006
2. दुनिया में सूचना का अधिकार कानून कितने देशों में लागू है?
   (अ) 60 देशों में (ब) 70 देशों में
   (स) 90 देशों में (द) 80 देशों में
3. दुनिया का सबसे पहला देश सूचना का अधिकार प्रदान करने वाला है–

(अ) संयुक्त राज्य अमेरिका (ब) फ्रांस

(स) इंग्लैण्ड (द) स्वीडन

4. सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 किस राज्य पर लागू नहीं होता–

(अ) कर्नाटक (ब) उड़ीसा

(स) जम्मू–कश्मीर (द) हिमाचल प्रदेश

5. सूचना आयोग अधिकारी पर अधिकतम कितना आर्थिक दण्ड आरोपित कर सकता है?

(अ) 250 रुपये (ब) 350 रुपये

(स) 2500 रुपये (द) 25000 रुपये

6. सूचना का अधिकार कानून धारा 6(1) में क्या बात कही गई है?

(अ) आवेदन शुल्क की (ब) दण्ड के प्रावधान की

(स) राज्य सूचना आयोग की (द) लोक हित की

7. अन्तर्राष्ट्रीय सूचना दिवस सर्वप्रथम कब मनाया गया?

(अ) 15 जून, 2005 (ब) 12 अक्टूबर, 2005

(स) 28 सितम्बर, 2005 (द) 28 सितम्बर, 2006

8. भारतीय संविधान का कौन सा अनुच्छेद अस्पृश्यता का निषेध करता है–

(अ) अनुच्छेद–32 (ब) अनुच्छेद–25

(स) अनुच्छेद–17 (द) अनुच्छेद–29

9. भारतीय संसद द्वारा मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम पारित किया गया–

(अ) 1993 (ब) 1954

(स) 1984 (द) 1950

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. सूचना के लिए आवेदक से कितना शुल्क लिया जाता है?
2. सूचना प्राप्त करने की समय सीमा बताइये।
3. राजस्थान में सूचना का अधिकार कानून कब से लागू है?
4. सूचना के अर्थ से आप क्या समझते हैं।
5. क्या सूचना आयोग के आदेशों को चुनौती दी जा सकती है?
6. संविधान का कौनसा अनुच्छेद बालश्रम पर रोक लगाता है?
7. मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा कब की गयी?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. सु–शासन से आप क्या समझते हैं?
2. अभिलेख से आपका क्या अभिप्राय है?
3. सूचना कौन मांग सकता है?
4. सूचना का तरीका क्या–क्या हो सकता है? स्पष्ट कीजिये।
5. प्रथम अपील क्या है? समझाइये।
6. तृतीय पक्ष से आपका क्या तात्पर्य है? समझाइये।
7. लोक प्राधिकरण का दायरा स्पष्ट कीजिये।
8. बालकों को प्राप्त अधिकार कौन–कौन से है?

निबन्धात्मक प्रश्न –

1. सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 की उपयोगिता व औचित्य बताइये।
2. लोक सूचना अधिकारी के कर्त्तव्यों का उल्लेख कीजिये।
3. सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 के अनुसार कौनसी सूचनाएँ अदेय हैं?
4. राज्य सूचना आयोग की क्या–क्या शक्तियाँ हैं? स्पष्ट कीजिये।
5. सूचना का अधिकार के सम्बन्ध में रिकार्ड प्रबन्धन का विवरण दीजिये।
6. सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 में व्यवहारिक क्रियान्विति की चुनौतियों एवं समाधान के बारे में बताइये।
7. भारतीय संविधान के भाग 3 में किन–किन मानव अधिकारों का वर्णन है?
8. बाल अधिकारों को लागू करने एवं उनके संरक्षण में कौन–कौन सी बाधाएं है?

अध्याय–8

सांस्कृतिक राजस्थान

राजस्थान देश के सम्पूर्ण सांस्कृतिक परिदृश्य से भिन्न नहीं है, लेकिन खास प्रकार की भौगोलिक और राजनीतिक परिस्थितियों के कारण इसकी अपनी कुछ विशेषताएँ जरूर हैं। एकीकरण से पहले तक यह प्रदेश कई छोटी–छोटी रियासतों में बंटा हुआ था इसलिए मेले और पर्व–त्योहार यहाँ कई हैं। इसी तरह रीति–रिवाजों और परम्पराओं का विकास भी अलग–अलग ढ़ंग से हुआ है। यह अवश्य है कि अब संचार के साधनों के बढ़ जाने से इनमें एकरूपता बढ़ रही है। रंग, राग, उल्लास और उत्सव राजस्थान के पर्याय हैं। एक तरफ जीवन की बड़ी चुनौतियों से सतत टकराहट और दूसरी तरफ उत्सवों, मेलों, पर्वो और त्योहारों में उस तमाम थकान और अवसाद को बहा डालने की प्रेरणादायक कोशिशें, यही राजस्थान की खासियत है। यहां की रंग बिरंगी वेशभूषा, संगीत की मधुर स्वर लहरियां और जीवन के आनन्द से सराबोर पर्व, उत्सव और त्योहार, इन सब से मिलकर राजस्थान का मनोरम सांस्कृतिक परिदृश्य बनता है। मूर्धन्य कवि कन्हैयालाल सेठिया ने लिखा था– 'आ तो सुरगां ने सरमावै, इण पर देव रमण ने आवै, धरती धोरॉं री......' अर्थात राजस्थान की रेतीली धरती तो स्वर्ग को भी लज्जित करती है और देवता भी यहां विचरण करने के लिए आते हैं!

राजस्थान के प्रमुख पर्व, त्योहार और मेले

पूरे देश में मनाए जाने वाले सभी पर्व, त्योहार आदि राजस्थान में भी उतने ही हर्षोल्लास से मनाए जाते हैं। होली, दिवाली, ईद, क्रिसमस, नया साल, उत्तरायण, पोंगल, बैसाखी, गणेश चतुर्थी, जन्माष्ठमी, गुरु नानक जयन्ती, और इसी तरह के सारे ही पर्वों–त्योहारों को राजस्थान के निवासी भी उसी उत्साह और उल्लास के साथ मनाते हैं जिस उल्लास के साथ देश के अन्य विभिन्न भागों के लोग मनाते हैं। इन त्योहारों में होली को राजस्थान में कुछ खास जगहों पर खास तरह से मनाया जाता है। उदाहरणार्थ प्रसिद्ध जैन तीर्थ स्थली श्रीमहावीर जी में लट्ठमार होली खेली जाती है। यहाँ महिलाएँ हाथों में लट्ठ लेकर पुरुषों पर प्रहार करती हैं। इसी तरह शेखावाटी क्षेत्र में होली के अवसर पर गीन्दड़ नृत्य होता है। इस नृत्य में लोग विभिन्न वेश धारण करके हाथों में छोटे–छोटे डण्डे लेकर नृत्य करते हैं। बाड़मेर की पत्थर मार होली की भी विशेष ख्याति है। यहाँ इस मौके पर ईलोजी की बारात भी निकाली जाती है, जो बाद में रोने–बिलखने में परिवर्तित हो जाती है। इसी से लोगों का मनोरंजन होता है। मेवाड़ के अनेक अँचलों में होली के मौके पर गैर नृत्य किया जाता है। इसी

के साथ कोटा क्षेत्र के सांगोद कस्बे का न्हाण भी बहुत विख्यात है। यह आयोजन दो सौ वर्ष पुराना माना जाता है। लेकिन इनके अलावा, राजस्थान के अपने कुछ ख़ास पर्व त्योहार आदि भी हैं। यहां हम उन्हीं का संक्षिप्त परिचय देना चाहेंगे।

गणगौर

फागुन और होली के बीतते—बीतते तथा चैत्र मास के आरम्भ होते ही पूरा राजस्थान गणगौर के रसीले गीतों से गूंजने लगता है। असल में तो इस उल्लास की शुरुआत होलिका दहन के दूसरे दिन से ही हो जाती है। गण+गौर अर्थात शिव और पार्वती की पूजा का यह पर्व अविवाहित युवतियों के लिए मनोवांछित और ईश्वर जैसा सुन्दर—सलोना वर दिलाने वाला और विवाहित महिलाओं के लिए उनके सुहाग की सुदीर्घता एवं उनके भाई की लम्बी उम्र को सुनिश्चित करने वाला माना जाता है। इस पर्व में महिलाएं अपने भाई के लिए सुन्दर पत्नी की भी कामना करती हैं। अविवाहित युवतियां इस त्योहार के दौरान पन्द्रह दिन तक एक समय भोजन करतीं या व्रत रखती हैं। व्रत होलिका—दहन से आरम्भ होकर चैत्र शुक्ला एकम या कहीं—कहीं तृतीया तक चलता है। इस मौके पर होली की राख के पिण्ड बनाये जाते हैं और जौ के अंकुरों के साथ उनकी पूजा की जाती है। सभी स्त्रियाँ, चाहे वे विवाहित हों या अविवाहित, हाथों में मेंहदी लगाती हैं। ऐसा माना जाता है कि इस त्योहार का आरम्भ पार्वती जी यानि गौरी जी के गौने अर्थात अपने पिता के घर से वापस लौटने और सखियों द्वारा उनके स्वागत गान से हुआ था। यही कारण है कि इस पर्व के अवसर पर नृत्य संगीत को विशेष महत्व दिया जाता है।

गणगौर की पूजा के लिए ईसर जी और गौरी जी की प्रतिमाएं मिट्टी और लकड़ी से बनाई जाती हैं। उनका बहुत नयनाभिराम श्रंगार भी किया जाता है। महिलाएँ सोलह दिन तक गुलाल, कुंकुम और मेंहदी से दीवार पर एक—एक स्वास्तिक और सोलह बिन्दिया लगाकर गणगौर की पूजा करती हैं। सोलह दिन की पूजा सम्पन्न हो जाने पर ईसर जी और गौरा जी की मिट्टी की प्रतिमाओं को किसी नदी या सरोवर पर विसर्जित किया जाता है और काष्ठ प्रतिमाओं को घर लाकर पुनः स्थापित कर दिया जाता है।

इतिहास साक्षी है कि यह पर्व राजस्थान के जोधपुर, जयपुर, उदयपुर, कोटा आदि में बहुत ही धूमधाम से मनाया जाता था और राजघराने के लोग भी इसमें पूरे उत्साह से भाग लेते थे। कर्नल टॉड ने उदयपुर में मनाए जाने वाले गणगौर पर्व का बहुत रोचक वर्णन किया है। वहाँ सभी जातियों की स्त्रियाँ अट्टालिकाओं में बैठकर तथा पुरुष और बच्चे रंग—रंगीले वस्त्र व आभूषणों से सज्जित होकर गणगौर की सवारी देखते थे। यह सवारी तोप के धमाके और नगाड़े की आवाज़ से राजमहलों से प्रारम्भ

होकर पिछोला तालाब के गणगौर घाट तक पहुंचती थी और नौका विहार तथा आतिशबाजी के प्रदर्शन के साथ समाप्त होती थी।

तीज

वर्षा ऋतु वाले सावन के महीने में मनाया जाने वाला तीज का त्योहार राजस्थान का सबसे अधिक लोकप्रिय त्योहार है। शुष्क प्रदेश, मरु प्रदेश में इस उत्सव का मनाया जाना एक अलग ही महत्व रखता है। आकाश में छाई काली घटाओं के कारण कुछ जगहों पर इस त्योहार को काजळी तीज भी कहा जाता है। श्रावण के महीने में शुक्ल पक्ष की तृतीया को नवविवाहिताएँ पेड़ों पर झूले डालकर झूलती और पार्वती की प्रतीक तीज की पूजा करती हैं। वे एक दिन पहले अपने हाथों और पांवों पर मेंहदी लगाती हैं और दूसरे दिन अपने पिता के घर जाती हैं जहाँ उन्हें नई पोशाकें दी जाती हैं और स्वादिष्ट भोजन करवाया जाता है। हाथों में मेंहदी और पांच या सात रंगों वाली लहरिये की ओढनी तथा पारंपरिक गहनों से सजी महिलाएॅं जब अपने सुहाग की दीर्घायु की कामना करती हैं तो देखते ही बनता है।

विवाह के बाद तीज पीहर में ही मनाने की प्रथा है। स्वाभाविक ही है कि नवविवाहिताएं इस त्योहार की उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा करती हैं। कुछ लोकगीतों में यह भी उल्लेख मिलता है कि नवविवाहिता पत्नी दूर देश गए अपने पति से मिलने के लिए व्याकुल होकर तीज की रात को तड़प–तड़प कर गुज़ारती है। यह भी वर्णन मिलता है कि पति भी पत्नी से मिलने के लिए नदी–नालों को पार कर घर लौटता है।

इस त्योहार के अवसर पर पूरे राजस्थान में जगह–जगह झूले डाले जाते हैं और मेले लगते हैं। इस त्योहार के आस–पास ही खेतों में बुवाई भी शुरू होती है, मोठ, बाजरा आदि की बुवाई के लिए किसान वर्षा की महिमा गाते हैं। असल में तीज का यह त्योहार प्रकृति और मनुष्य की निकटता का अनुपम उदाहरण है।

राजस्थान की राजधानी जयपुर में तीज का यह त्योहार अतिरिक्त हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। कई लोकगीतों में भी स्त्रियों ने अपने प्रियतम से जयपुर की तीज दिखाने का अनुरोध कर यहाँ की तीज के आकर्षण की पुष्टि की है। अब तो पूरी दुनिया के पर्यटक जयपुर की तीज के उल्लास का आनन्द लेने आते हैं और यहाँ के आयोजन की सुखद स्मृतियों के साथ अपने देशों को लौटते हैं।

बून्दी की काजळी तीज

बून्दी में काजळी तीज का पर्व पूरे राजस्थान से कुछ भिन्न मनाया जाता है। अन्यत्र जहाँ यह पर्व श्रावणी तीज को मनाया जाता है, बून्दी में यह भाद्रपद की तृतीया

को मनाया जाता है। उस दिन वहां नवल सागर से पालकी में आसीन करके तीज माता की सवारी निकाली जाती है और वह आकर्षक सवारी नगर के मुख्य बाज़ारों से होती हुई आज़ाद पार्क पहुंचती है। इस जुलूस में सजे–धजे हाथी, घोड़े, ऊंट, मधुर स्वर लहरियां बिखेरते बैण्ड, तरह तरह की कला का प्रदर्शन करते कलाकार और रंग बिरंगी वेशभूषा में सज्जित नागरिकगण एक अनूठे मायालोक का सृजन करते हैं। सायंकाल एक मनोहारी सांस्कृतिक कार्यक्रम का भी आयोजन होता है जिसमें हाड़ौती अंचल के कलाकार अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करते हैं।

शीतलाष्टमी

राजस्थान में शीतला माता को प्रसन्न करने के लिए उनकी पूजा–अर्चना की जाती है। होली के आठवें दिन अर्थात चैत्र कृष्णा अष्टमी को यह त्योहार मनाया जाता है। इस दिन ठंडा भोजन, अर्थात एक दिन पहले बनाया हुआ भोजन किया जाता है। खूब सारे पकवान बनाए जाते हैं और शीतला अष्टमी वाले दिन माता की पूजा करके उन्हें भोग लगाया जाता है। जयपुर से लगभग 35 किलोमीटर की दूरी पर चाकसू के निकट शील की डूंगरी स्थित शीतला माता के मंदिर में बहुत बड़ा मेला भरता है। इसके अतिरिक्त भी लगभग हर शहर–कस्बे–गांव में शीतला माता के मंदिरों में उनकी पूजा अर्चना की जाती है।

अक्षय तृतीया

इस दिन को बहुत शुभ माना जाता है और इसे अबूझ सावे का दिन कहा जाता है। अबूझ सावा, अर्थात बिना पण्डित जी से मुहूर्त निकलवाए जिस दिन विवाह सम्पन्न किया जा सके। आम जन इस पर्व को आखा तीज के नाम से जानता है। इस दिन गेहूं, बाजरा, तिल जौ आदि की पूजा की जाती है और गेहूं बाजरे आदि का खीच विशेष रूप से बनाया जाता है। यह दिन बीकानेर का स्थापना दिवस भी है अतः इसे वहॉ तो और भी अधिक उत्साह के साथ मनाया जाता है। इस दिन हवा का रुख देखकर यह भी ज्ञात किया जाता है बोने वाला समय फसलों के लिहाज़ से कैसा रहेगा।

राजस्थान के प्रमुख मेले

पुष्कर मेला

अजमेर जिले का पुष्कर हिन्दू धर्मावलम्बियों की आस्था का एक प्रमुख केन्द्र है। कदाचित पूरे देश में यहीं ब्रह्माजी का एकमात्र ऐसा मंदिर है जिसमें विधिवत

उनकी पूजा होती है। इसी मंदिर के पीछे की पहाड़ियों पर सावित्री और गायत्री माता के मंदिर भी हैं। इसी तीर्थ स्थली पुष्कर में प्रति माह की पूर्णिमा को तो मेला लगता ही है किन्तु कार्तिक माह की पूर्णिमा का मेला अपनी विशालता के कारण अनुपम माना जाता है। यह मेला अष्टमी से पूर्णिमा तक चलता है। वैसे तो पूरे ही कार्तिक माह में पुष्कर तीर्थयात्रियों से भरा रहता है लेकिन कार्तिक पूर्णिमा पर तो यहां तिल धरने की भी जगह नहीं होती है। मेले के समय यहां सुबह 3–4 बजे से ही घाटों पर श्रद्धालुओं की भीड़ जुटने लगती है और पूरे दिन यह क्रम चलता रहता है। सायं यहां दीपदान भी होता है। मेला अवधि के पूर्वार्द्ध में पशु मेला और उत्तरार्द्ध में धार्मिक मेला प्रमुख होता है।

पौराणिक कथाओं के अनुसार ऐसा माना जाता है कि किसी समय पुष्कर में विज्रनाथ नामक राक्षस का आतंक हुआ करता था। कहा जाता है कि इस राक्षस ने ब्रह्मा जी की सन्तानों की भी हत्या कर दी थी। जब इस बात की जानकारी स्वयं ब्रह्मा जी को हुई तो उन्होंने प्रकट होकर कमल के पुष्प से राक्षस का संहार किया। कमल की पंखुड़ियां जिन तीन स्थानों पर गिरी वहां झीलें बन गई। माना जाता है कि पुष्कर उन्हीं तीन झीलों में से एक है। राक्षस के संहार के बाद ब्रह्मा जी ने इसी स्थान पर एक यज्ञ किया जिसमें उन्होंने सभी देवी देवताओं और ऋषि मुनियों को भी आमंत्रित किया। वह यज्ञ कार्तिक मास में सम्पन्न हुआ था। इसीलिए कार्तिक मास में लगने वाले इस मेले को महत्वपूर्ण माना जाता है।

इस मेले के अवसर पर यहाँ बहुत विशाल बाज़ार भी लगता है और विदेशी पर्यटक भी खूब आते हैं। इसी मौके पर राज्य सरकार का पर्यटन विभाग भी अनेक प्रकार के आयोजन कर मेले की शोभा और आकर्षण में वृद्धि करता है।

कैलादेवी का मेला

सवाई माधोपुर से 18 किलोमीटर की दूरी पर स्थित कैलामाता के मंदिर में चैत्र शुक्ला अष्टमी को एक मेला भरता है। यह मेला कई दिनों तक चलता है। इस मेले में आने वाले भक्तों की विराट संख्या के कारण इसे लक्खी मेला भी कहते हैं। कैलामाता के मंदिर में दो मूर्तियां हैं। दाहिनी तरफ कैला देवी की मूर्ति है जिन्हें लक्ष्मी नाम से भी जाना जाता है और बायीं तरफ चामुंड़ा जी की मूर्ति है। कैलादेवी के मंदिर के सामने ही एक मंदिर हनुमान जी का भी है जिन्हें स्थानीय लोग लांगुरिया नाम से सम्बोधित करते हैं। चैत्र कृष्ण द्वादशी से चैत्र शुक्ला द्वादशी तक चलने वाले इस मेले में दूर–दूर से भक्त जन आते हैं। अनेक भक्त कनक दण्डौती भी करते हैं अर्थात वे मंदिर तक की 15–20 किलोमीटर की दूरी पैदल चल कर नहीं बल्कि धरती पर

दण्डवत करते हुए तय करते है। कैलादेवी के मेले के अवसर पर एक पशु मेला भी आयोजित किया जाता है।

श्री महावीर जी का मेला

मान्यता हैं कि सवाई माधोपुर जिले में ही गंगापुर बयाना रेलमार्ग पर स्थित श्री महावीर जी का मंदिर भी वैसे तो पूरे ही वर्ष भक्तों की आमद से गुलज़ार रहता है लेकिन चैत्र शुक्ला एकादशी से लेकर वैशाख कृष्णा द्वितीया तक लगने वाला लक्खी मेला पूरे देश के भक्तों को आकृष्ट करता है। श्री महावीर जी में चौबीसवें जैन तीर्थकर महावीर स्वामी की एक लाल रंग की अनूठी और भव्य प्रतिमा है। मंदिर के सामने ही एक भव्य मान–स्तम्भ भी बना हुआ है। मेले के दौरान भगवान महावीर स्वामी की रथयात्रा निकाली जाती है। स्वर्णिम रथ पर आरूढ़ भगवान महावीर की प्रतिमा को एक भव्य जुलूस के रूप में कलश अभिषेक के लिए गम्भीरी नदी के तट पर ले जाया जाता है। चार भक्त प्रतिमा पर चंवर ढुलाते रहते हैं और पूरा वातावरण भक्ति संगीत और भगवान की जय–जयकार से गुंजायमान रहता है। मेले के मौके पर अनेक प्रकार के धार्मिक कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। मेले का शुभारंभ ध्वजारोहण के साथ होता है। इस मेले की खास बात यह है कि इसमें हर जाति, धर्म और सम्प्रदाय के लोग भाग लेते हैं।

ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती का उर्स, अजमेर

ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती साहब ईरान से भारत आए थे और अजमेर में ठहरे थे। अपना पूरा जीवन मानवता की सेवा में अर्पित कर देने वाले ख्वाजा साहब को गरीब नवाज़ के नाम से भी जाना जाता है। अजमेर में उनकी मज़ार पूरी दुनिया के मुस्लिम धर्मावलम्बियों की आस्था का बहुत बड़ा केन्द्र है। अन्य सभी धर्मों को मानने वाले भी बहुत बड़ी संख्या में ख्वाजा साहब में अपनी आस्था और श्रद्धा रखते हैं। इस्लामिक कैलेण्डर के रजब माह की पहली से छठी तारीख तक अजमेर में ख्वाजा साहब का उर्स मनाया जाता है। उर्स शब्द फारसी के उरुसी से व्युत्पन्न है और इसका अर्थ है लम्बे वियोग के बाद मिलन से होने वाली खुशी। यह माना जाता है कि निन्यानवें वर्ष की आयु में रजब की छह तारीख को हजरत ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती साहब ने महसूस किया था कि अब महबूबे हकीकी से मिलने का समय आ गया है। कुछ लोगों का यह भी मानना है कि ख्वाजा साहब पूरे छह दिन तक अपने हुजरे से बाहर नहीं आए तो खादिम भीतर गए और वहाँ जाकर उन्होंने पाया कि ख्वाजा साहब की रूह जिस्म से परवाज़ कर गई है। इसी की स्मृति में हर वर्ष उर्स मनाया जाता है। उर्स के दौरान ख्वाजा साहब के अकीदतमन्द हुजरे के दर्शन करते

है और उनकी मज़ार पर फातिहा पढा जाता है। मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए मन्नतें मांगी जाती हैं और दुआएं की जाती हैं। इस उर्स के दौरान मजार पर चादर भी चढ़ाई जाती है, देश विदेश से आए श्रद्धालु भी अपने साथ लाई चादरें चढाते हैं। महफिलखाने में कव्वालियों का कार्यक्रम होता है जिसमें भाग लेना देश भर के उत्कृष्टतम कव्वालों का सपना होता है। उर्स का उत्सव चांद दिखाई देने पर दरगाह शरीफ के बुलन्द दरवाज़े पर झण्डा फहराने के साथ प्रारम्भ होता है और रजब की छठी तारीख को जायरीनों पर गुलाब जल के छींटे मारे जाते हैं। इसे कुल की रस्म कहा जाता है। इसके तीन दिन बाद यानि नवीं तारीख को बड़े कुल की रस्म अदा की जाती है।

उर्स का यह मेला पूरे भारत में मुस्लिम समुदाय का कदाचित सबसे बड़ा मेला है और इसे सर्वधर्म समभाव की अनूठी मिसाल माना जाता है।

बेणेश्वर का मेला

बेणेश्वर का मेला राजस्थान के आदिवासी समाज का सबसे बड़ा मेला है। इस मेले में आदिवासी संस्कृति के तमाम रंग देखने को मिलते हैं। यह मेला माघ पूर्णिमा (शिवरात्रि) के अवसर पर डूंगरपुर जिले की आसपुर तहसील के नवातपुरा नामक स्थान पर आयोजित होता है। इसका केन्द्र वहां स्थित शिव मंदिर है। इस मंदिर में दिन में दो बार जयघोष के साथ पूजा होती है। इस शिव मंदिर में शिव लिंग स्थापित है। बेणेश्वर नाम भगवान शिव के इसी लिंग पर आधारित है। कहा जाता है कि यह लिंग स्वयं उद्भूत हुआ अतः इसे स्वयम्भू लिंग भी कहा जाता है। यह लिंग पांच स्थानों से खण्डित है।

गलियाकोट का उर्स मेला

डूंगरपुर जिले की सागवाड़ा तहसील के एक छोटे से कस्बे गलियाकोट में स्थित आदरणीय सन्त सैयद फखरुद्दीन की मज़ार, जिसे मज़ार–ए–फखरी के नाम से भी जाना जाता है, दाऊदी बोहरा सम्प्रदाय की आस्था का बहुत बड़ा केन्द्र है। वैसे तो इस मज़ार पर पूरे वर्ष भर ही देश–विदेश के श्रद्धालुओं का आना–जाना लगा रहता है परन्तु मुहर्रम की 27 वीं तारीख को होने वाले उर्स के मौके पर तो यहाँ अलग ही माहौल होता है। उस दिन मज़ार शरीफ को पुष्पों से सजाया जाता है और दीप प्रज्वलित किए जाते हैं। सामूहिक इबादत होती है और कुरान शरीफ का पाठ किया जाता है। भक्त गण अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति हो जाने पर कृतज्ञता ज्ञापन के लिए भी यहां आते हैं।

भर्तृहरि का मेला

अलवर से लगभग चालीस किलोमीटर दूर बाबा भर्तृहरि की समाधि है, जहाँ वर्ष में दो बार बैसाख और भाद्रपद में मेला लगता है। कहा जाता है कि राजा गोपीचन्द भर्तृहरि बहुत बड़े राजपाट के स्वामी थे। उनकी पत्नी रानी पिंगला अतीव सुन्दरी थी। किसी कारण राजा के मन में विरक्ति आ गई और उन्होंने अपना राजपाट त्याग कर सन्यास ले लिया। जगह–जगह विचरण करने वाले भर्तृहरि बाबा को यह जंगल बहुत अच्छा लगा और वे मृत्यु पर्यन्त यहीं रहे। यहीं उनकी समाधि भी बनाई गई। तीन तरफ सुरम्य पहाड़ियों से घिरे इस स्थान पर एक झरना भी बहता है।

अपना नया काम शुरू करने और संकट निवारण के लिए श्रद्धालु बाबा का भण्डारा भी बोलते हैं। मेले के दौरान यहां कुम्भ मेले जैसा वातावरण बन जाता है।

डिग्गी के कल्याण जी का मेला

जयपुर से लगभग पिचहत्तर किलोमीटर दूर टोंक जिले की मालपुरा तहसील में स्थित डिग्गीपुरी में भगवान विष्णु के स्वरूप राजा कल्याण जी का मेला श्रावण माह की अमावस्या को लगता है। कल्याण जी के बहुत सारे भक्त अपनी मनोकामना पूर्ण होने की प्रार्थना के साथ जयपुर से डिग्गी तक की पैदल यात्रा भी करते हैं। डिग्गी कल्याण जी की बहुत अधिक मान्यता है और यह मान्यता प्रदेश की सीमाओं से बाहर बिहार, बंगाल और आसाम तक व्याप्त है।

बाबा रामदेव जी का मेला

जैसलमेर बीकानेर मार्ग पर जैसलमेर से 125 किलोमीटर दूर और जैसलमेर जिले के पोकरण कस्बे के उत्तर में स्थित रुणीचा नामक स्थान पर हर साल भाद्रपद के शुक्ल पक्ष की द्वितीया से एकादशी तक एक बहुत बड़ा मेला भरता है। बाबा रामदेव तंवर जाति के राजपूत संत थे। समाधि स्थल पर 1931 में बीकानेर के महाराजा गंगा सिंह ने एक मंदिर बनवा दिया था। बाबा रामदेव को लेकर अनेक चमत्कारिक कहानियां लोक में प्रचलित हैं।

बाबा रामदेव राजस्थान के अत्यधिक प्रतिष्ठित लोक देवता हैं और समाज के सभी धर्मों और वर्गो के लोग इनमें अगाध आस्था रखते हैं। रामदेवरा में बाबा रामदेव का मंदिर, रामदेव सरोवर, गुरुद्वारा, परचा बावड़ी आदि दर्शनीय स्थल हैं। रामदेव जी की शिष्या डालीबाई की समाधि भी यहीं स्थित है। रामदेव जी का यह मेला हमारी सांस्कृतिक एकता का बहुत बड़ा प्रतीक है।

खाटू श्याम जी का मेला

सीकर जिले का खाटू श्याम जी का मंदिर बहुत ही विख्यात है। सीकर जिला मुख्यालय से लगभग 50 किलो मीटर दूर स्थित श्रीकृष्ण के ही एक स्वरूप श्री श्याम जी के इस मंदिर में वर्ष भर भक्तों की आवाजाही लगी रहती है। यहॉ फाल्गुन के शुक्ल पक्ष की दशमी से द्वादशी तक वार्षिक मेला लगता है जिसमें पूरे देश से भक्त गण आते हैं। मेले के अवसर पर बहुत बड़ी संख्या में भक्तगण यहीं अपने बच्चों के मुण्डन भी करवाते हैं। इस मंदिर से जुड़े हुए श्याम बगीचा और श्याम कुण्ड भी दर्शनीय हैं।

करणी माता का मेला

बीकानेर जिले में नोखा कस्बे के निकट स्थित करणी माता के मंदिर में साल में दो बार बड़े मेले लगते हैं। पहला मेला जो अधिक बड़ा होता है नवरात्रि में चैत्र शुक्ला एकम से चैत्र शुक्ला दशमी तक लगता है और दूसरा मेला अश्विन शुक्ला एकम से अश्विन शुक्ला दशमी तक लगता है। ये मेले करणी माता के सम्मान में आयोजित होते हैं जिन्हें बीकानेर के शासक अपनी अधिष्ठात्री देवी मानते हैं। करणी माता का मंदिर संगमरमर का बना हुआ और अपनी कलात्मकता में अनुपम है। इस मंदिर की एक विशेषता यह है कि यहां चूहे, जिन्हें काबा कहा जाता है, सहज भाव से विचरण करते हैं और उन्हें पवित्र माना जाता है।

कपिल मुनि का मेला

कोलायत में लगने वाला कपिल मुनि का मेला बीकानेर जिले का एक बड़ा मेला माना जाता है। कार्तिक पूर्णिमा को लगने वाला यह मेला कपिल मुनि के सम्मान में होता है। कोलायत का मूल नाम भी उन्हीं के नाम पर कपिलायतन था। भक्त गण मेले वाले दिन पवित्र नदी में स्नान कर अपने को धन्य करते हैं। इस मेले के अवसर पर यहॉ एक विशाल पशु मेला भी लगाया जाता है।

अन्य मेले

राजस्थान के विभिन्न शहरों, कस्बों और गॉवों में इतने मेले लगते हैं कि उन सबका वर्णन तो एक स्वतन्त्र पुस्तक में ही सम्भव हो सकता है। यहॉ हमने कुछ मुख्य मुख्य मेलों का ही वर्णन किया है। उपरोक्त वर्णित मेलों के अतिरिक्त बीकानेर जिले का जम्भेश्वर जी का मेला, सीकर जिले में जीणमाता का मेला, सवाई माधोपुर जिले में रणथम्भौर के गणेश जी का मेला, सवाई माधोपुर जिले में ही शिवाड़ क्षेत्र में

शिवरात्रि पर लगने वाला मेला, परबतसर में तेजाजी का मेला, मेंहदीपुर के बालाजी का मेला, बाड़मेर जिले का गोगाजी का मेला, चुरू जिले में सालासर हनुमान जी का मेला, उदयपुर का हरियाली अमावस्या का मेला भी बहुत विख्यात हैं।

इन पारम्परिक मेलों के अतिरिक्त जैसलमेर का मरु मेला, गुलाबी नगरी जयपुर का हाथी महोत्सव, बीकानेर का ऊंट उत्सव, बीकानेर का ही मांड महोत्सव, बाड़मेर का थार महोत्सव, माउण्ट आबू के ग्रीष्म और शरद महोत्सव, बून्दी उत्सव, नागौर उत्सव, मेवाड़ उत्सव, शेखावाटी मेला भी बहुत बड़ी संख्या में पर्यटकों को आकृष्ट करते हैं।

राजस्थान के रीति–रिवाज

राजस्थान का इतिहास बहुत पुराना है। यहॉ के लोगों को अनेक उतार–चढ़ावों का सामना करना पड़ा है। संघर्ष और वैभव दोनों ही ने यहॉ के जीवन को प्रभावित किया और आकार दिया है। किसी भी प्रदेश के निवासी जैसा जीवन जीते हैं उसी के अनुरूप उनके रीति रिवाज भी बनते चलते हैं। रीति–रिवाजों का निर्माण न तो योजनाबद्ध रूप से होता है और न ही किसी संस्थान के द्वारा किया जाता है। जीवन की परिस्थितियॉ स्वतः कुछ परम्पराओं को गढती चलती हैं और कालान्तर में वे ही परम्पराएं व्यवस्थाओं का रूप धारण कर लेती हैं। उन्हीं को हम किसी समाज के रीति–रिवाज के रूप में जानने लग जाते हैं। स्वाभाविक ही है कि राजस्थान में भी यही हुआ है। अगर संघर्षो, बलिदानों और त्याग के बहुत सारे प्रसंगों ने यहां के निवासियों में सादगी और संयमित जीवन की तरफ ले जाने वाले रीति रिवाजों की स्थापना की तो वैभव पूर्ण राजा महाराजों की जीवन शैली ने इससे इतर, शानो–शौकत वाले रीति रिवाजों की भी स्थापना की। जीवन में धर्म का बहुत अधिक महत्व रहा तो ये करीब–करीब सारे ही रीति–रिवाज धर्म से भी जुड़ते चले गए।

राजस्थान का समाज एक साथ ही ठहरा हुआ समाज भी है तो गतिशील समाज भी। अगर हम बहुत पीछे न भी जाएं और केवल आज की बात करें, तो पाएंगे कि राजस्थान में आज जो रीति रिवाज विद्यमान हैं उनमें ठहराव और गतिशीलता दोनों का एक अनूठा सामंजस्य झलकता है। हम आधुनिक होकर पश्चिमी तौर तरीकों को अपना रहे हैं लेकिन अपने पारम्परिक तौर तरीकों को भी नहीं छोड़ रहे हैं।

पुराने और नए का यह अनूठा संगम सबसे ज्यादा विवाह जैसे मांगलिक प्रसंगों में देखने को मिलता है। टीका, मिलणी, पीठी, बाजोट–बिछावन, फेरा, सीख आदि रस्में राजस्थान की अपनी खास रस्में हैं और अलग–अलग जातियों में थोड़ी–थोड़ी भिन्नता के साथ अब भी इनका निर्वाह किया जाता है।

खान–पान सम्बंधी रीति–रिवाज

राजस्थान की अपनी विशिष्ट भौगोलिक स्थितियों के कारण यहां का खान–पान भी विशिष्ट रहा है। हरियाली की कमी ने यहाँ के खान–पान को भी बहुत प्रभावित किया और हरी सब्ज़ी के विकल्प वाली सब्ज़ियां जैसे केर साँगरी वगैरह यहां की खास पहचान बनीं। मक्का, बाजरी का प्रचलन यहां इनकी सुलभता की वजह से अधिक हुआ। समय परिवर्तन के साथ देश और दुनिया के दूसरे हिस्सों के व्यंजन तो हमारे यहां आए, लेकिन सुखद बात यह रही कि हमारी अपनी जो विशेषताएँ थीं, वे भी बनी रहीं। न केवल बनी रहीं, उन्हें विस्तार भी मिला। आज राजस्थान की दाल–बाटी केवल राजस्थान तक सीमित न रहकर पूरे देश में लोकप्रिय है। केर साँगरी पंच सितारा होटलों तक की शान बन चुकी है।

वेषभूषा

वेशभूषा का सीधा सम्बन्ध भौगोलिक स्थितियों अर्थात जलवायु और संसाधनों की उपलब्धता से होता है। ठण्डी जलवायु और गर्म जलवायु वाले स्थानों की वेशभूषा एक–सी नहीं हो सकती। वेशभूषा को संसाधनों की उपलब्धता भी प्रभावित करती है। तीसरा प्रभाव जो वेशभूषा पर होता है वह है बाह्य संसर्ग का। किसी स्थान के लोग अगर अन्य स्थानों के लोगों के अधिक सम्पर्क में आते हैं तो वे वेशभूषा विषयक प्रभाव भी अधिक ग्रहण करते हैं। लेकिन यह स्मरण रखा जाना आवश्यक है कि प्रभाव वेशभूषा के मूल स्वरूप को नहीं बदलते हैं।

राजस्थान के निवासियों की वेशभूषाओं के अनेक अध्ययन हुए हैं और यह जानना बहुत रुचिकर होगा कि कालीबंगा और आहड़ सभ्यता के युग से ही राजस्थान में सूती वस्त्रों के उपयोग के प्रमाण मिलते हैं। खुदाई में रुई कातने के चक्र और तकली का मिलना यह प्रमाणित करता है कि उस युग में रुई से बने वस्त्रों का प्रयोग होता था। बाद में गुप्तोत्तरकाल से 15 वीं शताब्दी तक के मंदिरों में भी तत्कालीन वेशभूषा के अनेक रोचक प्रमाण मिलते हैं। उन्हीं से ज्ञात होता है कि पुरुषों में गोलाकार मोटी पगड़ी पहनने का रिवाज़ था। मुगलकाल में हमारी वेशभूषा में काफी बदलाव आए, लेकिन पगड़ी आन–बान और शान का प्रतीक बनी रही। राजस्थान में कई किस्म और शैली की पगड़ियां देखने को मिलती हैं, जैसे अटपटी, अमरशाही, उदेशाही, खँजरशाही, शिवशाही, विजयशाही और शाहजहानी। अलग–अलग पेशे के लोगों की पगड़ियां भी भिन्नता लिए हुए होती थी जैसे सुनार आंटे वाली पगड़ी पहनते थे तो बनजारे मोटी पट्टेदार पगड़ी पहनते थे। पगड़ियों में मौसम के अनुसार भी बदलाव होते थे। श्रावण में लहरिया काम में आता था तो होली पर फूल पत्ती की छपाई वाली पगड़ी पहनी जाती थी। मोठड़े की पगड़ी ब्याह शादी के अवसर पर पहनी जाती थी। पगड़ी को

चमकीली बनाने के लिए तुर्रे, सरपेच, बालाबन्दी, धुगधुगी, पछेवड़ी, लटकन, फतेपेच आदि का इस्तेमाल होता था। राजस्थान की वेशभूषा में पगड़ी का स्थान बहुत महत्वपूर्ण रहा है। आज भी जब गौरव की रक्षा की बात होती है तो पगड़ी की लाज के रूप में उसे अभिव्यक्त किया जाता है। प्राचीन संस्कृति से अनुराग रखने वाले लोग आज भी बिना पगड़ी घर से बाहर नहीं निकलते हैं, और जो लोग इसे त्याग चुके हैं वे भी मांगलिक औपचारिक अवसरों पर इसका प्रयोग करना नहीं भूलते हैं। तेज़ धूप से रक्षा करने में इसकी जो उपादेयता रही होगी उसे स्मरण कर पगड़ी का एक संबंध राजस्थान की उष्ण जलवायु से भी जोड़ा जा सकता है।

जिस तरह पुरुषों के परिधानों के अनेक प्रमाण सुलभ हैं उसी तरह स्त्रियों की वेशभूषा के प्रमाण भी मिलते हैं। प्रारम्भिक मध्यकाल में स्त्रियां एक विशेष तरह का अधोवस्त्र पहनने लगीं जो अब राजस्थान में घाघरा नाम से जाना जाता है। स्त्रियों की वेशभूषा में अलंकरण छपाई और कसीदे का काम भी पूर्व मध्यकाल तक आते–आते प्रचलित हो गया था। वेशभूषा का वह स्वरूप राजस्थान की घुमक्कड़ जाति की और आदिवासी स्त्रियों की वेशभूषा में आज भी देखा जा सकता है। प्रारम्भ में जो अधोवस्त्र कमर में लपेटा जाता था वही कालान्तर में घाघरा और घेरदार कलियों वाला घाघरा बना। ऊपर पहने जाने वाले वस्त्रों में कुर्ती विशेष रूप से उल्लेखनीय है। मारवाड़ में आज भी इसका प्रचलन है। साड़ियों के कई नाम और रूप राजस्थान में प्रचलित हैं जैसे चोल, निचोल, पट, दुकूल, चीर–पटोरी, चोरसो, ओढनी, चून्दड़ी आदि। चून्दड़ी और लहरिया तो राजस्थान की खास साड़ियां हैं और आज भी लोकप्रिय हैं।

अब जबकि वेश विन्यास के मामले में और विशेषतः पुरुष वेशभूषा के मामले लगभग पूरे भारत ने पश्चिमी वेशभूषा को अपना लिया है, पैंट कमीज सर्व स्वीकृत पोशक बन गई है, तब भी राजस्थान का बन्द गला या जोधपुरी अलग से अपनी जगह बनाए हुए है। औपचारिक अवसरों पर राजस्थानी साफा अपनी अलग ही छटा प्रस्तुत करता है। और इसी तरह भारत के सर्वाधिक लोकप्रिय स्त्री परिधान साड़ी या सलवार कमीज़ को अपना लेने के बाद भी राजस्थानी स्त्रियाँ विशेष अवसरों पर अपनी पारम्परिक वेशभूषा में सजने का मोह नहीं त्याग पाती हैं, यह बात बहुत महत्वपूर्ण है। राजस्थान की वेशभूषा का गहन अध्ययन करने वाले अनेक विद्वानों का ध्यान इस तरफ गए बगैर नहीं रह सका है कि राजस्थान का अधिकांश हिस्सा रेगिस्तान है, मटमैला और धूसर, जबकि यहाँ की वेशभूषा बहु रंगी है। राजस्थान के वस्त्रों में सबसे अधिक प्रधानता लाल रंग की है। और लाल रंग भी एक तरह का नहीं, उसके अनेक भेदोपभेद। राजस्थान का यह कथन तो सभी ने सुना है। मारू थारे देश में उपजै तीन रतन, इक ढोला, दूजी मारवण, तीजौ कसूमल रंग।कसूमल अर्थात लाल। रंगों की विपुलता को इस तरह से व्याख्यायित किया गया है कि राजस्थान का मनुष्य अपनी

धरती की रंगविहीनता की क्षति पूर्ति अपने पहनावे के रंगों से करता है। हो सकता है कि यह बात बहुत प्रमाण पुष्ट न हो, किन्तु विचारणीय तो है ही। इसी सन्दर्भ में एक और बात यह भी कि राजस्थान की अनेक नदियों में ऐसे रासायनिक तत्व हैं जो रंगाई–छपाई के लिए अनुकूल सिद्ध होते हैं। इसी सिलसिले को आगे बढाते हुए, वेशभूषा की बात करते हुए राजस्थान के वस्त्र उद्योग की कुछ विशेषताओं का भी उल्लेख कर लिया जाना उचित होगा।

राजस्थान में रंगाई का काम करने वालों को रंगरेज या नीलगर कहा जाता है। ये लोग मुख्यतः पगड़ियां, साफे, ओढनी आदि रंगते हैं। रंगाई का भी एक विशेष तरीका है बद्ध या बंधेज। इस बंधेज तकनीक में चुनरी के बन्धेज सबसे अधिक लोकप्रिय हैं। चुनरी और वो भी बंधेज की, राजस्थान के जन–जीवन का अभिन्न अंग है। चुनरी में अनेक प्रकार के अभिप्राय बनते हैं जैसे पशु, पक्षी, फूल और पत्ती। पशुओं में हाथी और पक्षियों में मोर बहुत लोकप्रिय है। बंधेज के अतिरिक्त राजस्थानी रंगाई में पोमचा और लहरिया भी बहुत लोकप्रिय हैं। पोमचा का सम्बन्ध पद्म अर्थात कमल से है। यह प्रकार सिर्फ ओढनी रंगने में प्रयुक्त होता है। कमल के फूल के अभिप्राय वाली ओढनी पोमचा कहलाती है। यह मुख्यतः दो तरह की होती है, लाल गुलाबी, और लाल पीली। पोमचा शिशु जन्म पर नव प्रसूता के लिए उसके मातृ पक्ष की तरफ से आता है। बेटे के जन्म पर पीला पोमचा और बेटी के जन्म पर गुलाबी पोमचा देने की प्रथा है।

इसी प्रकार लहरिया राजस्थान में बहुत लोकप्रिय है। श्रावण में राजस्थान की स्त्रियां लहरिया की ओढनी और पुरुष लहरिया की पगड़ी पहनते हैं। श्रावण में भाई अपनी बहन के लिए और पति पत्नी के लिए लहरिया उपहार स्वरूप लाता है। लहरिये एक से सात तक रंगों में रंगे जाते हैं। परन्तु क्योंकि पांच की संख्या शुभ मानी जाती है इसलिए पचरंगी लहरिये का विशेष महत्व है।

राजस्थान के बहुत सारे शहरों और कस्बों में रंगाई–छपाई का काम होता है परन्तु बालोतरा, बाड़मेर, पाली, पीपाड़, जोधपुर, बगरू, सांगानेर आदि की विशेष ख्याति है। पीपाड़, जोधपुर और पाली में बड़े और सशक्त अलंकरण छपते हैं जिनमें लाल, काले, नीले और हरे रंगों की प्रधानता होती है। बाड़मेर अजरख पद्धति से छपे कपड़ों के लिए विख्यात है। अजरख पद्धति की विशेषता है कि यह दोनों तरफ होती है, लाल और नीले रंगों में होती है और इसके अलंकरण ज्यामितीय होते हैं और काफी कुछ तुर्की शैली से मिलते–जुलते होते हैं। बगरू अपनी स्याह बैगर (काल और लाल) छपाई के लिए प्रसिद्ध है। मटिया रंग की ज़मीन पर लाल–काले रंगों में फूल पत्ती, पशु पक्षी और कई तरह के अलकरण यहाँ छापे जाते हैं। साँगानेर की छपाई की

विशेषता आकर्षक रंगों और लयात्मक बूटियों में देखी जा सकती है। सांगानेर और बगरू के वस्त्रों की धूम अब विदेशों तक में मच चुकी है।

आभूषण

वस्त्र हमारी नग्नता को ढकने के साथ–साथ हमारे सौन्दर्य में वृद्धि करते हैं तो आभूषण उस बढे हुए सौन्दर्य को और अधिक बढाने का काम करते हैं। सुन्दर दिखाई देना मनुष्य मात्र के स्वभाव का अंग है, और राजस्थान के निवासी भी इस स्वभाव से अछूते नहीं हैं। स्त्रियों में सौन्दर्य की चाह कदाचित पुरुषों से थोड़ी अधिक होती है। यही कारण है कि पुरुषों के आभूषणों की तुलना में स्त्रियों के आभूषण अधिक पाए जाते हैं। राजस्थान में बहुत पुराने समय से आभूषणों के प्रयोग के प्रमाण मिलते हैं। कालीबंगा और आहड़ सभ्यता के युग की स्त्रियां मिट्टी के और चमकीले पत्थरों के आभूषण पहनती थीं। कुछ शुंगकालीन मिट्टी के खिलौनों और फलकों से जानकारी मिलती है कि स्त्रियाँ हाथों में चूड़ियाँ और कड़े, पैरों में खड़वे और गले में लटकन वाले हार पहनती थीं। वे सोने, चान्दी, मोती और रत्नों के आभूषणों को पसन्द करती थीं। कम आर्थिक साधनों वाली स्त्रियां कांसा, पीतल, ताम्बा, कौड़ी, सीप और मूंगे के गहनों से खुद को सजाती थीं। उस युग में हाथी–दांत के आभूषणों का भी उपयोग होता था। आभूषणों की इस परम्परा और शैली का निर्वाह आज भी आदिवासी और जन जाति की स्त्रियों में देखा जा सकता है।

मध्यकाल तक आते–आते आभूषणों की निर्मिति में काफी बदलाव आए। तत्कालीन साहित्य और शिल्प में इसकी अनेक बानगियाँ देखी जा सकती हैं। ओसियां, नागदा, देलवाड़ा, कुम्भलगढ़ आदि की मूर्तियों में कुंडल, हार, बाजूबन्द, कंकण, नूपुर, मुद्रिका आदि के अनेक रूप और आकार–प्रकार देखने को मिलते हैं। ये आभूषण प्रकार बाद तक, वर्तमान काल तक प्रचलित हैं। कुछ प्रमुख राजस्थानी आभूषणों के बारे में यह जानना रोचक होगा कि सिर पर बांधे जाने वाले गहने को बोर, शीशफूल, रखड़ी और टिकड़ा नाम से जाना जाता था। गले में और वक्ष पर धारण किए जाने वाले आभूषणों में तुलसी, बजट्टी, हालरो, हँसली, तिमणियाँ, पोत, चन्द्रहार, कंठमाला, हांकर, चंपकली, हंसहार, सरी, कण्ठी प्रमुख हैं। कानों में पहने जाने वाले गहनों में कर्णफूल, पीपलपत्रा, फूल झूमका, अंगोट्या, झेला, लटकन आदि और हाथों में कड़ा, कंकण, नोगरी, चांट, गजरा, चूड़ी प्रमुख थे। इसी तरह उंगलियों में बींटी, दामना, हथपान, छड़ा तथा पांवों में कड़ा, लंगर, पायल, पायजेब, घुंघुरू, नूपुर, झाँझर, नेवरी आदि पहने जाते थे। नाक में नथ, वारी, कांटा, चूनी, चोप आदि और कमर में कन्दोरा, या करधनी पहने जाते थे।

पश्चिम से सम्पर्क और बाह्य दुनिया के प्रभाव से राजस्थान की स्त्रियों की आभूषण विषयक पसन्द अब ठीक वैसी नहीं रह गई है और धीरे–धीरे सब कुछ एक–सा होता जा रहा है। फिर भी मध्यकाल से चले आ रहे ये आभूषण ग्रामीण अँचलों में अब भी आज भी पहने जाते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में इनके स्वरूप में कम और शहरी क्षेत्रों में अधिक बदलाव आया है। राजस्थान में पुरुष भी अनेक प्रकार के आभूषण धारण करते रहे हैं। कानों में मुरकियां, लोंग, झाले, छैलकड़ी, हाथों में बाजूबन्द, हाथ में कड़ा और उंगलियों में अंगूठी आदि पहनने का जो रिवाज़ था वो अब काफी कम हो गया है लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में अब भी ये आभूषण प्रयुक्त होते मिल जाते हैं।

आभूषण प्रिय और आभूषण समृद्ध राजस्थान में आभूषण निर्माण की भी बहुत विशिष्ट परम्परा है। जिन लोगों ने राजस्थान की राजधानी के नगर जयपुर की स्थापना की, उनके मन में आभूषणों की कितनी महत्ता थी इसका पता इस बात से भी लगता है कि उन्होंने जयपुर के प्रमुख बाज़ार का नाम जौहरी बज़ार और यहॉ की सबसे प्रमुख चौपड़ का नाम माणक चौक रखा। यहीं यह बता देना प्रासंगिक होगा कि माणक को रत्नों का सरताज माना जाता है। आज राजस्थान का यह नगर अपने आभूषणों और रत्न व्यवसाय के लिए पूरी दुनिया में जाना जाता है। राजस्थान के कुछ नगर अपनी विशिष्ट आभूषण निर्माण शैली के लिए भी विख्यात हैं। श्रीनाथ जी की नगरी नाथद्वारा अपने चांदी के आभूषणों के लिए विख्यात है। इन्हें धातु के बारीक तारों से बनाया जाता है और तारकशी नाम से जाना जाता है। इसी तरह प्रतापगढ की थेवा कला जिसमें कांच के बीच सोने का बारीक काम किया जाता है, पूरे देश में अपनी अलग पहचान रखती है।

ग्रामीण मनोरंजन

मनोरंजन जीवन का अनिवार्य अंग है। स्त्री हो या पुरुष, अमीर हो या गरीब, शहरी हो या ग्रामीण, मनोरंजन सभी करते हैं। मनोरंजन के साधन जीवन चर्या की एकरसता से मुक्ति पाने और नए संघर्षो के लिए ऊर्जा का अक्षय स्रोत होते हैं। राजस्थान के ग्रामीण मनोरंजन की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह बाह्य साधनों पर कम से कम निर्भर है। स्थानीय रूप से और सहजता से जो उपलब्ध हो जाता है उसी से भरपूर मनोरंजन कर लिया जाता है। ग्रामीण अंचलों में बच्चे लुका–छिपी, आंख मिचौनी, घोड़ा दड़ी, मार दड़ी और डाल कुदावणी जैसे खेलों से अपना मनोरंजन करते हैं। लट्टू चकरी और गोली फंकने (कँचे) के खेल भी बच्चों में बहुत लोकप्रिय हैं। लड़कियों में चिरमी का खेल भी खेला जाता है।

घर के भीतर खेले जाने वाले खेलों में चौपड़ चौसर आदि बहुत लोकप्रिय हैं। इन्हें कपड़े की बनी बिसात पर खेला जाता है। इन खेलों में पासों या कौड़ियों को फेंक कर गोटियों को पीटा जाता है और उसी से जीत या हार का निर्णय होता है। इन खेलों को दो या चार लोग मिलकर खेलते हैं। स्त्री और पुरुष दोनों ही इन खेलों को खेलते हैं। ताश, गंजीफा, चरभर, नार–छारी और ज्ञान चौपड़ भी राजस्थान के ग्रामीण अंचलों के लोकप्रिय खेल हैं। चरभर, नार–छारी और ज्ञान चौपड़ भी कौड़ियों, छोटे छोटे कंकड़ों या या इमली के बीजों से खेले जाते हैं। ये बहुत ही सरल खेल हैं जिन्हें कहीं भी, धरती पर ही अँकन करके खेल लिया जाता है।

राजस्थान के गांवों में आज भी सपेरे, कालबेलिये, मदारी, जादूगर, नट, बहुरूपिये और भाण्ड बहुत बड़े जन समुदाय का मनोरंजन करते हैं। इनमें से अधिकांश किसी भी खुली जगह में अपना मजमा लगा लेते हैं और वहां जुटी हुई भीड़ उनके कौशल से मुग्ध होती है। इनमें से कुछ ने जैसे, कालबेलिया नर्तकों ने अपनी कला को इतना मांज लिया कि वह शहरों तक जा पहुंची और फिर वहाँ की परिधि को लांघ कर विदेशों तक भी जा पहुंची। गांवों में अब भी सपेरे अपनी टोकरी में से सांप को बाहर निकाल कर और फिर बीन की धुन पर उसे नाचता हुआ दिखा कर लोगों का मनोरंजन करते हैं। लगभग साधन विहीन लगने वाले नट जब मात्र दो बांसों के बीच एक पतली–सी रस्सी बांध कर उस पर अपने करतब दिखाते हैं तो उनका कौशल हमें दांतों तले उंगली दबाने के लिए विवश कर देता है। कई बार इनके बहुत छोटे बच्चे भी हैरत अंगेज करतब दिखा कर हमें आश्चर्य चकित करते हैं। बड़े शहरों में जादू का खेल चाहे कितना भी हाई टेक क्यों न हो गया हो, हमारे गांवों के जादूगर अब भी अपने सीमित साधनों और सादगीपूर्ण किन्तु अविश्वसनीय लगने वाले करतबों और हाथ की सफाई से लोगों का मनोरंजन करते हैं। बहुरूपिये भी नित नए वेश बदल कर, कभी सिपाही तो कभी साधु बनकर लोगों का मनोरंजन करते हैं। इन सभी मनोरंजन करने वालों के काम में एक समान बात यह देखने को मिलती है कि इनका पूरा भरोसा अपने कौशल पर होता है, जबकि शहरी मनोरंजन बहुत कुछ सहायक उपकरणों पर आधारित होने लगा है।

राजस्थान के आदिवासी अंचलों में धनुष बाण भी मनोरंजन का एक प्रमुख साधन रहा है और कालान्तर में कई लोगों ने इसमें इतनी अधिक निपुणता भी अर्जित कर ली कि उन्हें बड़े खेल पुरस्कार तक मिल गए। इसी तरह ग्रामीण अंचलों में द्वन्द्व युद्ध, कुश्ती और दंगल भी मनोरंजन के मुख्य साधन के रूप में लोकप्रिय रहे हैं। कुश्ती में केवल उनका ही मनोरंजन नहीं होता है जो इसमें भाग लेते हैं, उनका भी मनोरंजन होता है जो मात्र दर्शक होते हैं। ग्रामीण कुश्ती शहर में जाकर और परिष्कृत हो गई और इसकी अनेक शैलियाँ विकसित हो गई।

पतंगबाजी भी राजस्थान के ग्रामीण अंचलों में मनोरंजन का एक प्रमुख साधन है। प्रान्त के अलग–अलग हिस्सों में विशेष पर्वों के साथ भी इसका सम्बन्ध जुड़ गया है, जैसे उदयपुर क्षेत्र में निर्जला एकादशी को तो जयपुर क्षेत्र में मकर संक्रान्ति को पतंगबाजी के लिहाज़ से विशेष महत्व मिल गया है। लेकिन इन पर्वों के अतिरिक्त भी जब मन चाहे पतंग उड़ाकर मनोरंजन करना राजस्थान के ग्रामीण जन–जीवन का प्रिय शौक रहा है। पतंग के साथ अब धीरे–धीरे बहुत सारी शहरी चीज़ें भी जुड़ने लगी हैं। पतंगबाजी की बड़ी स्पर्धाएं होने लगी हैं, और पतंग उड़ाने का सामान्य उल्लास अब काइट फेस्टिवल की चकाचौंध तक भी जा पहुंचा है।

राजस्थान के ग्रामीण मनोरंजन की चर्चा अधूरी रहेगी, यदि हम यहाँ के कठपुतली के खेल और लोक नाट्य और संगीत नृत्य का जिक्र नहीं करेंगे। मनोरंजन के आधुनिक साधनों के वर्तमान हमले से पहले तक, अर्थात कुछ वर्ष पहले तक राजस्थान के ग्रामीण अंचलों में कठपुतली का खेल मनोरंजन का एक अत्यधिक लोकप्रिय माध्यम था। गांव के समर्थ लोग रात के समय अपनी चौपाल पर लालटेन की मद्धिम रोशनी में कठपुतली का खेल करवाया करते थे। कठपुतली नचाने वाले कलाकार अपनी टोलियां बनाकर गांव–गांव घूमा करते थे। ये लोग कठपुतली का खेल दिखाने के साथ ही नाचते गाते भी थे। लेकिन जैसे–जैसे मनोरंजन के अन्य साधन आते गए, यह कला लुप्त होती गई। बाद में इस कला ने शहरों में अपने लिए जगह तलाश की। उदयपुर के भारतीय लोक कला मंडल ने कठपुतली कला के प्रदर्शन के क्षेत्र में खूब नाम कमाया। विभिन्न सरकारी विभागों ने भी अपनी योजनाओं के प्रचार प्रसार के लिए इस कला का सहारा लिया। यह आशा ही की जा सकती है कि कठपुतली के अच्छे दिन कभी फिर से लौटेंगे।

राजस्थान के ग्रामीण अंचलों में लोक नाट्य की बहुत समृद्ध परंपरा रही है और प्रसन्नता की बात है कि किसी न किसी तरह यह परंपरा अभी भी जीवित है। राजस्थान के सुपरिचित नाटककार हमीदुल्ला ने लोक नाट्यों की दृष्टि से राजस्थान को तीन क्षेत्रों में बांटा हैः

1. उदयपुर, डूंगरपुर, कोटा, झालावाड़ और सिरोही के पर्वतीय क्षेत्र
2. जोधपुर, बीकानेर, बाड़मेर और जैसलमेर के रेगिस्तानी क्षेत्र
3. राजस्थान का पूर्वांचल जिसमें शेखावाटी, जयपुर, अलवर, भरतपुर और धौलपुर का क्षेत्र शामिल है।

सामुदायिक मनोरंजन की दृष्टि से पर्वतीय क्षेत्र बहुत समृद्ध है। इस क्षेत्र के निवासी अधिकाशतः भील, मीणा, बनजारे, सहरिया और गिरासिया हैं। इन लोगों का सहज स्वाभाविक परिवेश है। प्राकृतिक देवी देवताओं पर इनकी अटूट आस्था होती है। इनके नृत्य एवं नाट्यों में जीवन्तता एवं उन्मुक्तता होती हैं। रेगिस्तानी क्षेत्रों में मनोरंजन का काम सरगड़ा, नट, मिरासी, भाट और भाण्ड नामक जातियों के पेशेवर कलाकार करते

हैं। ये लोग स्वांग, लोक नाट्य को नये समय की आवश्यकताओं के अनुरूप बदल कर पेश करने की कला में निपुण हैं। इनके संवादों में हास्य और व्यंग्य का गहरा पुट होता है। राजस्थान का पूर्वांचल और उसमें भी शेखावाटी का इलाका ख्याल की पारम्परिक लोक नाट्य शैली के लिए विख्यात है।

राजस्थान के लोक नाट्य के कुछ प्रमुख रूप हैं: ख्याल, हेला, गवरी, रम्मत, तमाशा, स्वांग, फड़, लीला, नौटंकी, भवाई, भोपा आदि। ख्याल के भी अनेक भेद हैं जिनमें कुचामणी ख्याल, शेखावाटी ख्याल, तुर्रा कलंगी ख्याल मुख्य हैं।

संगीत राजस्थान के लोक जीवन के मनोरंजन का एक प्रमुख साधन रहा है। राजस्थान में बहुत सारी जातियाँ ऐसी रही हैं जिनकी आजीविका का प्रमुख स्रोत उनकी गायन क्षमता ही थी। ऐसी जातियों में ढोली, मिरासी, लंगा, ढाढी, कलावन्त, राव, जोगी, कामड़, बैरागी, मांगणियार आदि के नाम लिए जा सकते हैं। अन्य बहुत सारे लोगों के साथ–साथ इन जातियों के कलाकारों ने राजस्थान के लोक जीवन को अपने संगीत से सदा ही आह्लादित किया है। यहां के लोक वाद्य जिनमें रावणहत्था, एकतारा, तन्दूरा, तम्बूरा, सतारा, निशान, अलगोजा, टोटो, पूंगी, मशक, नड़, मोरचंग, कंजरी, चंग, डफ़, नगाड़ा, नौबत आदि प्रमुख हैं अलग से पहचाने जाते हैं। राजस्थान के कुछ प्रमुख लोक नृत्य हैं तेरहताली, कच्छी घोड़ी, घूमर, गैर, पॉचपदा, जसनाथियों का अग्नि नृत्य आदि।

राजस्थान के इन लोक मनोरंजन के सभी साधनों की एक बड़ी विशेषता तो यह है कि इनका सीधा सम्बन्ध यहां के लोक जीवन से है, और यह स्वाभाविक भी है। ये सभी साधन नितान्त सहज, स्वाभाविक, अकृत्रिम और प्रकृति से निकटता रखने वाले हैं। इनमें से कुछ साधन प्रान्त की सीमाओं को लांघ कर देश और विदेश में भी अपनी धाक जमा चुके हैं तो बहुत सारे साधन अब क्रमशः लुप्त होते जा रहे हैं।

हस्तकला एवं छपाई

आज सम्पूर्ण विश्व में राजस्थानी हस्तशिल्प को सराहा जाता है। अपने अनूठेपन, सूक्ष्मता और सौन्दर्य में यह विलक्षण है। राजस्थान का यह बहु प्रशंसित हस्तशिल्प लगभग उतना ही पुराना है जितना स्वयं मानव का अस्तित्व है। जब मनुष्य ने पत्थरों के औज़ार बनाने शुरू किए तभी से राजस्थान की धरा पर हस्त शिल्प की शुरुआत हो गई थी। कालीबंगा की खुदाई से सिंधु घाटी सभ्यता के जो अवशेष मिले हैं उनसे इस बात के पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं कि तब भी राजस्थान हस्तकलाओं का एक प्रमुख केन्द्र था। राजस्थान की समृद्ध हस्तकलाओं के अनेक उदाहरण यहां के विभिन्न संग्रहालयों में भी देखे जा सकते हैं। राजस्थान की हस्तकलाओं का सीधा सम्बन्ध यहां की समृद्ध सांस्कृतिक परंपराओं और यहां की श्रमशील जीवन शैली से है। राजपूत और मुगल सरदारों की निकटता ने यहां की बहुत सारी कलाओं को प्रभावित किया और अब भी उनमें इन दो संस्कृतियों के आदान–प्रदान के चिन्ह देखे जा

सकते हैं। अंग्रेज़ों ने स्वभावतः हमारी कलाओं को निरुत्साहित किया लेकिन यह हमारी अपनी कलाओं का ही दमखम था कि उनके सौतेले व्यवहार के बावजूद ये अपना अस्तित्व बनाए रख सकीं। आज़ादी के बाद भारत और राजस्थान की सरकारों ने कई तरह से यहां की हस्तकलाओं को प्रोत्साहन और संरक्षण देने के प्रयास किए और उनके सुपरिणाम अब नज़र आने लगे हैं। इस समय के साथ विभिन्न कलाओं के स्वरूप में अनेक परिवर्तन भी हुए लेकिन एक बात फिर भी बनी रही और वह यह कि यहां के कलाकारों ने स्थानीय कच्चे माल का ही अधिकांशतः प्रयोग किया है।

राजस्थान एक बहुरंगी और विविधता भरा प्रान्त है और यही रंगों और शैलियों की विविधता इसकी हस्तकलाओं में भी देखी जा सकती है। यह कहना ज़रा भी अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि प्रान्त के हर अंचल में कलाकार कुछ न कुछ ऐसा निर्मित करते हैं जो अनूठा होता है। जयपुर की ब्ल्यू पॉटरी, मीनाकारी, नक्काशी, हाथी दांत का काम, और मूर्ति कला, उदयपुर के लकड़ी के खिलौने, नाथद्वारा की पिछवई पेंटिंग, कोटा की डोरिया साड़ियां, जोधपुर की लहरिया और चून्दड़ियाँ, कशीदाकारी की जूतियां, प्रतापगढ़ की थेवा कला, मोलेला की मूर्ति कला, बाड़मेर, साँगानेर और बगरू की हाथ की छपाई, सवाई माधोपुर के खस के बने पानदान, कोई कहाँ तक गिनाए।

यहां हम राजस्थानी हस्तकलाओं की कुछ अधिक प्रसिद्ध चीज़ों का परिचय दे रहे हैः

ब्ल्यू पॉटरी

चीनी मिट्टी के सफेद बर्तनों पर किए गए नीले रंग के अंकन को ब्ल्यू पॉटरी के नाम से जाना जाता है। जयपुर इस कम के लिए विश्वविख्यात है। आजकल नीले के अतिरिक्त पीला, हलका भूरा और गहरा भूरा रंग भी इस शैली में प्रयुक्त किए जाने लगे हैं। इस काम के द्वारा डिज़ाइनर कप प्लेट, अन्य बर्तन और खिलौने व सजावटी सामान जैसे फूलदान आदि बनाए जाते हैं। राजस्थान में इस कला को सम्मान दिलाने और इसका प्रसार करने के लिए कृपाल सिंह शेखावत का नाम बहुत मान से लिया जाता है। भारत सरकार ने उन्हें पद्मश्री से भी अलंकृत कर उनके योगदान को मान्यता प्रदान की थी। राजस्थान के बहुत सारे महलों में भी इस काम के उदाहरण देखे जा सकते हैं।

मूर्तिकला

राजस्थान अपने संगमरमर के लिए तो प्रसिद्ध है ही, यहां अन्य कई तरह के पत्थरों की भी खूब सारी खानें हैं। डूंगरपुर का हरा काला, धौलपुर का लाल, भरतपुर का गुलाबी, मकराना का सफेद, जोधपुर का बादामी, राजसमन्द का कालेपन की झांई वाला सफेद, जालौर का ग्रेनाइट और कोटा का स्लेट पत्थर भी अपनी अलग पहचान रखते हैं। इतने सारे पत्थर जिस प्रदेश में मिलते हों, वहां मूर्तिकला का विकास स्वाभाविक ही माना जाएगा। राजस्थान की राजधानी जयपुर तो अपनी मूर्तिकला के लिए विख्यात है ही, अन्य अनेक स्थान भी अलग–अलग तरह के प्रस्तर कार्य के लिए जाने जाते हैं। कहीं विशाल मूर्तियां बनती हैं तो कहीं पत्थर पर बारीक नक्काशी कर

जालियां झरोखे बनाए जाते हैं, और कहीं उनसे छोटे–बड़े खिलौने बनाए जाते हैं। काम जो भी हो, राजस्थान के हस्त शिल्पियों का कौशल देखते ही बनता है।

टेराकोटा

पकाई हुई मिट्टी से विभिन्न सजावटी व उपयोगी वस्तुओं का निर्माण टेराकोटा के नाम से जाना जाता है और नाथद्वारा के पास मोलेला इस काम के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध है। मोलेला के कलाकार मिट्टी के साथ लगभग एक चौथाई अनुपात में गोबर मिला कर ज़मीन पर थाप देते हैं और फिर उसी पर हाथ या बहुत साधारण उपकरणों से तरह–तरह की आकृतियां उकेरते हैं। इसे एक सप्ताह तक सूखने देने के बाद 800 डिग्री ताप में पकाकर गेरुए रंग से रंग दिया जाता है। इस तरह निर्मित वस्तुएं बहुत आकर्षक लगती हैं और इनकी भारी मांग है।

रत्न और आभूषण

मुगल और राजपूत इन दो शासनों ने राजस्थान में रत्न और आभूषण निर्माण को विशेष रूप से प्रोत्साहित किया। जडाऊ गहनों के लिए जयपुर, बीकानेर और उदयपुर विख्यात हैं। जयपुर मूल्यवान पत्थरों के व्यापार और उन्हें तराशने के कौशल का एक बहुत बड़ा केन्द्र है। प्रतापगढ अपनी थेवा कला के लिए जाना जाता है। राजस्थान के विभिन्न जन जाति बहुत ग्रामीण क्षेत्र पीतल और चांदी के आभूषणों के लिए विख्यात हैं।

लाख का काम

जयपुर और जोधपुर लाख के बने आभूषणों, विशेष रूप से चूड़ियों, कड़ों, पाटलों के लिए प्रसिद्ध हैं। लाख के काम का अर्थ है चपड़ी को पिघला कर उसमें चाक, मिट्टी, बिरोजा आदि मिलाकर उसे गूंध लिया जाना और फिर उससे विभिन्न चीज़ें तैयार करना। इसमें और विविधता लाने के लिए लाख की चूड़ियों पर कॉच और मोती आदि से अतिरिक्त सजावट की जाती है। लाख से आभूषण ही नहीं खिलौने, मूर्तियाँ और पेंसिल–पेन–चाबी के छल्ले आदि भी बनाए जाते हैं। इन चीज़ों की देश–विदेश में भारी माग रहती है।

कपड़े पर छपाई आदि का काम

वैसे तो राजस्थान के अधिकांश गांवों, कस्बों और शहरों में कपड़ों पर किस्म किस्म की छपाई का काम होता है परन्तु बगरू, सांगानेर, बाड़मेर, कालाडेरा, पाली और बस्सी (जिला चित्तौड़गढ) इस काम के लिए विशेष रूप से जाने जाते हैं। राजस्थान की छपाई में विभिन्न प्रकार के बेल–बूटों को पक्के रंगों में छापा जाता है। सांगानेर की छपाई के लिए यहां मिलने वाले पानी का विशेष महत्व है। उसमें डुबोने से कपड़े में एक खास तरह की चमक आ जाती है। गोबर, तिल्ली का तेल, बकरी की मेंगनी और सोड़े के मिश्रण से एक घोल बनाया जाता है और कपड़े को उसमें पूरी

रात डुबोकर रखने के बाद सुखाया जाता है। सूखने के बाद उसे फिर से हरड़ के घोल में डुबाया जाता है और फिर लकड़ी के छापों (ब्लॉक्स) से उन पर छपाई की जाती है। छपाई के लिए सीमित रंगों का ही प्रयोग होता है। पहले ये रंग प्राकृतिक हुआ करते थे लेकिन अब उनकी जगह सिन्थेटिक रंग लेते जा रहे हैं।

राजस्थान में अनेक जगहों पर ग्रामीण महिलाएं कपड़ों पर कशीदाकारी भी करती हैं। सीकर झुंझुनू आदि के आसपास की स्त्रियां लाल गोटे की ओढनियों पर कशीदे से ऊंट, मोर, बैल, हाथी, घोड़े आदि बनाती हैं। मेव स्त्रियां भी इसी तरह की कशीदाकारी करती हैं। शेखावाटी में अलग–अलग रंग के कपड़ों को तरह–तरह के डिजाइनों में काट कर कपड़ों पर सिल दिया जाता है जिसे पैच वर्क कहा जाता है। गोटे किनारी और आरा तारी का काम भी राजस्थान के कई ग्रामीण अंचलों में होता है। आरा तारी के काम के लिए सिरोही जिले की और गोटे किनारी के लिए उदयपुर व जयपुर जिलों की बहुत प्रसिद्धि है।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि देश की राष्ट्रीय संस्कृति का अंग होते हुए भी राजस्थान की संस्कृति की अपनी कुछ विशेषताएं हैं। यहॉ के पर्व–त्योहारों, मेलों, रीति–रिवाजों आदि में यहां की खास प्रकार की भौगोलिक परिस्थितियों का निर्णायक योगदान है, प्राचीन होने के कारण यहॉ की संस्कृति में पारंपरिक मूल्यों का महत्त्व भी कुछ हद तक ज्यादा है और वेश–भूषा भी यहां की प्रतिकूल प्राकृतिक परिस्थितियों से प्रेरित है। प्रकृति यहां के बड़े भूभाग में कृपा है इसलिए यहां के निवासी अपने जीवन में राग–रंग को खुल कर तरजीह देते हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. धरती धोराँ री की रचना किसने की थी?
   (अ) कन्हैया लाल सेठिया (ब) पडित रविशंकर
   (स) अल्लाह जिलाई बाई (द) आनन्द बक्षी ( )
2. लट्ठमार होली कहॉ खेली जाती है?
   (अ) जोधपुर (ब) श्री महावीर जी
   (स) कोटा (द) उदयपुर ( )
3. कौन–सा त्योहार प्रकृति और मनुष्य की निकटता का अनुपम उदाहरण है?
   (अ) दिवाली (ब) रक्षा बंधन
   (स) तीज (द) ईद ( )

4. अबूझ सावे का दिन कौन–सा है?

   (अ) 14 जनवरी (ब) श्रावण की सप्तमी

   (स) चैत्र शुक्ला नवमी (द) अक्षय तृतीया ( )

5. कसूमल रंग का अर्थ है

   (अ) लाल रंग (ब) काला रंग

   (स) नीला रंग (द) पीला रंग ( )

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. गणगौर किनकी पूजा का पर्व है?
2. राजस्थान के किस शहर में तीज का त्योहार अतिरिक्त हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है?
3. कुल की रस्म कहां अदा की जाती है?
4. राजस्थान के अत्यधिक प्रतिष्ठित लोकदेवता कौन हैं?
5. कमल के फूल के अभिप्राय वाली ओढनी को क्या कहा जाता है?
6. थेवा कला का सम्बन्ध राजस्थान के किस शहर से है?
7. कठपुतली के प्रदर्शन के लिए प्रसिद्ध संस्थान का नाम क्या है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. राजस्थान का पर्याय किन्हें कहा गया है?
2. ऐसे पांच त्योहारों के नाम लिखिए जो पूरे देश के साथ–साथ राजस्थान में भी मनाए जाते हैं।
3. ईलोजी की बारात कहां और किस अवसर पर निकाली जाती है?
4. बून्दी में मनाए जाने वाले काजळी तीज पर्व की क्या विशेषताएं हैं?
5. उर्स शब्द का अभिप्राय स्पष्ट कीजिए।
6. पांवों में पहने जाने वाले पांच राजस्थानी आभूषणों के नाम लिखिए।
7. राजस्थान को लोक नाट्य की दृष्टि से कितने क्षेत्रों में बांटा जा सकता है?

निबंधात्मक प्रश्न –

1. राजस्थान की वेशभूषा पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
2. राजस्थान की ब्ल्यू पॉटरी पर एक परिचयात्मक टिप्पणी लिखिए।
3. राजस्थान के लोक मनोरंजन पर एक टिप्पणी लिखिए।

अध्याय 9

साहित्यिक राजस्थान

राजस्थान की गिनती देश के हिन्दी भाषी प्रदेशों में होती है और यहां सामान्य बोलचाल की, और उसी के साथ सरकारी कामकाज की भाषा हिन्दी है। शिक्षा का माध्यम भी हिन्दी ही है। लेकिन इसी के साथ, आम जन–जीवन में राजस्थानी का भी उतना ही प्रयोग होता है। राजस्थान के अधिकांश बाशिन्दे अपनी जन–भाषा में बात कर अधिक सहजता और आत्मीयता अनुभव करते हैं। इस तरह राजस्थान की दो मुख्य भाषाएं हैं राजस्थानी और हिन्दी। लेकिन इस विविधता भरे प्रदेश में इन दो भाषाओं के अतिरिक्त अलग–अलग जगहों और अवसरों पर अंग्रेज़ी, ब्रज, उर्दू, सिंधी, पंजाबी का भी पर्याप्त प्रयोग होता है। न केवल प्रयोग होता है, इनमें साहित्य सृजन भी होता है। राजस्थान सरकार ने भी विभिन्न भाषाओँ के साहित्य के संवर्धन के लिए हिन्दी के लिए राजस्थान साहित्य अकादमी के अतिरिक्त संस्कृत अकादमी, उर्दू अकादमी, सिंधी अकादमी, ब्रज अकादमी गठित कर रखी है और पंजाबी अकादमी की घोषणा की जा चुकी है। ये सभी अकादमियाँ अपनी–अपनी भाषाओं और साहित्य के प्रचार प्रसार के लिए नियमित गतिविधियॉ आयोजित करती हैं और स्वभावतः उन गतिविधियों से इन भाषाओं के प्रति अनुराग रखने वाले और उन्हें बोलने–बरतने वाले लाभान्वित होते हैं। यहाँ हम राजस्थान की दो मुख्य भाषाओं हिन्दी व राजस्थानी के साहित्य की विस्तार से चर्चा कर रहे हैं।

हिन्दी साहित्य

राजस्थान में जहां राजस्थानी साहित्य की परंपरा बहुत पुरानी और पुष्ट है, खड़ी–बोली हिन्दी साहित्य की परंपरा उतनी पुरानी नहीं है। खड़ी बोली हिन्दी उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में विन्ध्य–गाँगेय क्षेत्र के विभिन्न सामाजिक–साँस्कृतिक आन्दोलनों की भाषा बन गई थी और बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में मुख्यतया उसी क्षेत्र में चले स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान इसका तेज़ी से विकास और विस्तार भी हुआ। परन्तु राजस्थान में विभिन्न कारणों से सामाजिक–सांस्कृतिक नवाचार और स्वाधीनता आन्दोलन की शुरुआत बीसवीं सदी के दूसरे–तीसरे दशक से हो पाई। इसीलिए हिन्दी का चलन भी यहाँ लगभग उसी समय हो पाया। चलन के बाद भी उसे पूरी तरह रचने–बसने और साहित्य की भाषा बनने में दो–तीन दशक और लगे।

राजस्थान में बीसवीं सदी के दूसरे–तीसरे दशक के दौरान अनेक नवाचार दिखाई पड़ने लगे थे। उनके लिए पृष्ठभूमि रियासतों में चलने वाले दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द और गोविन्द गिरि और उन जैसे अन्य अनेक पुरोधाओं के धार्मिक, सामाजिक–सांस्कृतिक पुनर्जागरण आन्दोलनों ने तैयार की। 1913 में विजयसिंह पथिक के नेतृत्व में पहले बिजोलिया और फिर उसके बाद उसके प्रभाव से बून्दी और जयपुर के किसानों ने आन्दोलन किए। दक्षिण–पश्चिमी

राजस्थान में मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व में भील आन्दोलन हुआ। इसी दौरान रियासतों में सामन्ती शोषण, दमन और अन्याय के विरोध के लिए प्रजामण्डलों और प्रजापरिषदों की स्थापना भी हुई। इन व्यापक नवाचारों और आन्दोलनों से प्रदेश में हिन्दी का प्रसार तो हुआ लेकिन उसकी पहुंच समाज के विशिष्ट वर्गों तक ही सीमित रही। आम लोगों तक उसकी जड़ों का फैलाव यहाँ की रियासतों के भारतीय संघ में विलय के बाद ही हुआ। इस विलय के कारण यहां आवागमन और संचार की सुविधाएँ विस्तृत हुई। इससे विन्ध्य–गांगेय प्रदेशों के हिन्दी भाषी समाज और साहित्य से हमारा सम्पर्क सघन हुआ। इस तरह सही अर्थो में तो राजस्थान में हिन्दी को सम्पर्क, शिक्षा और साहित्य की भाषा के रूप में स्वीकृति और मान्यता बीसवीं सदी के पांचवें–छठे दशक में ही मिल सकी। राजस्थान में हिन्दी में व्यापक और सार्थक सक्रियता का विस्तार छठे दशक के दौरान हुआ। यह वही समय है जब प्रान्त के सात प्रमुख कवियों की सहकारी काव्य–पुस्तक सप्त किरण (1955) और राँगेय राघव की बहु–प्रशंसित औपन्यासिक कृति 'कब तक पुकारूं '(1957) का प्रकाशन हुआ। कहना अनावश्यक है कि ये सात कवि इससे काफी पहले से सृजनरत थे और रांगेय राघव इससे पहले अनेक उपन्यास लिख चुके थे। राजस्थान साहित्य अकादमी की स्थापना भी इसी दौरान 1958 में हुई।

कविता

राजस्थान में कवि–कर्म की बहुत लम्बी और सुदृढ़ परंपरा रही है लेकिन खड़ी बोली हिन्दी में यही कवि कर्म बीसवीं सदी के दूसरे–तीसरे दशक में प्रारम्भ हुआ। यहाँ की रियासतों में सामन्तों और अंग्रेज़ों की दुहरी पराधीनता के विरुद्ध जो जनान्दोलन हुए, उसके बहुत सारे कार्यकर्ता कवि थे। सामन्ती दमन और अन्याय के खिलाफ संघर्ष के लिए जनसाधारण को प्रेरित करने के लिए इन कार्यकर्ता कवियों ने गीत–कविताओं का सहारा लिया। ऐसे कवियों में विजयसिंह पथिक, जयनारायण व्यास, हरिभाऊ उपाध्याय, माणिक्य लाल वर्मा, गोकुल भाई भट्ट, हीरालाल शास्त्री, काला बादल और सुमनेश जोशी मुख्य हैं। इन कवियों की कविता में उच्च कोटि की कलात्मकता की अपेक्षा यह बात महत्वपूर्ण है कि ये सभी मनुष्य के मुक्ति के लिए संघर्ष में उसे हथियार बनाते हैं। वैसे, यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि इस जनान्दोलन से थोड़ा पहले हिन्दी की मुख्यधारा की जो रचनात्मकता थी उस पर भी उपदेश, उद्‌बोधन और इतिवृत्तात्मकता का वर्चस्व था। राजस्थान में भी कुछ कवि इससे प्रभावित हुए । ये सभी कवि पहले ब्रजभाषा में लिखते थे और फिर खड़ी बोली में लिखने लगे थे। इन कवियों में पुरोहित प्रताप नारायण, पुरुषोत्तम दास चतुर्वेदी, और पण्डित गिरधर शर्मा नवरत्न प्रमुख हैं। राजस्थान में हिन्दी के रच–बस जाने के बाद कवि–कर्म का भी विस्तार हुआ। सुधीन्द्र, शकुन्तला कुमारी रेणु, कन्हैयालाल सेठिया, कर्पूरचन्द्र कुलिश, प्रकाश आतुर, मनोहर प्रभाकर, ताराप्रकाश जोशी, मरुधर मृदुल, कमलाकर, राजकुमारी कौल आदि ने लगभग इसी समय अपनी पहचान और प्रतिष्ठा का विस्तार किया। इन कवियों की सक्रियता अधिक समय तक इसलिए रही क्योंकि इनके सरोकार, भावभूमियाँ और काव्य शैलियाँ समय के अनुसार बदलते रहे। इनमें से अधिकांश

कवि अपने समय के सभी रुझानों और आन्दोलनों जैसे छायावाद, उत्तर छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नयी कविता आदि से भी जुड़े रहे।

राजस्थान के जिन कवियों में छायावादी प्रवृत्तियॉ बहुत अच्छी तरह से देखी जा सकती हैं उनमें सुधीन्द्र, कन्हैया लाल सेठिया, ज्ञान भारिल्ल, घनश्याम शलभ, परमेश्वर द्विरेफ, दयाकृष्ण विजय, कमलाकर और राजकुमारी कौल प्रमुख हैं। रांगेय राघव, गणपतिचन्द्र भण्डारी, मेघराज मुकुल, प्रकाश आतुर आदि की अनेक कविताओं में प्रगतिवादी प्रवृत्तियां बहुत मुखर हैं। अज्ञेय द्वारा संपादित 'तार सप्तक' (1943) और फिर उनके ही द्वारा संपादित 'दूसरा सप्तक' से हिन्दी कविता में भावबोध और रूप शिल्प के स्तर पर जो बदलाव आए, राजस्थान की हिन्दी कविता में भी वे सब रूपायित हुए । कन्हैयालाल सहल, कन्हैयालाल सेठिया, रामगोपाल शर्मा दिनेश, जयसिंह नीरज, नन्द चतुर्वेदी और प्रकाश आतुर की उस काल की बहुत सारी कविताओं में आधुनिक भावबोध और प्रयोगशीलता की पदचापें सुनी जा सकती हैं। कन्हैयालाल सहल ने तो अपनी पहली काव्य कृति का नाम ही 'प्रयोग' रखा था। यहीं यह उल्लेख कर देना आवश्यक होगा कि हिन्दी राजस्थान में साहित्य और कवि कर्म की भाषा भले ही देर से बनी, राजस्थान के साहित्य ने हिन्दी साहित्य की मुख्यधारा के समानान्तर चलने में कोई देर नहीं की।

प्रयोगवाद के बाद आने वाली नई कविता और उसके बाद की साठोत्तरी कविता में प्रदेश के जिन कवियों का योगदान बहुत महत्वपूर्ण है उनमें नन्द चतुर्वेदी, विजेन्द्र, नन्दकिशोर आचार्य, हरीश भादानी, ऋतुराज, मणि मधुकर, जयसिंह नीरज, जुगमंदिर तायल, रणजीत, योगेन्द्र किसलय, रामदेव आचार्य, कमर मेवाड़ी, विश्वम्भर नाथ उपाध्याय, भागीरथ भार्गव, सुधा गुप्ता, भगवती लाल व्यास, रमा सिंह, प्रकाश जैन प्रमुख हैं। इन कवियों में से हरीश भादानी ने अपनी पत्रिका 'वातायन', प्रकाश जैन ने 'लहर' और क़मर मेवाड़ी ने 'संबोधन' के माध्यम से भी प्रान्त के काव्य परिदृश्य को अर्थवत्ता प्रदान की। राजस्थान में कविता को लेकर सातवें आठवें दशक में विशेष उत्साह का माहौल रहा। इसके बाद देश और दुनिया के परिदृश्य में जो बहुत बड़े बदलाव आए, और खास तौर पर संचार माध्यमों का जिस तरह से विस्तार हुआ उसने कविता को प्रतिकूलतः प्रभावित किया। लेकिन इसके बावजूद राजस्थान में हिन्दी कविता की धारा निरन्तर प्रवाहित होती रही है। इधर जो कवि दृश्य पर अपनी काव्यात्मक सक्रियता से आश्वस्त करते हैं उनमें नन्द भारद्वाज, हेमन्त शेष, गोविन्द माथुर, प्रेमचन्द गाँधी, हरीश करमचन्दानी, विनोद पदरज, अम्बिका दत्त, ओमेन्द्र, रमाकान्त शर्मा, कृष्ण कल्पित, अजन्ता देव, मीठेश निर्मोही, सवाई सिंह शेखावत प्रमुख हैं।

कथा साहित्य

राजस्थान में कथा साहित्य की परंपरा काफी पुरानी है। यह याद रखना ज़रूरी होगा कि वह परंपरा हिन्दी की नहीं अपितु राजस्थानी की है। जहां तक हिन्दी का प्रश्न है, गद्य का प्रयोग और प्रचलन विलम्ब से होने का असर कथा साहित्य पर पड़ना स्वाभाविक था। राजस्थान

में हिन्दी कहानी के आरम्भिक मील के पत्थर के रूप में चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' का नाम लिया जा सकता है। मात्र तीन कहानियों के इस लेखक की 'उसने कहा था' नामक कहानी जून 1915 में 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित हुई थी और अब भी हिन्दी की उत्कृष्ट कहानियों में अपना स्थान बनाए हुए है। गुलेरी जी के बाद के कहानीकारों में ओंकारनाथ दिनकर, शम्भू दयाल सक्सेना, विष्णु अम्बालाल जोशी, मोहनसिंह सेंगर और जनार्दन राय नागर के नाम महत्वपूर्ण हैं। राजस्थान के कथाकारों में एक बहुत आवश्यक नाम है रांगेय राघव का। विलक्षण प्रतिभा के धनी इस कथाकर ने मात्र 39 वर्ष की जिन्दगी में अन्य अनेक रचनाओं के अतिरिक्त ग्यारह कहानी संग्रह हिन्दी को दिए । इनकी 'गदल' कहानी अविस्मरणीय है।

आज़ादी के बाद यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र, परदेशी, राजनन्द, सुमेर सिंह दइया, मणि मधुकर, पानू खोलिया, मन्नू भण्डारी आदि अनेक महत्वपूर्ण कथाकार राजस्थान ने हिन्दी को दिए। यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र ने राजस्थान के सामन्ती अतीत को अपनी कहानियों में चित्रित किया तो मणि मधुकर ने इस प्रान्त के रेतीले यथार्थ को शब्द बद्ध किया। पानू खोलिया की कहानियां मानव मन की सूक्ष्म पड़ताल के लिए याद की जाती हैं तो रमेश उपाध्याय और स्वयंप्रकाश की अपनी वैज्ञानिक चेतना के लिए । सन साठ के बाद तो राजस्थान की कहानी हिन्दी की कहानी के समानान्तर ही चलने लगी। ईश्वर चन्दर, स्वयंप्रकाश, रमेश उपाध्याय, आलमशाह खान, मोहर सिंह यादव, हबीब कैफी, क़मर मेवाड़ी, हसन जमाल, सूरज पालीवाल, हरदर्शन सहगल, मालचन्द तिवाड़ी, सत्यनारायण, रघुनन्दन त्रिवेदी, श्याम जांगिड़, रत्नकुमार सांभरिया, माधव नागदा, अनिरुद्ध उमट, आनन्द 'संगीत', लवलीन, मनीषा कुलश्रेष्ठ को बहुत व्यापक स्वीकृति मिली है।

कहानी ही की भांति उपन्यास में भी यही हुआ कि मेहता लज्जा राम का पहला उपन्यास 'धूर्त रसिक लाल' (1899) और बून्दी के ही अपेक्षाकृत कम चर्चित कथाकार रामप्रताप शर्मा का 'नरदेव' लगभग साथ–साथ आए परन्तु ये किसी परंपरा का निर्माण नहीं कर सके। फिर भी स्वाधीनता प्राप्ति से पहले के उपन्यासकारों में जनार्दन राय नागर, श्रीगोपाल आचार्य, शम्भूदयाल सक्सेना का कृतित्व महत्व का अधिकारी है। जनार्दन राय नागर का 'जगदगुरु शंकराचार्य' साढे पॉच हज़ार पृष्ठों और दस खण्डों का एक विराट उपन्यास है।

राजस्थान के जिन उपन्यासकारों ने अपने कृतित्व से सबसे ज्यादा ध्यान आकृष्ट किया उनमें पहला नाम रांगेय राघव का है। 'मुर्दों का टीला', और 'कब तक पुकारूं' जैसे अमर उपन्यासों के इस रचनाकार का सृजन विपुल भी है और वैविध्यपूर्ण भी। इन्होंने जीवन चरितमूलक उपन्यासों की तो एक पूरी श्रृंखला ही रच दी थी। यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र ने भी बहुत अधिक संख्या में उपन्यास लिखे हैं और उनमें भी विषयगत वैविध्य पर्याप्त है, हालांकि उनका प्रिय क्षेत्र राजस्थान का सामन्ती अतीत रहा है। परदेशी ने भी अनेक ऐतिहासिक उपन्यास लिखे और उनमें से 'भगवान बुद्ध की आत्मकथा' की कलात्मक उत्कृष्टता को बहुत सराहा गया है। विपुल औपन्यासिक सृजन करने वाले एक और कथाकार हैं राजेन्द्र मोहन भटनागर। आपने ऐतिहासिक, सामाजिक, जीवन चरितात्मक, मनोवैज्ञानिक, प्रयोगशील सभी तरह के उपन्यास लिखे

हैं। विश्वम्भर नाथ उपाध्याय ने 'जाग मछन्दर गोरख आया' और 'जोगी मत जा' में अतीत की तरफ तो 'रीछ' और 'पक्षधर' में वर्तमान की तरफ नज़र डाली।

रांगेय राघव (काका, कब तक पुकारूं, धरती मेरा घर, आखिरी आवाज़), मणि मधुकर (सफेद मेमने, पत्तों की बिरादरी, पिंजरे में पन्ना), मोहर सिंह यादव (बंजर धरती) और अन्ना राम सुदामा (आंगन नदिया) ने अपने उपन्यासों में राजस्थान के लोक जीवन को केन्द्र में रखा है और ये उपन्यास एक सीमा तक आंचलिक उपन्यास कहे जा सकते हैं। वैसे राजस्थान के अंचल को यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र ने भी अपने कुछ उपन्यासों का आधार बनाया है लेकिन उनका ध्यान परिवेश चित्रण पर कम और कथा कहने पर अधिक रहा है।

राजस्थान के जिन उपन्यासकारों ने अपने सृजन के बल पर अखिल भारतीय ख्याति प्राप्त की है उनमें पानू खोलिया (सत्तर पार के शिखर, टूटे हुए सूर्य बिंब), रमेश उपाध्याय (चक्रबद्ध, दण्डद्वीप, स्वप्नजीवी, हरे फूल की खुशबू), मन्नू भण्डारी (महाभोज, आपका बण्टी), शरद देवड़ा (कॉलेज स्ट्रीट के नए मसीहा, टूटती इकाइयां), स्वयंप्रकाश (ज्योतिरथ के सारथी, जलते जहाज पर, संधान, ईधन), अशोक शुक्ल (प्रोफेसर पुराण, हड़ताल हरिकथा, सेवा मीटर) प्रभा सक्सेना(अन्तर्यात्रा, टुकड़ों में बंटा इन्द्रधनुष), लवलीन(स्वप्न ही रास्ता है), हबीब कैफी (अनायक, गमना, रानी साहिबा, सफिया), मालचन्द तिवाड़ी (पर्यायवाची), हरिराम मीणा (धूणी तपे तीर), मृदुला बिहारी (कुछ अनकही), लता शर्मा (सही नाप के जूते) मनीषा कुलश्रेष्ठ (शिगाफ़) प्रमुख हैं।

नाटक और रंगमंच

राजस्थान में बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में एक तरफ तो लोक नाटकों की परंपरा विद्यमान थी, दूसरी तरफ धार्मिक लीला नाटकों की परंपरा थी और तीसरी तरफ अंग्रेज़ी पढा–लिखा वर्ग आधुनिक नाटकों की तरफ भी बढ रहा था। इसके अलावा सामाजिक सांस्कृतिक पुनर्जागरण और सुधार के लिए भी नाटक लिखे और मंचित किए जा रहे थे। यह सारा रंग कर्म व्यावसायिक और शौकिया दोनों ही स्तरों पर हो रहा था। उस समय रियासतों से भी इसे प्रोत्साहन और संरक्षण मिल रहा था। झालावाड़ की विख्यात भवानी नाट्यशाला और जयपुर के रामप्रकाश और मानप्रकाश थिएटर इसी दौर में बने। पारसी रंगमंच शैली की अनेक थिएटर कम्पनियां और सोसायटियां सक्रिय रहीं। प्रान्त के प्रारम्भिक नाटककारों में शम्भू दयाल सक्सेना, वृद्धिचन्द मधुर और हरिनारायण मेघवाल के नाम महत्वपूर्ण हैं सक्सेना जी के नाटकों में पौराणिक कथानकों को पश्चिमी तकनीक के साथ प्रस्तुत करने का कौशल था तो मधुर जी ने पारसी शैली में लगभग तीस–चालीस नाटक रचे। उनका एक नाटक 'जागो बहुत सोए' ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रतिबंधित भी किया गया। इनके बाद के नाटककारों में ओंकारनाथ दिनकर, मोहनसिंह सेंगर, सरनाम सिंह शर्मा अरुण उल्लेखनीय हैं देवी लाल सामर ने रंग तकनीक को ध्यान में रखकर अनेक लघु नाटक भी लिखे।

पूरे हिन्दी जगत की ही तरह राजस्थान में भी आधुनिक रंग कर्म सातवें दशक तक आते–आते परवान चढ़ा। दिल्ली के राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय से प्रशिक्षित अनेक रंगकर्मियों की पहल पर राजस्थान के कई शहरों और कस्बों में शौकिया रंग संस्थाएं बनीं और नाट्य गतिविधियों को विस्तार मिला। इस दौर में राजस्थान के जिन नाटककारों को पहचान और प्रतिष्ठा मिली उनमें नन्दकिशोर आचार्य (पागलघर, देहान्तर, गुलाम बादशाह, किसी और का सपना), भानु भारती (चन्द्रमा उर्फ चमकू सिंह, कथा कही एक जले पेड़ ने), मणि मधुकर (रस गंधर्व, बुलबुल सराय, दुलारीबाई, खेला पोलमपुर), हमीदुल्ला (उलझी आकृतियां, एक और युद्ध, समय सन्दर्भ, कथा भारमली, उत्तर उर्वशी), रिज़वान ज़हीर उस्मान (सुन लड़की दबे पांव आते हैं सभी मौसम, लोमड़ियां, नमस्कार आज शुक्रवार है, कल्पना पिशाच), स्वयंप्रकाश (घर कैद, फिनिक्स), सरताज माथुर, मंगल सक्सेना, राजानन्द, रणवीर सिंह, मदनमोहन माथुर, अर्जुन देव चारण, डी एन शैली, एस वासुदेव प्रमुख हैं।

आलोचना

यह बात विस्मयकारी है कि बीसवीं सदी के प्रारम्भ में राजस्थान में गद्य की सर्जनात्मक विधाओं की तुलना में आलोचना में अधिक और महत्वपूर्ण काम हुआ। हिन्दी में जब आलोचना का उदय हो ही रहा था तब राजस्थान में गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, मुंशी देवीप्रसाद मिश्र और चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की त्रयी सक्रिय थी। इस आलोचक त्रयी का वर्चस्व नागरी प्रचारिणी पत्रिका के सम्पादन पर भी रहा। इसी दौर में शोध–संपादन के क्षेत्र में मुनि जिन विजय ने बहुत महत्वपूर्ण काम किया। लगभग इसी समय यहाँ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के समकालीन और उनसे प्रभावित रामकृष्ण शुक्ल 'शिलीमुख' ने साहित्यिक आलोचना की शुरुआत की। इनकी पुस्तक 'आलोचना समुच्चय' शुक्ल जी से प्रभावित होते हुए भी उनसे भिन्न स्थापनाओं के लिए जानी जाती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की ही परंपरा में यहाँ के दो और आलोचकों सूर्यकरण पारीक और मोतीलाल मेनारिया को भी याद किया जाना आवश्यक है। लेकिन शिलीमुख के बाद आलोचना के क्षेत्र में राजस्थान का सबसे बड़ा नाम है डॉ. देवराज उपाध्याय। उपाध्याय जी ने साहित्य की आलोचना और मूल्यांकन के लिए सर्वथा नई एक पद्धति, मनोविश्लेषणात्मक पद्धति का प्रवर्तन किया। इस पद्धति के आधार पर उन्होंने जैनेन्द्र कुमार और इलाचन्द्र जोशी के कथा साहित्य का जो मूल्यांकन विश्लेषण किया उसे बहुत सराहा गया।

स्वाधीनता प्राप्त के बाद राजस्थान में भी उच्च शिक्षा का खूब प्रसार हुआ और इस कारण साहित्य के पठन–पाठन के लिए अकादमिक आलोचना की ज़रूरत पड़ी। इस ज़रूरत को पूरा किया नरोत्तम दास स्वामी, दशरथ ओझा, सोमनाथ गुप्त, सरनाम सिंह शर्मा, रामगोपाल शर्मा दिनेश, कृष्णकुमार शर्मा आदि ने। लगभग इसी समय हिन्दी में प्रगतिवादी आन्दोलन फल–फूल रहा था और उसके प्रभाव से साहित्य को मार्क्सवादी नज़र से समझने विश्लेषण करने के क्रम में मार्क्सवादी आलोचना की धारा पुष्ट हो रही थी। राजस्थान में साहित्य को इस नज़र से समझने और समझाने वाले आलोचकों में रांगेय राघव, विश्वम्भर नाथ उपाध्याय, नवल किशोर, जीवन

सिंह, माधव हाड़ा का अवदान मूल्यवान है। डॉ नवलकिशोर की पुस्तक 'मानववाद और साहित्य' को व्यापक सराहना मिली। जिन आलोचकों ने किसी विचारधारा की बजाय साहित्य के औज़ारों से ही साहित्य का मूल्याँकन करने की राह चुनी उनमें नन्द किशोर आचार्य, मोहनकृष्ण बोहरा, जगदीश शर्मा मुख्य हैं। प्रान्त के अनेक कवियों ने भी कवि कर्म के निर्वाह के साथ साथ आलोचनात्मक लेखन भी किया। इनमें नन्द चतुर्वेदी, ऋतुराज, नन्द किशोर आचार्य, विजेन्द्र, रमाकान्त शर्मा प्रमुख हैं।

गद्य की अन्य विधाएं

राजस्थान में कथेतर गद्य की लम्बी परंपरा रही है। गद्य गीत के क्षेत्र में जनार्दन राय नागर और दिनेशनन्दिनी डालमिया के कृतित्व को बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है। अब यह विधा धीरे–धीरे लुप्त ही होती जा रही है। रिपोर्ताज विधा को समृद्ध करने वाले रचनाकारों में सत्यनारायण (इस आदमी को पढो, यहीं कहीं नींद थी, जहां आदमी चुप है, तारीख की खंजड़ी) पूरे हिन्दी जगत में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। राजस्थान के पर्यटन और दर्शनीय स्थलों पर केन्द्रित सावित्री परमार के रिपोर्ताज अपने ललित गद्य और यहां की समृद्ध विरासत के अभिलेखन के लिए हमेशा याद किये जाएंगे। कुछ अध्येताओं का मानना है कि संस्मरण विधा का आरम्भ ही राजस्थान से हुआ है। सूर्यकरण पारीक हमारे प्रारंभिक संस्मरण लेखकों में से एक हैं। इस विधा में सबसे अधिक स्मरणीय काम किया गोपालदास (मोहे बिसरत नाहीं) ने। इस पुस्तक का हर संस्मरण अनूठा, मर्मस्पशी और अविस्मरणीय है। नन्द चतुर्वेदी ने भी 'अतीत राग' पुस्तक में कुछ बहुत ही मर्मस्पशी संस्मरण लिखे हैं। शंकर सहाय सक्सेना ने अनेक क्रान्तिकारियों और स्वतन्त्रता सेनानियों की तथा राजेन्द्रमोहन भटनागर ने बहुत सारे महापुरुषों की जीवनियॉ लिख कर जीवनी विधा को समृद्ध किया है। यात्रा वृत्तान्त लिखने वालों में जवाहिर लाल जैन (दिल्ली–पीकिंग, यूरोप के सात देशों में क्या देखा क्या समझा, दिल्ली से दिल्ली) घनश्याम दास बिड़ला (बिखरे विचारों की भरोटी), भगवान दास केला (मेरी सर्वोदय यात्रा), राजेन्द्र शंकर भट्ट (मेरी का मीर यात्रा), मरुधर मृदुल (यात्रा के बहाने, खुली आंखों का सपना) कर्पूर चन्द्र कुलिश (मैं देखता चला गया), सुदेश बत्रा (क्षितिज के उस पार), दुर्गाप्रसाद अग्रवाल (आंखन देखी) के लेखन को बहुत सराहा गया है। साक्षात्कार विधा में विष्णु पंकज ने खूब काम किया है और नन्द भारद्वाज (संवाद निरन्तर) ने इस विधा को नई ऊंचाइयां दी हैं।

कथेतर गद्य में व्यंग्य की लोकप्रियता असंदिग्ध है। वैसे तो चन्द्रधर शर्मा गुलेरी के ललित निबंधों और सूर्यकरण पारीक के निबंधों में भी व्यंग्य के छींटे मिलते हैं लेकिन राजस्थान में व्यंग्य लेखन को असल गति स्वाधीनता प्राप्त के बाद ही मिली। समाचार पत्रों और पत्रिकाओँ के प्रकाशन ने इसे खूब प्रोत्साहित किया। अशोक शुक्ल प्रान्त के अनूठे व्यंग्यकार हैं। राजस्थान में केवल उन्होंने और सुधीर राखेचा ने व्यंग्य उपन्यास लिखे हैं। भगवती लाल व्यास (पौ बारह पच्चीस, आलपिनों का आसन, परदे के आगे परदे के पीछे, सरकने वाली गाड़ी, मुस्कराते व्यंग्य), बुलाकी शर्मा (दुर्घटना के इर्द गिर्द), फारूक आफरीदी(मीनमेख, बुद्धि का बफर स्टांक),

पूरन सरमा (16 व्यंग्य संग्रह), अनुराग वाजपेयी (रेगिस्तान में बाढ उत्सव, अन्न का श्राद्ध, खादी का रुमाल, रैली में खोए जूते), अतुल कनक (चलो चूना लगाएं), मनोहर प्रभाकर (आप बीती, अति सर्वत्र वर्जयेत, वक्र बखान), ईश मधु तलवार (इशारों इशारों में), यश गोयल (गुणसूत्र, मन्त्री का चश्मा, कुर्सी का देवदास), यशवन्त कोठारी (कुर्सी सूत्र, मास्टर का मकान, हिन्दी की आखिरी किताब, राजधानी और राजनीति), यशवन्त व्यास (अब तक छप्पन), हरदर्शन सहगल (झूलता हुआ ग्यारह दिसम्बर), देव कोठारी अशोक राही ने नियमित रूप से उत्कृष्ट और बेधक व्यंग्य लिख कर इस विधा को समृद्ध किया है।

साहित्यिक संगठन व संस्थाएं

राजस्थान में हिन्दी साहित्य के प्रचार–प्रसार और संवर्धन का काम करने वाली अनेक गैर सरकारी संस्थाएं और संगठन हैं। स्वाभाविक ही है कि इनमें से कुछ अधिक सक्रिय हैं तो कुछ कम। पश्चिमी राजस्थान में हिन्दी साहित्य के प्रचार–प्रसार के लिए सबसे ज्यादा काम किया है। जोधपुर की अन्तर प्रान्तीय कुमार साहित्य परिषद् ने। इस सँस्था ने अपने संस्थापक नेमी चन्द्र जैन 'भावुक' के नेतृत्व और मार्गदर्शन में न केवल बड़े शहरों अपितु बहुत छोटे कस्बों और गांवों तक में सार्थक आयोजन कर साहित्यिक चेतना का प्रसार किया। इसी तरह कोटा की भारतेन्दु समिति और भरतपुर की हिन्दी साहित्य समिति ने भी अपने–अपने क्षेत्रों में यही काम किया। राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रचार समिति श्री डूंगरगढ़, हिन्दी विश्वभारती बीकानेर, हिन्दी साहित्य संसद चुरू, सिंध राजस्थान राष्ट्रभाषा प्रचार समिति जयपुर, राजस्थान लेखिका साहित्य संस्थान जयपुर, युगधारा उदयपुर, साहित्य संगम अलवर, संभावना जोधपुर ने भी निरन्तर अनेक उम्दा आयोजन किए और नए रचनाकारों को मंच प्रदान किया। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद ही राजस्थान में प्रगतिशील लेखक संघ और जनवादी लेखक संघ भी गठित हुए और इन्होंने प्रान्तीय तथा स्थानीय स्तरों पर कई उम्दा आयोजन किए। इधर के वर्षो में जसम ने भी सक्रिय होकर अनेक सार्थक आयोजन किए हैं।

आज़ादी मिलने के बाद राजस्थान में 1958 में स्वायत्तशाषी संस्थान राजस्थान साहित्य अकादमी की भी स्थापना हुई। प्रारंभ में अकादमी राज्य सरकार की शासकीय इकाई के रूप में कार्यरत थी और हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत, ब्रज और उर्दू भाषाओं व साहित्य के संवर्धन का दायित्त भी इसी का था। 1962 में अकादमी को स्वायत्तता प्रदान कर दी गई। राज्य सरकार ने 1980 में ब्रज, संस्कृत, राजस्थानी और उर्दू के लिए अलग अकादमियां स्थापित कर दीं, तब से राजस्थान साहित्य अकादमी प्रदेश में हिन्दी भाषा, साहित्य और संस्कृति का काम कर रही है। अकादमी ने हिन्दी भाषा और साहित्य की रचनात्मकता के प्रोत्साहन और संरक्षण के लिए अनेक काम किए हैं जैसे प्रकाशन, संस्थाओं को आर्थिक सहयोग, प्रकाशन हेतु आर्थिक सहयोग, पुरस्कार, लेखकों को आर्थिक सहायता, साहित्यिक आयोजन, रचनाकार सम्मान, अन्तरप्रान्तीय बन्धुत्व यात्रा आदि। अकादमी का सर्वोच्च पुरस्कार मीरा पुरस्कार है। अकादमी मधुमती नाम से एक मासिक पत्रिका का भी प्रकाशन करती है।

साहित्यिक पत्रिकाएं

पिछली सदी के प्रारंभ में राजस्थान से निकलने वाली पत्रिका 'समालोचक' की ख्याति बहुत अधिक रही है। लेकिन राजस्थान में साहित्यिक पत्रिकाओँ की सक्रियता का असल दौर इस सदी के सातवें दशक से शुरू होता है। उदयपुर से नन्द चतुर्वेदी आदि के संपादन में निकलने वाली 'बिन्दु', अजमेर से प्रकाश जैन के सम्पादन में निकलने वाली 'लहर', बीकानेर से हरीश भादानी द्वारा संपादित 'वातायन', भीनमाल जैसे बहुत छोटे कस्बे से स्वयंप्रकाश और मोहन श्रोत्रिय के संपादन में निकलने वाली 'क्यों', कांकरोली से कमर मेवाड़ी के सम्पादन में निकलने वाली 'संबोधन', जोधपुर से हसन जमाल के सम्पादन में निकलने वाली दो भाषाओं की पत्रिका 'शेष', जयपुर से विजेन्द्र के सम्पादन में निकलने वाली 'कृति ओर', चन्द्रभानु भारद्वाज के सम्पादन में 'सम्प्रेषण' ऐसी पत्रिकाएं हैं जिनके महत्व और अवदान को सर्वत्र स्वीकारा और सराहा गया है। लोक साहित्य विषयक पत्रिकाएं परंपरा और रंगायन ने भी अपने विशिष्ट अनुशासन में उत्कृष्ट योग दिया। हाल ही में उदयपुर से पल्लव के संपादन में प्रकाशित होने लगी पत्रिका बनास ने पूरे साहित्य जगत की प्रशंसा अर्जित की है। इस पत्रिका का हर अंक किसी एक रचनाकार या रचना विशेष पर केन्द्रित रहता है। राजस्थान साहित्य अकादमी की मासिक पत्रिका मधुमती निरन्तर प्रकाशित हो रही है।

पुरस्कार व सम्मान

राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा अपने सर्वोच्च मीरा पुरस्कार के अतिरिक्त साहित्य की विविध विधाओं के लिए सुधीन्द्र (काव्य), रांगेय राघव (कथा, उपन्यास), देवराज उपाध्याय (निबंध, आलोचना), कन्हैयालाल सहल (विविध विधाएं), सुमनेश जोशी (प्रथम प्रकाशित कृति पर) और शम्भूदयाल सक्सेना (बाल साहित्य) पुरस्कार हर वर्ष प्रदान किए जाते हैं। अकादमी इन पुरस्कारों के अतिरिक्त उत्कृष्ट साहित्यकारों को साहित्य मनीषी और विशिष्ट साहित्यकार सम्मान से भी नवाज़ती है।

के.के.बिड़ला फाउण्डेशन भी प्रतिवर्ष राजस्थान के किसी एक रचनाकार को बिहारी पुरस्कार से सम्मानित करता है। प्रारम्भ में यह पुरस्कार राजस्थान के लेखक की उत्कृष्ट हिन्दी कृति पर दिया जाता था परन्तु वर्ष 2003 से इसमें हिन्दी के साथ राजस्थानी को भी सम्मिलित कर लिया गया है।

भारत सरकार गणतन्त्र दिवस पर जो पद्म अलंकरण प्रदान करती है उनमें भी कई बार राजस्थान के हिन्दी साहित्यकार अपनी रचनाशीलता के लिए अलंकृत हुए हैं। माणिक्य लाल वर्मा (पद्म विभूषण), हरिभाऊ उपाध्याय, गोकुल भाई भट्ट, झाबरमल्ल शर्मा, डॉ लक्ष्मीमल सिंघवी (पद्म भूषण), और मुनि जिन विजय, देवी लाल सामर, विजय दान देथा (पद्मश्री) भारत सरकार द्वारा पद्म अलंकरणों से अलंकृत राजस्थान के कुछ प्रमुख हिन्दी साहित्यकार हैं। राजस्थान का एक लोकप्रिय समाचार पत्र पिछले कुछ वर्षो से अपने यहां प्रकाशित एक कहानी और एक

कविता को पुरस्कृत करता है। इनके अतिरिक्त भी अनेक संस्थाएं और संगठन साहित्यिक सम्मान और पुरस्कार प्रदान करते हैं।

राजस्थानी साहित्य

हिन्दी की लोकप्रियता से पहले तक राजस्थान में राजस्थानी ही बोली और समझी जाती थी और अब भी हिन्दी के साथ इसका व्यापक प्रयोग होता है। मेवाड़ी, मारवाड़ी, मालवी, बागड़ी आदि इसकी बोलियां हैं। इन बोलियों पर आस–पास की भाषाओं का प्रभाव भी पड़ा है। राजस्थानी में साहित्य की समृद्ध परंपरा है। मध्यकाल में इसके ब्रज मिश्रित साहित्यिक रूप को पिंगल कहा जाता था और साहित्यिक राजस्थानी डिंगल के नाम से भी जानी जाती थी। 14 वीं शताब्दी के बाद इनमें विपुल साहित्य मिलने लगता है। हम यहॉ आधुनिक काल के राजस्थानी साहित्य की चर्चा करेंगे, जो सामान्यतः सन 1857 के बाद लिखा गया।

सूर्यमल मिश्रण ने राजस्थानी जन मानस में जिस राष्ट्रीय चेतना का शंखनाद किया था वही आगे चलकर आधुनिक काल के अनेक कवियों की कविताओं में मुखरित हुई। और यहीं यह बात भी कह दी जाए कि अपने समय में राष्ट्रीय चेतना का उद्घोष करने वाले सूर्यमल मिश्रण अकेले कवि नहीं थे। उन्हीं के साथ कविराजा बाँकीदास और शंकरदान सामोर का भी नाम लिया जाना ज़रूरी है। लेकिन हम तो बात आधुनिक काल की कर रहे हैं, और आधुनिक का सम्बंध केवल काल से ही नहीं विचार से, सोच से भी होता है। सोच की दृष्टि से ऐसे कि जीवन को देखने–समझने की वैज्ञानिक दृष्टि और यथार्थपरक दृष्टिकोण भी आधुनिकता के लिए आवश्यक हैं। तो इस तरह से देखें तो हमारा ध्यान सबसे पहले कवि ऊमरदान की कविताओं पर जाता है जो छप्पन के दुष्काल से त्रस्त जनता के दुखों का मार्मिक चित्रण करते हैं और पाखण्डी साधुओं को बेनक़ाब करते हुए जनता को उनसे सावधान रहने को कहते हैं। इस आधुनिकता बोध के चलते हमारे विवेच्य आधुनिक काल तक आते–आते राजस्थानी की कविता हिन्दी की कविता के समानान्तर चलती दिखाई देती है और यहां के कवि अपने परंपरागत छन्दों में आज़ादी की अलख जगाते नज़र आते हैं। केसरीसिंह बारहठ, विजयसिंह पथिक, जयनारायण व्यास, हीरालाल शास्त्री, गोकुल भाई भट्ट, माणिक्यलाल वर्मा, जनकवि गणेशीलाल व्यास उस्ताद राजस्थान के ऐसे कवि हैं उन्होंने आज़ादी की लड़ाई में भाग लेने के साथ ही इस लड़ाई के लिए अपनी कलम को भी हथियार बनाया। इनमें से गणेशी लाल व्यास उस्ताद ऐसे कवि हैं जिन्होंने खुद आज़ादी की लड़ाई में भाग लिया और आज़ादी के बाद के अपने मोहभंग को भी कविताऑं में प्रखर रूप से अभिव्यक्त किया। राजस्थानी के अनेक कवियों की तत्कालीन कविताओं में राजस्थान के सामन्ती परिवेश के प्रति आक्रोश के स्वर सुनाई पड़ते हैं। ऐसे कवियों में रेवतदान चारण प्रमुख हैं जो सामन्ती शोषण के प्रति जन चेतना को जगाने का काम करते हैं। उन्हीं की बात को आगे बढ़ाते हैं मनुज देपावत और हरीश भादाणी।

राजस्थानी के अनेक कवियों ने जन–जन तक अपनी बात पहुंचाने के लिए कवि सम्मेलन के माध्यम का भी अच्छा इस्तेमाल किया। एक समय था जब राजस्थानी कवि मेघराज मुकुल की 'सेनाणी' कवि सम्मेलनों की सर्वाधिक लोकप्रिय कविताओँ में गिनी जाती थी। कवि सम्मेलनों में छा जाने वाले हमारे अन्य कुछ कवि थे सत्यप्रकाश जोशी, गजानन वर्मा, रघुराजसिंह हाडा, कल्याणसिंह राजावत, और प्रेमजी प्रेम। इन सभी कवियों का पाठ जितना प्रभावशाली था, कविताएं भी उतनी ही सशक्त थीं। इन कवियों में से सत्यप्रकाश जोशी अपने मौलिक और गैर पारंपरिक सोच के लिए अलग से उल्लेख योग्य हैं। 1960 में प्रकाशित उनकी काव्य कृति 'राधा' इस दृष्टि से रेखांकनीय है कि जहाँ आम राजस्थानी कविता युद्ध का गौरव गान करती है, जोशी यहाँ अपनी नायिका राधा के माध्यम से श्रीकृष्ण को यह सन्देश देकर कि वे महाभारत का युद्ध टाल दें, युद्ध के विरोध में खड़े नज़र आते हैं। अपनी एक अन्य रचना, लम्बी कविता 'बोल भारमली' में जोशी नारी मुक्ति का सन्देश भी देते हैं। छायावादी शैली की प्रकृति परक कविताओँ से अपनी काव्य यात्रा शुरू करने वाले कवि नारायण सिंह भाटी भी इसलिए बेहद महत्वपूंर्ण हैं कि वे बहुत जल्दी अपना मुहावरा तलाश कर राजस्थानी भाषा और साहित्य को नया संस्कार दे पाते हैं। उनकी वे कविताएँ जहां वे दुर्गादास को नई दृष्टि से और मीरा को नारी मुक्ति के कोण से चित्रित करते हैं बेहद महत्वपूर्ण हैं। राजस्थानी के एक और महत्वपूर्ण कवि हैं कन्हैया लाल सेठिया। उनके गीत 'धरती धोरां री' को तो राष्ट्रगीत की तर्ज पर राजस्थान का राजगीत कहा ही जा सकता है, विशेष बात यह कि सेठिया जी अपने आदर्शवादी संस्कारों का पूर्ण निर्वाह करते हुए अपने समय और समाज की पड़ताल करते हैं। 'मींझर' और 'लीलाटॉस' सेठिया जी के प्रमुख काव्य संग्रह है। किशोर कल्पनाकान्त भी आदर्श और सन्तुलन के कवि हैं लेकिन उनकी कविता में बाह्य की अपेक्षा आन्तरिक पर अधिक बल है। इस प्रकार सातवें दशक के मध्य तक राजस्थान की आधुनिक कविता का पहला दौर चला और इस दौर में अनेक कवियों ने विभिन्न विषम परिस्थितियों में भी उत्कृष्ट सृजन किया। यही वह समय था जब देश, समाज और राज्य में व्यापक बदलाव हो रहे थे और प्रान्त में राजस्थानी भाषा में 'मरुवाणी', 'जलमभोम', 'जांणकारी', 'ओळमों', 'लाडेसर', 'हरावळ', 'राजस्थली', 'ईसरलाट', 'राजस्थानी–एक हेलो', 'दीठ', 'चामळ', 'अपरंच' जैसी अनेक साहित्यिक पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही थीं या होने लगी थीं और इनके माध्यम से बहुत सारे नए कवि सामने आ रहे थे। उधर हिन्दी में नई कविता की हलचल तेज़ थी और इधर राजस्थानी के कवि भी अपनी कविता को नया संस्कार देने में जुटे थे। यही वह समय है जब पारस अरोड़ा की 'जुड़ाव', 'अंधारै रा घाव', गोरधनसिंह शेखावत की 'गाँव', 'रंग–बदरंग' और पनजी मारू संग्रह की कविताएं, तेजसिंह जोधा की 'कठैई कीं व्हेगौ है', 'म्हारा बाप' और 'दीठाव रै बेजां मॉय' कविताएं, मणि मधुकर की 'सोजती गेट', आलीजा आज्यो घरॉ और 'पगफेरो', हरीश भादाणी की 'बोलै सरणाटौ', 'हूणियै रा सोरठा' और 'बातां में भूगोळ' संग्रह की कविताएं, मोहम्मद सद्दीक की 'जूंझती जूण' और अन्तसतास की कविताएँ, मोहन आलोक की 'चित मारो दुख नै' सॅग्रह की कविताएं, चन्द्रप्रकाश देवल की 'पागी', 'कावड़', 'मारग', तोपनामा, 'राग–विजोग' इत्यादि संग्रहों की कविताएं, सांवर दइया की 'आ सदी मिजळी मरै', अर्जुनदेव

चारण की 'रिन्दरोही', मालचन्द तिवाड़ी की 'उतर्यो है आभौ', वासु आचार्य की 'सीर रौ घर', भगवतीलाल व्यास की 'अणहद नाद' और 'अगनी मन्तर' संग्रह की कविताएं और इसी व इससे बाद के दौर के अन्य कवियों खासतौर पर ज्योतिपुंज, उपेन्द्र अणु, अॅबिकादत्त, आईदानसिंह भाटी, ओम पुरोहित कागद, मीठेश निर्मोही और कई एकदम ताज़ा कवियां में अतुल कनक, सुमन बिस्सा, भविष्यदत्त भविष्य, नीरज दइया, सन्तोष मायामोहन, मदनगोपाल लड्ढा इत्यादि की कविताएं राजस्थानी कविता को आधुनिक भावबोध और समकालीन अभिव्यक्ति से समृद्ध कर रही हैं।

राजस्थानी की कविता अपने समय में लिखी जा रही हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं की कविता के साथ कदम से कदम मिलाकर चल रही है और साहित्य की विशाल और बहुरंगी दुनिया में राजस्थान की अलग पहचान भी बनाए हुए है।

राजस्थानी में कथा की परंपरा भी बहुत प्राचीन है। राजस्थानी लोककथाऑं, लोक गाथाओं और वातों का तो एक विराट संसार है ही, आधुनिक काल में भी राजस्थानी में उत्कृष्ट कथा सर्जना हुई है। रानी लक्ष्मी कुमारी चूण्डावत ने जहां राजस्थान के अतीत को सजीव करने वाली ऐतिहासिक सांस्कृतिक गरिमापूर्ण कहानियाँ लिखीं (मांझळ रात, अमोलक वातां, मूमळ, गिर ऊंचा ऊंचा गढ़ां, कै रे चकवा बात, राजस्थानी लोक गाथा श्रीमती चूण्डावत के कहानी संग्रह हैं), वहीं विजयदान देथा ने अपनी वातां री फुलवाड़ी (13 खण्ड) श्रृंखला में राजस्थान की कदीमी लोककथाओं का कुछ ऐसा अनूठा पुनःसृजन किया कि उन्हें सर्वत्र सराहा गया। विजयदान देथा ने इस पुनःसृजन के अतिरिक्त खूब सारा मौलिक कथा सृजन भी किया। विजयदन देथा के कुछ प्रमुख राजस्थानी–हिन्दी कहानी संग्रह हैं दुविधा, उलझन, अलेखूं हिटलर, लजवन्ती, सपन प्रिया, अन्तराल। राजस्थानी के साथ–साथ हिन्दी में भी बहु प्रशंसित यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र की कहानियां उनके संग्रहों जमारो, समन्द अर थार में संकलित हैं और उनके कुछ प्रसिद्ध उपन्यास हैं 'हूं गोरी किण पीव री', जोग–संजोग, चान्दा सेठाणी। राजस्थानी ग्राम्य जीवन के अनूठे चितेरे अन्ना राम सुदामा के कुछ प्रमुख कहानी संग्रह हैं आँधै नै आँख्यां, गळत इलाज अर माया रौ रंग। उनके चर्चित उपन्यास हैं मैकती कायाः मुलक़ती धरती, ऑधी अर आस्था, मेवै रा रूंख, अचूक इलाज, घर–संसार अर डंकीजता मानवी। नृसिंह राजपुरोहित भी ग्राम्य जीवन के चित्र.ा के लिए ही सुपरिचित हैं और उनके कुछ प्रमुख कहानी संग्रह ये हैंः रातवासौ, मऊ चाली माळवै, अमर चूंनड़ी, परभातियौ तारौ, अधूरा सपनां। भगवान महावीर राजपुरोहित जी का उपन्यास है। बैजनाथ पंवार के कहानी संग्रह हैं लाडेसर, नैणां खूट्यौ नीर, अकल बिना ऊंट उभाणौ, ओळखांण। रामे वरदयाल श्रीमाली के कहानी संग्रह 'सळवटां', 'जाळ' और 'श्रीलाल' नथमल जोशी के कहानी संग्रह 'परण्योड़ी–कंवारी', मैंधी कनीर अर गुलाब तथा उपन्यास 'आभै पटकी, 'धोरां रौ धोरी', 'एक बीनणी दो बीन', सरणागर शीर्षक से प्रकाशित और चर्चित हुए। नेमनारायण जोशी की ख्याति उनके बहु चर्चित कथा–संस्मरण संग्रह 'ओळूं री अखियातां' के कारण है। करणीदान बारहठ के कहानी संग्रह 'आदमी रौ सींग', 'माटी री महक' तथा उनके उपन्यास 'मन्त्री री बेटी', 'बड़ी बहनजी' हैं। नन्द भारद्वाज जिन्होंने अनेक विधाओं में लिखा है, का उपन्यास 'सॉम्ही खुलतौ मारग' मूल राजस्थानी में और बाद में अपने अनूदित हिन्दी रूप में बहुत सराहा गया। आपने राजस्थानी में बेहतरीन कहानियाँ भी लिखी हैं। बी एल माली अशान्त के कहानी संग्रह 'किली–किली कटको', 'राई राई रेत', 'सौ कहाणियां रौ सफर' और उनके उपन्यास 'मिनख रा खोज', 'अबोली', 'बुरीगार नज़र' हैं। राजस्थानी के एक और महत्वपूर्ण

कथाकार हैं मालचन्द तिवाड़ी। उनके कहानी संग्रह 'धड़न्द', सेलिब्रेसन और उपन्यास 'भोळावण' हैं। रामकुमार ओझा बुद्धिजीवी, चन्द्रप्रकाश देवल, चेतन स्वामी (कहानी संग्रह ऑगणै बिचाळै भीतॉ, किस्तूरी मिरग), जेबा रशीद(कहानी संग्रह 'नांव बिहुणा रिश्ता', 'आभै री आंख्यां' और उपन्यास 'नेह रौ नातौ'), मीठेश निर्मोही(कहानी संग्रह 'अमावस एकम अर चान्द'), जैसे कथाकारों ने अपनी कहानियों और उपन्यासों से राजस्थानी भाषा को गौरवानवित किया है। युवतर कथाकारों में माधव नागदा, ओमप्रकाश भाटिया (कहानी संग्रह 'सुर देवता'), भरत ओळा(कहानी संग्रह 'जीव री जात', 'सेक्टर नँबर 5'), दिनेश पांचाल(कहानी संग्रह 'शान्ति नो सूरज अर पगरवा'), मेजर रतन जाँगिड़ (कहानी संग्रह 'माई एहड़ा पूत जण', और उपन्यास 'सीमा री पीड़', 'फुल्ली देवा') बहुत उम्मीद जगाते हैं।

कथा साहित्य की ही भांति स्थिति है नाटक और एकांकी की। जिन नाटककारों ने राजस्थान की समृद्ध नाट्य परंपरा से प्रेरणा लेकर मौलिक सृजन और रंग कर्म किया है उनमें मणि मधुकर, भंवर भादानी, भानु भारती, अर्जुन देव चारण प्रमुख हैं। गद्य की इतर विधाओॅं जैसे रेखाचित्र, संस्मरण, यात्रा वृत्तान्त, व्यंग्य आदि के क्षेत्र में जहूर खां मेहर, ब्रजनारायण पुरोहित, गोरधनसिंह शेखावत, ओंकार पारीक, नेमनारायण जोशी, का दाय महत्व का अधिकारी है। रामकुमार ओझा बुद्धिजीवी का यात्रा संस्मरण धुड़ पड्या पग डूंगर डेरा, बैजनाथ पंवार का संस्मरण संग्रह जीवता जागता चितराम, सांवर दैया का व्यंग्य संग्रह आड़ी तिरछी ओळ्यां, बी एल माली अशान्त के निबंध संग्रह माटी सूं मजाक, पावड़ा पड़ाव अर मजल, तारां छाई रात, सोध समदर सीपियां, माधव नागदा की डायरी सोनेरी पांख्यॉ वाळी तितलियां और आलोचना के क्षेत्र में नन्द भारद्वाज की किताब 'दौर अर दायरौ' बेहद महत्वपूर्ण मानी जाती है। राजस्थानी के अनेक रचनाकारों ने हिन्दी, अन्य भारतीय भाषाओं और विदेशी भाषाओॅं से राजस्थानी में अनुवाद भी किए हैं। राणी लक्ष्मी कुमारी चूण्डावत ने रवि ठाकर री वातां, रूसी कहानियां, संसार री नामी कहाणियॉ, मनोहरसिंह राठौड़ ने भी रवीन्द्र नाथ री कहाणियॉ, चन्द्रप्रकाश देवल ने दोस्तोयेवस्की के उपन्यास, सेमुएल बैकेट के नाटक और अन्य अनेक कृतियों के अनुवाद, रामस्वरूप किसान ने रवीन्द्र नाथ टैगोर के नाटक रक्त 'करबी का राती कणेर' शीर्षक से अनुवाद, नृसिंह राजपुरोहित ने टाल्सटाय री टाळवी कथावां, नन्द भारद्वाज ने अल्बेयर कामू के उपन्यास का 'बैतियाण' शीर्षक से अनुवाद कर अपनी भाषा को समृद्ध किया है।

राजस्थानी के अनेक साहित्यकारों को समय–समय पर उनकी रचनाशीलता के लिए पुरस्कृत व सम्मानित भी किया गया है। भारत सरकार ने कोमल कोठारी को दो बार पद्म अलंकरणों (पद्म श्री और पद्मभूषण) से अलंकृत किया है। सीताराम लालस (राजस्थानी शब्द कोश के रचनाकार), रानी लक्ष्मी कुमारी चूण्डावत, विजय दान देथा और डॉ चन्द्र प्रकाश देवल को पद्मश्री से अलंकृत किया जा चुका है।

आज राजस्थानी भाषा में सभी विधाओं में साहित्य सृजन हो रहा है। अपनी परम्पराओं से जुड़ा रहकर भी इस भाषा का साहित्य आधुनिक भाव बोध का संवहन कर रहा है और नित नूतन प्रयोग कर अपनी जीवन्तता और सामर्थ्य का परिचय दे रहा है। राजस्थानी में नए लिखने वालों की संख्या तो निरन्तर बढती ही जा रही है, नई पीढी संचार के अधुनातन साधनों जैसे

इंटरनेट का प्रयोग भी पूरे उत्साह से कर रही है। अब राजस्थानी की बहुत सारी रचनाएं इंटरनेट पर उपलब्ध हैं और राजस्थानी भाषा और साहित्य के बारे में तथा राजस्थानी में बहुत सारे ब्लांग भी लिखे जा रहे हैं।

जयपुर साहित्य महोत्सव

वर्ष 2006 में जयपुर साहित्य महोत्सव नाम से एक छोटी–सी शुरुआत हुई थी। तब किसी ने यह कल्पना भी नहीं की होगी कि मात्र पांच बरसों में यह महोत्सव इतना विराट रूप ले लेगा कि इसे द ग्रेटेस्ट लिटरेरी शो ऑन अर्थ कहा जाने लगेगा। जयपुर में हर साल 21 से 25 जनवरी तक होने वाला यह पांच दिवसीय साहित्यिक मेला अब दुनिया भर के लेखकों–विचारकों–कलाकारों को आकृष्ट करता है और साहित्य प्रेमियों को उनसे रू–ब–रू होने का अवसर प्रदान करता है। इस आयोजन में कई नोबल, पुलिट्ज़र व अन्य पुरस्कार विजेता साहित्यकारों और विख्यात चिन्तकों, कलाकारों की सहभागिता रही है। आयोजन में प्रवेश निशुल्क होता है। राजस्थान में साहित्यिक चेतना के प्रसार की दृष्टि से यह आयोजन विशेष उल्लेख का हक़दार है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राजस्थान साहित्य अकादमी की स्थापना इस वर्ष में हुईः
   (अ) 1958 (ब) 1980
   (स) 2000 (द) 2011 ( )
2. राजस्थान में भील आन्दोलन का नेतृत्व इन्होंने किया थाः
   (अ) मोहनलाल सुखाड़िया (ब) मोतीलाल तेजावत
   (स) महेश कुमार (द) भीखा भाई ( )
3. कन्हैया लाल सहल की पहली काव्य कृति का नाम थाः
   (अ) पृथ्वी (ब) राजस्थान
   (स) प्रयोग (द) गोदान ( )
4. हरीश भादानी द्वारा संपादित पत्रिका का नाम थाः
   (अ) लहर (ब) बिन्दु
   (स) मधुमती (द) वातायन ( )
5. उसने कहा था कहानी इस पत्रिका में प्रकाशित हुई थीः
   (अ) सरस्वती (ब) धर्मयुग
   (स) इण्डिया टुडे (द) राजस्थान पत्रिका ( )

6. भवानी नाट्यशाला किस शहर में है?

(अ) जयपुर (ब) झालावाड़

(स) उदयपुर (द) बीकानेर ( )

7. राजस्थानी जन मानस में राष्ट्रीय चेतना का शंखनाद इस कवि ने किया:

(अ) रामधारी सिंह दिनकर (ब) सोहनलाल द्विवेदी

(स) सूर्यमल मिश्रण (द) गुलज़ार ( )

8. छप्पन के दुष्काल का चित्रण करने वाले कवि का नाम है:

(अ) शैलेन्द्र (ब) अज्ञेय

(स) महादेवी वर्मा (द) ऊंमरदान ( )

9. धरती धोरां री किस कवि की रचना है?

(अ) कन्हैया लाल सेठिया (ब) गजानन वर्मा

(स) विजयदान देथा (द) नन्द भारद्वाज ( )

10. राजस्थान में इस भाषा की अकादमी नहीं है:

(अ) हिन्दी (ब) गुजराती

(स) राजस्थानी (द) ब्रज ( )

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. राजस्थान की रियासतों में सामन्ती शोषण का विरोध किन संगठनों ने किया?
2. राजस्थान के सात प्रमुख कवियों की सहकारी काव्य पुस्तक का नाम क्या था?
3. राजस्थान के कथा साहित्य की पुरानी परंपरा से क्या आशय है?
4. राजस्थान के सामन्ती अतीत को किस कथाकार ने चित्रित किया है?
5. कवि मेघराज मुकुल की प्रसिद्ध कविता का शीर्षक क्या था?
6. किस महिला कथाकार ने राजस्थान के अतीत को सजीव करने वाली कहानियां लिखी हैं?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. राजस्थान में मुख्य रूप से कौन–सी भाषाएं बोली जाती हैं?
2. राजस्थान के ऐसे दो कवियों के नाम बताएं जो पहले ब्रज में लिखते थे और फिर खड़ी बोली में लिखने लगे।
3. राजस्थान की दो प्रमुख हिन्दी साहित्यिक पत्रिकाओं के नाम लिखिए।
4. राजस्थान के कौन दो कथाकार अपनी वैज्ञानिक चेतना के लिए जाने जाते हैं?

5. राजस्थान के दो हिन्दी गद्य गीतकारों के नाम लिखिए।

6. राजस्थानी की चार बोलियों के नाम लिखिए।

7. सत्यप्रकाश जोशी की राधा की विशेषताएं बताइये।

8. राजस्थानी के किस लेखक को बारत सरकार ने दो बार पद्म अलंकार से अलंकृत किया?

निबंधात्मक प्रश्न –

1. राजस्थान के हिन्दी उपन्यास साहित्य पर एक परिचयात्मक टिप्पणी लिखिए।

2. राजस्थान की साहित्यिक पत्रिकाओं पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

3. राजस्थानी कविताओं की कुछ विशेषताएं बताइये।

10 Commandents of safe driving

- Don't jump traffic lights
- Drive wearing seat belts
- Don't drive without wearing a helmet
- Don't talk on mobile
- Don't drive on wrong side
- Don't break speed barrier
- Don't drive in no-entry zone
- Turn lights to low-beam while driving in city limits
- Avoid use of tinted glasses on your car windows
- Don't drink and drive